स्वास्थ्यदर्शक सचित्र मननीय मासिक पत्र

७ अङ्क ८]   राष्ट्रीय मिति ११ चैत्र शक संवत १८८१   [अप्रैल १९६०

सद् वैद्यों का कर्तव्य

विषय, सम्बन्ध, प्रयोजन और उपदेश बिना साधारणतः आम जनताकी प्रवृत्ति नहीं होती है। इसलिए सद् वैद्यों को आयुर्वेदका विषय, शरीरका सम्बन्ध, स्वास्थ्यका प्रयोजन और उपदेशका विषय आयुर्वेद सम्बन्धक लेना चाहिये।

स्वास्थ्य प्राप्त्यार्थ शरीर शुद्धिके लिए पंचकर्म (वमन, विरेचन, आस्थापन, अनुवासन और नस्य), रोगकी परीक्षा के लिए निदान और रोग निवृत्तिके लिए आशुफलदायी चिकित्सा कर्म सम्बन्धक सुफल द्योतक प्रचार और प्रसार जनतामें होना चाहिये। जिससे जनताका और आपका श्रेय हो।

"आयुर्वेद हितैषी"

मूल्य वार्षिक ४) रु० विदेशसे ८ शिलिंग, एक प्रति ८ आना अथवा ५० न. पैसे

प्रकाशक: कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन • कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

कल्याण कार्यालय, कालेड़ा की

बिल्कुल नई इजाद की हुई पेटेंट औषध

सुधांशु ! सुधांशु !!

यह तो सर्व विदित ही है कि आपके सुप्रसिद्ध औषधियोंके तीर्थ स्थान कालेड़ा फल प्रद पेटेंट औषधियोंका निर्माण एक बहुत ही अनुभवी वैद्यके तत्वावधानमें बिल्कु तंत्र रूपसे कल्याण कार्यालयमें प्रारंभ किया गया है, उसकी सर्व प्रथम भेंट--यह--सुध

सुधांशु—नामके अनुसार तथैव गुण वाली औषधि है।

इसके भिन्न-भिन्न रोगोंमें भिन्न-भिन्न उपयोग व गुण प्रभाव हैं।

उल्टी, दस्त, हैजा, जी मचलाना, पेटका दर्द, दंतशूल, उष्णता, लू लगजाना आना, अपचन, कब्ज, जुकाम, पेचिश, कानका दर्द, मुंहकी दुर्गन्ध, आफरा, खांसी, इत्यादि रोगोंमें तो इसकी उपयोगिता अनिवार्य है।

रेल यात्रा, मेले तथा विवाहादिके समय यह दवा १ वैद्यका काम देती है।
बच्चोंके हरे-पीले दस्त, उल्टी, दूध फेंकना, दांत निकलना, बुखार, पेट दर्द अमृत समान उपयोगी दवा सिद्ध हुई है.।

इनके अतिरिक्त और भी कई पेटेंट औषधियोंका निर्माण यहां कल्याण कार्यालय जा रहा है; जो कि वैद्यवरों तथा प्रेमी ग्राहकोंकी सेवामें ब्लाक व डिजाइन बन जाने जा सकेंगे। आशा है कि हमारे इस प्रथम प्रयासमें प्रोत्साहन प्रदान करेंगे।

निवेदक
व्यवस्थापक
कल्याण कार्यालय, कालेड़ा

गया। छप गया। छप गया।

ोपनिषत् प्रथम भाग और रसशास्त्र प्रवेशिका

—रस प्रेमियों एवं धातुवादके अनुयायियों—

द्वारा चिरप्रतीक्षित, रसशास्त्र एवं धातुवादके सद्योऽभिनव ग्रन्थ रसोपनिषद् थम भाग) एवं रसशास्त्र प्रवेशिका दोनों ग्रन्थ छपकर तैयार हैं। इनके आर्डर न समय पूर्वसे बहुत आचुके हैं। कागजकी समस्या कठिन है, अतः प्रकाशन मत हुआ है। अतः शीघ्र मंगालें, अन्यथा द्वितीय संस्करण तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

१. रसोपनिषद् (प्रथम भाग)—१६ अध्याय पर्यन्त, यह अति प्राचीन कापा- क सिद्ध सम्प्रदाय द्वारा विरचित, धातुवादका प्रबल प्रतिपादक सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ है। र्षके कठिन परिश्रमके बाद अब छपकर प्रकाशित हो गया है। इस रसमहोदधि में धातुवादके बड़े विचित्र अनूठे किन्तु सरल प्रयोग दिये गये हैं। इस पुस्तकने वादको कठिन ग्रन्थियोंको बहुत ही सरल बना दिया है। इस ग्रन्थको सर्व ारणोपयोगी बनानेके लिये "शरच्चन्द्रप्रभा" नामकी भाषा टीका तथा विस्तृत व्य और टिप्पणियों द्वारा सर्वांग सुन्दर बनानेका भरसक प्रयत्न किया गया है।

२८ पौण्डके मोटे वाइट प्रिंटिंग पेपर साइज क्राउन ५"×७।।"

संख्या ४२३। मूल्य—अजिल्द ५-०० पोस्टेज पृथक्।

मूल्य—सजिल्द ६-५० पोस्टेज पृथक्।

२. रसशास्त्र प्रवेशिका (टीकासह)—आनन्दकन्द रसशास्त्रका सर्वांगपूर्ण ल काय रसग्रन्थ है। उसकी भूमिका अतिरोचक, भावगम्य एवं रसशास्त्रके प्रवे- ओंको उत्तम सहायक है। अतः हमने उसका भाषानुवाद वैद्य पं० बद्रीनारायण श्री द्वारा करवाकर रसविदोंके लिये प्रकाशित करवाया है।

ट प्रिंटिंग पेपर साइज ४।।"×७।।" २२×३६, २८ पौंड, पृष्ठ संख्या १४५।

—अजिल्द २-०० पोस्टेज पृथक्।

※ पूज्य स्वामीजी महाराज का स्वास्थ्य ※

श्री स्वामी जी महाराज का पत्र व्यवहार कार्यक्रम अति विशाल रूपसे रोज काफी चलता रहता था, परन्तु जबसे स्वास्थ्य बिगड़ा है, तब से पत्रोंमें अनियमितता आकर बिल्कुल बन्द हो गये हैं, स्वामीजी महाराजके स्थान पर सेक्रेट्री, रसायनाचार्य शान्तिलालजी आदि ने आज्ञा अनुसार उत्तर देनेका प्रयत्न किया।

श्री स्वामी जी महाराज करीब १५ फरवरी के बाद ज्वरावस्थासे पीड़ित है, ऐसा उनको भास होने लगा। यह हाडज्वर तारीख ६ मार्च तक मन्द-मन्द होता ही गया, उस अवस्थामें तारीख ७ प्रातः जयपुर पधारे, कालेड़ासे प्रातः ६ बजे निकले और ११-४५ पर जयपुर पहुँचे, तारीख ७-८ जयपुरका कार्य शान्ति पूर्वक किया, तारीख ९-३-६० को जयपुरसे निकल कर वापिस यहां पधार आये, सुबह प्रातः ५-५० पर निकले और ९-४५ पर कालेड़ा पधारे।

वातश्लेष्म प्रकोप (फ्लू) ने काफी प्रवेश कर लिया था। दूसरे दिन काफी उग्ररूप दर्शाया, दाहिने फुफ्फुसमें कफ संगृहीत अधिकतर हुआ, जो कुछ अंशमें अभी तक त्रास दे रहा है।

श्री स्वामी जी महाराजका जीवन प्रभू परायण है, भीतरसे आज्ञा मिलने पर सोचना करना छोड़कर, अन्तर आवाजके अनुरूप कार्य करने लग जाते हैं। इसीलिए प्राचीन भक्तों ने कहा है कि :—

मनवा जाने मैं किया, करने वाला कोय।
आदऱ्या अध विच रहे, हरि करे सो होय ॥

इसीलिए स्वामी जी महाराजके हृदय पर बीमारी, लाभ-हानी, जीवन-मरण, कीर्ति, अपकीर्ति, आदि द्वन्द्वोंके जालमें कभी नहीं फँसते हैं, और नहीं अपनेको सुखी-दुःखी मानते हैं। सर्वदा एक सम मनोवृतिमें रहते हैं, वर्षों से एक सम मनोवृतिमें रहनेका उनका अभ्यास सुदृढ़ हो गया है।

पूज्य माननीय श्री स्वामीजी महाराजके हित चिन्तक सज्जन बहुत संख्यामें हैं। आप की आयु, वातश्लेष्मका प्रकोप और कमजोरी को देखकर हितचिन्तकोंने अपने परिचित सुयोग्य डॉक्टरों को बुलाकर पूज्य स्वामीजी महाराजका निदान करवाके एलोपैथिक औषधोपचार कराया गया था। चार दिनके बाद डॉक्टर साहिबने फरमाया कि सब लक्षण सामान्य है। रिवॉलविंग टाईप होगया है, अब आयुर्वेदसे बन सके तो सम्हालें। अन्यथा एलोपैथिकमें तीव्र औषधि आवेगी। फिर तीव्रता दबाने को दूसरी देनी पड़ेगी। डॉक्टर साहिब अति भले और हितचिन्तक हैं, निष्काम भावसे डॉक्टर साहिब प्रतिदिन आते थे और बार-बार जांच करते थे। स्वामीजी महाराज अति तीव्र औषधि ले नहीं सकते थे। जीवन अति संयम शील होने पर डॉ० साहिब को चिकित्सा करनेमें यही कठिनता अखरती थी, कि अति उग्र औषधि स्वामीजी महाराज ले न सकते थे, इस अवस्थामें रिवॉलविंग (चारों ओर [illegible] ने वाला) टाईप होनेपर रोग विष चारों ओर [illegible] ला हो जाता था। कफ किस स्थानसे [illegible] कफ

निकलें, यह पहलेसे निश्चित नहीं कर सकते हैं। वे एलोपैथिक की शैली अनुसार ही उपचार कर सकते थे।

ता. २१ को डॉ. साहिबसे जब वार्तालाप हुआ, उस समय तक सुबह एन्टीबायाँटीक केप्सुलका सेवन किया गया था, अब स्वामी जी महाराज तत्काल निर्णय पर आये कि मैं भगवान् आत्रेयका अनुयायी हूँ, भगवान आत्रेय से क्षमा याचना करते हुए आपकी छत्र छायामें रहकर आज्ञानुसार आयुर्वेदिक ही उपचार करुंगा यह सुदृढ विचार करके शामको केप्सुल नहीं लिया गया, जो उपचार फिर चालू किया गया, वह पूर्ण रूपसे आयुर्वेदिक औषध सेवन कराके ही किया जा रहा है।

पहलेसे स्वामी जी महाराजका स्वास्थ्य क्रमशः सुधर रहा है, चिन्ताका कोई कारण नहीं है, इस समय ज्वर नहीं है. अति कफ प्रकोप नहीं, मात्र मामूली-सा है, वह थोड़े दिनोंमें शमन हो जायगा। निर्बलता अवश्य है, उसको दूर होने में कुछ समय लगेगा ही। स्वामी जी महाराजके सर्व हितचिन्तक सज्जनों और बहनों से कर बद्ध निवेदन है कि स्वामी जी महाराज से स्वास्थ्य सम्बन्धी अधिक पत्र व्यवहार न करनेकी कृपा करें। आवश्यकता पर समाचार अन्य रीतिसे हित चिन्तकोंके पास प्रेषित किया जायगा। अनेक बिक्री केन्द्रों व एजेन्टों द्वारा भी आप जान सकेंगे। अब निम्नानुसार औषधियोंका सेवन चल रहा है।

१. श्वासकासचिन्तामणि विशेष (पक्षच्छिन्न) ½ रत्ती
२. वसन्त कुसुमाकर रस विशेष ½ रत्ती
३. चौसट प्रहरी पींपल १ रत्ती

—— १ मात्रा

सुबह शाम शहद्में ले रहे हैं और ऊपरसे क्वाथ लिया जा रहा है। क्वाथमें निम्न औषधियां है—

ब्राह्मी	१ माशा	उन्नाव	१ दाना
अडूसा	१ माशा	पित्तपापड़ा	१ माशा
नागरमोथा	१ माशा	लिसोड़े	१ दाना
गिलोय	४ रत्ती	सोंठ १ टुकड़ा	४ रत्ती
कालीमिर्च	३ दाने		

—— सबकी १ खुराक

सुवर्ण भस्म	¼ रत्ती	प्रवाल पिष्टी	१ रत्ती
अभ्रक भस्म १०००पु.	¼ रत्ती	शृङ्ग भस्म	२ रत्ती
मुक्ता पिष्टी विशेष	½ रत्ती	सौभाग्य	२ रत्ती
सुवर्णमाक्षिक भस्म	१ रत्ती	मुलहठी	४ रत्ती

—— १ मात्रा

सुबह शाम एलादि मन्थसे ले रहे हैं।

अभी वर्तमानमें पूज्य स्वामीजी महाराज का भोजन निम्नानुसार है।

सुबह ७ बजे पावभर दूध, १० बजे पुनः पावभर दूध, २ बजे फलमें एरंड ककड़ी और सेव, शामको ७ बजे पावभर दूध ले रहे हैं।

अल्पाहार होनेसे पुनःशक्ति प्राप्त करनेमें थोड़ा समय व्यतीत अवश्य होगा ही।

पूज्य माननीय स्वामीजी महाराज—

भगवत की अनुकम्पासे और आप सभी सद्भावना युक्त महानुभावों की सद्भावना से सत्वर पूर्ववत् स्वास्थ्य प्राप्त कर जनता जनार्दन की पुनः सेवा शुरु करेंगे।

यह हमको पूर्ण विश्वास है।

जसवन्तसिंह
मन्त्री-कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन

विषय-सूची

श्रीधन्वन्तरये नमः

स्वास्थ्य

(स्वास्थ्य, समृद्धि और सुख शान्ति का मार्ग दर्शक पत्र)

धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं यतः ।
सर्वकार्येष्वन्तरङ्ग शरीरस्य हि रक्षणम् ॥

संपादकः—
आचार्य नित्यानन्द
भू० पू० उपाध्यक्ष, निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ,
अध्यक्ष, राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन,
भू० पू० सहमन्त्री, नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन,
अध्यक्ष, बिरला आयुर्वेद संग्रहालय, पिलानी (राजस्थान)

सहायक संपादकः—
राजवैद्य पं० शांतिलाल प्रा० जोशी
रसायनाचार्य.

वर्ष ७. अङ्क ८] कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) [अप्रेल १९६०

आत्रेय वचन

[रचियता—कृष्ण गोपाल पारीक 'पीपलून्द']

पयं पीवेत् (उषाकाले)

पानी जो सदा पीये, उठते ही परभात ।
विबन्ध हटे रोग कटे, हो न कभी उतपात ॥

* दन्त धावनमाचरेद्गण्डूषं नस्यञ्च *

नियमित कर दन्त धावन, तैलहि गंडूपनस्य ।
शिर रोगोंसे पा मुक्ति, समझो यही रहस्य ॥

* व्यायामङ्कुर्यात् *

बुद्धिमान तन रक्षा हित, नित्य करे व्यायाम ।
बाधायें सब ही मिटे, पूरण होवे काम ॥

आयुर्वेद कैसा है ?

[लेखक—मदनगोपाल शर्मा "गोपाल" आयुर्वेद शास्त्री,
आयुर्वेद विश्व भारती सरदारशहर (राज०)]

जाने नहीं कैसे कहें, आयुर्वेद कैसा है।
रूक्ष नीरस गूढ व्यापक, विषय एक अनोखा है।।

है वर्णित यह गूढ शास्त्र उन विभूतियों द्वारा,
कपट शून्य व निस्वार्थमय, जीवन जिनका है सारा।
भला बता ! अय स्वर्थ जनगन, कैसे जान सकते हैं,
रूक्ष नीरस गूढ व्यापक, इसको तब ही बताते हैं।।

छिपा हुआ है मर्म जिनका अपनी वेद वाणी में,
किना पुनः संशोद्ध उनका, श्लोक शुद्ध वाणी में।
मंदबुद्धि जान न पावे, भेद उनका कैसा हैं,
ऐसा गूढ और व्यापक, विषय यह अनोखा है।।

आठ अंगोंमें बटा हुआ, यह शास्त्र व्यापक है,
काय प्रसूति शल्यादिक, सभी इसी की धारा है।
सभी पद्धतियों का ज्ञापक, यह शास्त्र विस्तृत है,
रूक्ष नीरस जिसको कहते, ऐसा यह अनोखा है।।

शल्य प्रसूतिकी क्रीडाएं, सम्मुख आज छाई हैं,
आयुर्वेदका अंग इसे, कैसे फिर बतलाई हैं।
शवच्छेदका साधन न था, फिर क्यों न कह सकते हैं
रूक्ष नीरस गूढ व्यापक, विषय यह अनोखा है।।

पढनेकी तो इच्छा मनमें, पर तत्व इसीका न पाते।
हिन्दी भाषामें पढकर, मर्म कहां से ले पाते।
"गोपाल" कहे स्वार्थीजनगन, अतः दोष लगाते हैं,
रूक्ष नीरस गूढ व्यापक, इसको तब ही बताते हैं।।

सच है कथन शल्यादिकका, सम्मुख आज जो पाते हैं,
वैद्य समूह की यह शिथिलता, सभी आज निहारते हैं।
करसरकरके वाक्यों पर, यदि ध्यान जरा हम देते हैं,
'लो' रूक्ष नीरस विषय ऐसा, इसको नहीं कहते हैं।।

आज इंगलैंडकी लेबोरटी, जाकर यदि निहारते हैं,
श्रद्धान्वित पूजित आदि सुश्रुत, उनको वहांपर पाते हैं
आज बदोलत उन्हीं के, डाक्टर लोग कहाते हैं,
वैद्य शब्दको 'गदहा' कहकर, सभी आज निहारते हैं।

वैद्य बन्धुओं तुमसे आज, यही विनती मेरी है,
झूठे गाल बजाना छोड़, इसको क्यों न अपना लेओ
यदि स्वाभिमानी हो तो, आदि शक्तिको लेआओ,
सरस और गूढ व्यापक, इसको पुनः दिखादेओ।।

—इति—

जीवन में सौ वसन्त देखिये
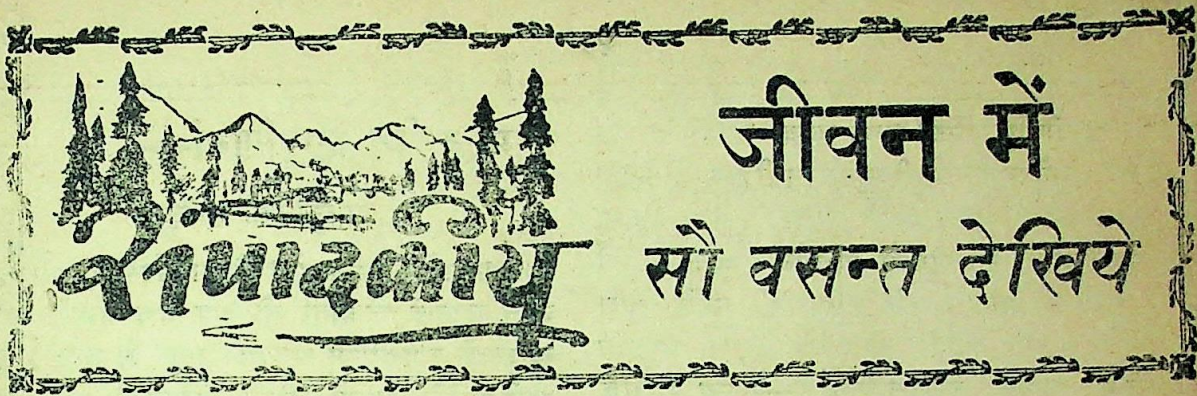
"चिन्ता फिकर तो कभी नहीं रही"

उस अस्सी सालके बूढेने जवाब दिया। मुझे एक सनक है, दीर्घ जीवियोंसे मिलनेकी। मेरा विश्वास है कि लम्बी उम्रके आदमियोंसे मिलकर दीर्घ जीवनके रहस्यको पाया जा सकता है। मैं देहातमें गया था। बूढे आदमियोंसे मिलनेकी ठानी। एक अस्सी साल का बूढा सामने आया। सब ज्ञानेन्द्रियां ठीक, दांत इस उम्रमें भी मजबूत। मैं पूछने लगा और किसान बेधड़क बोल रहा था। अनेक पुरानी बातें पूछनेपर विश्वास हो गया कि उम्र, अस्सीसे कम नहीं है। खुराकमें भी कोई विशेषता नहीं। फल या शाक सब्जी भी दुर्लभ। घी दूध भी सामान्य। मोटा खाना और मोटा पहनना। मैं बूढेकी निरोगी कायाको देखकर जितना खुश था, उतना ही हैरान भी। अन्तमें उसने स्वीकार किया कि उसकी जिन्दगी बेफिक्री की है। चिन्ता फिकर तो कभी नहीं रही।

नोबल पुरस्कार विजेता डा० लाइनस पौलिंगका विश्वास है कि "मनुष्यके बूढे होनेका एक कारण यह है कि वह अपने ऊपर निरन्तर अयाचित "निरादर" लादता रहता है। इन अनवरत, बार बार निरादरोंका नतीजा है, बुढ़ापा और मौत। "डाक्टर साहेबने चाहे जो "निरादर" गिनाये हों किन्तु हमारे विचारसे इनमें सर्वोपरि "चिन्ता" है। चिन्ता न रहनेपर मनुष्य प्रसन्न रहता है। रूसके एक निवासी श्री एवाजोव अपने जीवनके १५० वसन्त देखनेके बाद भी स्वस्थ हैं। उनका कहना है कि अपने आहार विहारको नियमित रखना और मनकी प्रसन्नता ही दीर्घ जीवन की कुंजी है। श्री अखिल विनयने दीर्घ जीवनके लिए निम्न चार बातोंकी ओर ध्यान खींचा है—

१. चिन्तामुक्त जीवन। २. प्रसन्नता।
३. अच्छा भोजन। ४. परिश्रम।

श्रीपाद दामोदर सातवलेकरकी आयु इस समय ९३ वर्षकी है। उन्होंने दीर्घजीवनके लिए निम्न अनुभव बनाए हैं।

(क) सब द्वन्द्वोंको सहन करनेका अभ्यास बढ़ाना और अपनेको निश्चिन्त रखना। संसारको दुःख मय न मान कर अपने जीवनका उच्च ध्येय रखना और मनमें 'पश्येम शरदः शतम्' का भाव रखना।

(ख) प्रायः सूर्य नमस्कार, आसन तथा प्राणायाम और दोनों समय दीर्घकालीन सन्ध्योपासना करना अपना पृष्ठवंश सीधा रखना चाहिये।

श्री जस्टिन ग्लासका कथन है कि "मनके पारस्परिक प्रभावसे मनुष्य रोगी और वृद्ध होता है। गलत मनोदशा उसमें रक्तविकार और पाचनविकार उत्पन्न कर देती है। दुर्भावों और कुकल्पनाओंके दोषसे उसकी जीवन-रसस्रावी ग्रन्थियोंकी कार्यप्रणालीमें विकृति और विषमता हो जाती है इसीसे मनुष्य रोगी और अल्पायु होता है। अनुचित बेमेल खानपान, अनियन्त्रित आहार विहार और अशुद्ध विचारों से शरीरके रस बिगड़ते हैं और उसका खून खराब हो जाता है। मनोवेगोंकी उत्तेजनासे चिन्ता, क्रोध, घृणा, आवेश ईर्ष्या, दुःख आदिसे मनुष्य अपनी अनवरत हत्या करता रहता है।

भारतरत्न महर्षि कर्वे १०२ वर्षके हैं। उन्होंने अपने दीर्घ जीवनको रोज समयपर भोजन, औसतन ६ से आठ घण्टे दफ्तरमें या बाहर काम और प्रतिदिन तीन या चार मील तक भ्रमणके रूपमें कसरतपर निर्भर बताया है। एक व्यक्तिने अपने ८६ वें जन्म

दिवसपर दीर्घायु पानेका सरल नुस्खा बताया था कि दाणा लगनेपर भोजनकी मात्रा आधी कर दीजिए। दूना सोइये, तिगुना पानी पीजिए और चौगुना हंसिए। स्वामी सत्यदेवजी परिव्राजक आज ८१ वर्ष की उम्रमें भी प्रातः ६ बजे हरिद्वारकी ठंडमें केवल लंगोटी लगाकर अपनी कुटियाकी छतपर व्यायाम करते हैं। आपका अनुभव निम्न है—मानव शरीरके दो बड़े शत्रु हैं भय और चिन्ता। इन्हें पास न फटकने दीजिये और सदा मस्त होकर खुश खुश रहा कीजिए, तभी आपको स्वास्थ्यका आनन्द मिल सकेगा और आप दीर्घायु होंगे।

वेदोंमें अनेक स्थानोंपर 'शतायु' होनेकी चर्चा है। आजकल सौ वर्षका दीर्घ जीवन पाने वाले अनेक मनुष्योंके उदाहरण भी मिलते हैं, यद्यपि वे विरले हैं। तथापि यह निश्चित है कि सचेष्ट होनेपर स्वस्थ और दीर्घ जीवन प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए दिनचर्या, रात्रिचर्या और ऋतुचर्याका पालन जरूरी है। साथ ही सद्वृत्तको अपने जीवनमें ढालना अनिवार्य है। कविराज श्रीनिवासजी शास्त्रीने दीर्घजीवी होनेके सरल उपायोंका वर्णन निम्नरूपसे किया है—

(१) सत्य, मधुर, प्रिय एवं मित बोलो।

(२) मन ईश्वरसे सम्बन्ध जोड़नेका प्रधान यन्त्र है इसमें असद् विचार मत आने दो। प्रसन्न रहो, दूसरेके लिए वही सोचो जो अपने लिए चाहते हो।

(३) बुद्धिमान् बनो असहायोंकी सेवा करो। किन्तु अपनी बुद्धि या सेवाका बखान मत करो।

(४) अपनी भूलको स्वीकार करो। अपमानको भूल जाओ।

(५) परीक्षाकर मित्र बनाओ। समागतका स्वागत करो।

इस प्रकारकी सूची अधिक विस्तृत की जा सकती है। आयुर्वेदीय सद्वृत्तका पर्याप्त प्रचार वांछनीय है। महर्षि अग्निवेशने 'आचार रसायनको पर्याप्त महत्त्व दिया है। हम अपने मन और शरीरको स्वस्थ रखकर अपने जीवनमें सौ वसन्त देख सकते हैं।

सम्पादकीय टिप्पणियां—

आयुर्वेदकी उपेक्षा

भारतके स्वाधीन होते ही आयुर्वेदके पुनरुद्धारकी नीति अपनाई गई होती तो अब तक हमारे देशमें स्वास्थ्यके दृष्टिकोणसे अनुपम सुधार हो जाता। हम दूसरे देशोंके सामने जीवन विज्ञानकी इस अपूर्व पद्धतिको पेश करते और यशके भागी भी बनते। हम मानते हैं कि वर्तमान देशकालके अनुसार आयुर्वेदमें कुछ परिष्कार आवश्यक हैं, किन्तु उचित साधन होने पर वे परिष्कार असम्भव नहीं हैं। अभी तो आर्थिक न्यूनताके कारण साधन ही नहीं हैं।

प्रथम पंचवर्षीय योजनामें केवल १७ लाख ५ हजार रुपये खर्च किये गए। भारत सरकारने द्वितीय पंचवर्षीय योजनामें स्वास्थ्य कार्यक्रमोंके लिए २६७ करोड़ रूपये निर्धारित किये जिसमें आयुर्वेदके लिए नाममात्र की धनराशि रखी गई। आपको यह जानकर दुःख होगा कि चार वर्ष बीत रहे हैं, पर अभी उसका भी नगण्य भाग ही खर्च हुआ है। पांच साधन सम्पन्न नये आयुर्वेद कालेज स्थापित करनेकी योजना थी पर अभी तो एक भी नहीं बना है। जो हैं, वे भी हीन दशा में। ज्ञात हुआ है कि तृतीय पंचवर्षीय योजनामें केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा ५३४ करोड़की विशाल धनराशि स्वास्थ्य कार्यक्रमोंके लिए रखी जा रही है, किन्तु इस अर्थ समुद्रमेंसे आयुर्वेदको तो कुछ बूंदें ही शायद मिल सकेगी।

आयुर्वेदकी प्रशंसा एक फेशन

आयुर्वेदमें विश्वास प्रकट करना भी आजकल एक फैशन है, शराफतकी निशानी है। वर्तमानमें ऐसे लोगोंकी बहुतायत है जो मंचपर खड़े होकर आयुर्वेद की प्रशंसाके पुल बांधते हैं, किन्तु जरासी बीमारीमें इंजेक्शन लेनेको दौड़ पड़ते हैं। हमें आयुर्वेदोन्नतिके लिए ऐसी प्रशंसा हितावह प्रतीत नहीं होती आयुर्वेद के प्रशंसकोंका कर्तव्य है कि वे व्यावहारिक रूपमें भी आयुर्वेदको अपनावें।

कतिपय सिद्ध-प्रयोग

लेखक—स्वामी कृष्णानन्द शास्त्री, सिद्धाश्रम गालिन खोह,
विशेष–अ० भा० संस्कृत-साहित्य सम्मेलन केन्द्राध्यक्ष, चन्देरी (म० प्र०)

वक्तव्य—मैंने स्वकीय जीवनका लक्ष्य सर्वथा पर स्वार्थ-स्वास्थ्य संरक्षण, एवं तदर्थ वस्तु समन्वेषण ही निर्माया, तथाहि इस अन्तिम लेख द्वारा भी जनता-जनार्दन' के हितार्थ सद्गुरुओंसे प्राप्त हृदयके परम गुह्य रहस्य उपहारके रूपमें आपके समक्ष प्रादुर्भूत कर रहा हूँ, जिन्हें अध्ययन कर अवश्य उपयोगमें लावें और स्वास्थ्य लाभ करें।

अस्तु! उस जगन्नियन्ता परब्रह्म परमात्माने मानव उपकार हेतु औषधियोंको महान् अलौकिक-दिव्य शक्ति प्रदान की है, और वे औषधियाँ भी उस विश्वम्भरकी महिमामें वलिष्ठ और शक्तियुत होकर मानव को 'स्वास्थ्य' प्रदान करती हैं, किन्तु हमें उन औषधियोंके गुणावगुणसे भली भांति सुपरिचित होना चाहिये। तभी हम उनसे लाभ उठा सकते हैं। अन्यथा लाभके अतिरिक्त हानि भी हो सकती है! कुछ समय गत हुये की बार्ता है, कि पाञ्चाल-प्रान्तीय 'सतलज' नामक दरियावके किनारेपर एक सुप्रसिद्ध संत स्वच्छन्द रूपसे विचरण करते थे। जिसका श्वेत-सिंगरफ योग बहुत मशहूर था। यहां तक कि जिस किसी पुरुषको कदाचित् दैवयोगसे उनके दर्शन हो गये और १-२ खुराक सिंगरफकी भस्म मिल गयी बस जानों उसके जीवनमें आने वाले शारीरिक कष्टोंका अन्त हो गया। जिन्होंने अन्तिम प्रस्थानके समय एक ही अपने सुप्रिय शिष्य सेवकको वह अनुपम योग रत्न प्रदान किया था प्रत्युत उसकी भी ऐसी ही प्रख्याति थी। बस "जिन खोजा तिनपाइयाँ गहरे पानी पैठ" इस कहावतके आधार पर येन-केन उपायसे मुझे वह योग प्राप्त हो गया, और आज सहर्ष उसी "अनमोल रतन" को आपकी सेवामें प्रस्तुत कर रहा हूँ। आशा है जनता-जनार्दन एवं वैद्य समाजका इससे हित हो सके।

योग—लाल मिर्चकी ४-५ सेर सूखी लकड़ियां संग्रह कर एवं जलाकर, राखको एक हण्डीमें दाब-दाब कर भरे और तन्मध्य संशोधित हिङ्गुलकी डली रख कर, तथा हण्डीको चुल्हे पर चढ़ाकर नीचे ५ सेर लकड़ियोंकी नरमआंच देवें। सूचना यदि धूमोत्थान हो तो त्वरित बन्द कर देना चाहिये। अनन्तर शीत-लोपरान्त सावधानीके साथ तन्निहित पदार्थको निकाल कर सुरक्षित रीतिसे रख लीजिये। बस सुन्दर योग बन कर प्रस्तुत है। अनुपान—यथावश्यक समय १ चावलसे लेकर १ रत्ती पर्यन्त शक्ति बलके अनुसार ताम्बूल पत्र, मक्खन या मलाईके साथ व्यवहार कराइये समग्र प्रातः सायं दूध, घीका विशेष सेवन करें, और पथ्या-पथ्यके सुविचारका विशेष ध्यान रखें। अत्यधिक-पौष्टिक-ताकत भर अकुण्ठित परम योग है।

श्रवणे—कर्णशूलका रोगी अत्यन्त बेचैन रहता है, यहां तक कि निशाकालमें आंखें निद्राका अनुभव नहीं कर पाती, अपितु अहर्निशि क्रन्दन और विलपन में ही व्यतीत होता है। जिसका प्रमुख कारण श्रवणाभ्यन्तर मलका विशुष्क हो जाना अत्यन्ताभाव, अथवा तदन्तर गत फुन्सी आदिका निकलना द्रव प्रवाहित होना आदि हेतु हैं। प्रतिकार कानमें सपेदा डालकर तदुपरि निम्बूका अर्क निचोड़ देवें। शीघ्र लाभदायक है। अथवा अर्क (मदार) के पीले पत्रों पर तिल-तैल चुपड़ कर आंच पर सेके और छुन्न-मुन्न होने पर पत्र को टेढ़ाकर तेल को कटोरी में टपका लेवें, तथा सहता

हुआ कानमें डालें, हितावह है। अथवा हुलहुली पत्र स्वरस समोष्ण कर कानमें डालें। किम्बा काली मिर्च पीस कर और जलेन सह हथेली पर घिस कर कानमें १-२ बिन्दु टपकावें तो कर्ण वेदना शान्त होवे।

दन्त शूल यह रोग भी मनुष्यको अत्यधिक कष्टदायक हैं। कथित कष्टसे कष्टित कष्टीके अहोरात्र मय दुःखकी घड़ियां गिनते और तड़फते ही निकलती हैं, जिनका यथार्थ अनुभव तो प्रोक्त कष्टका भुक्त भोगी ही कर सकता है। प्रत्युत दर्शनार्थियोंकी भी उसकी इस दीन दशा पर बड़ा ही तरस आता है, परंच विवश होकर बेचारे मुरझायेसे रह जाते हैं। अस्तु उपर्युक्त विषयमें कई बारके सुपरीक्षित-अन्वर्थ सिद्ध योग आप की सेवामें रखता हूँ। योग—काली मकोयकी पत्तियों का स्वरस निचोड़ कर तथा समोष्ण कर, अनन्तर रोगीको लिटाकर जिस तरफ की ढाढ़में पीड़ा हो उसी तरफके कानमें यथा सह्य डालकर ४-५ मिनट लेटा रहने दें, पश्चात् कानको उल्टा कर औषधि निकाल देवें और उसी भांति पुनः डाल देवें। बस रोता आयेगा और आपकी औषधिकी भूयो-भूयः प्रसंशा करते हुये हंसता चला जायगा। देखिये ? औषधियों में सच मुच आश्चर्य जैसा चमत्कार है। अन्यच्च—परमानन्द पुटास (पानीमें डालने वाली क्रिमीनाशक प्रसिद्ध लाभ दवा) गर्म पानी में रत्ती भर डाल कर तथा साथ ही किञ्चित् नमक डाल कर कुल्ली करें। शीतोष्ण जल स्पर्शसे दन्तोंमें पीडा मैशूस होने आदिमें हितकर है। सूचना जितने अधिक गर्म जलसे कुल्ले करेंगे, उतना ही अधिक लाभ शीघ्र होगा। अथवा—प्राकृतिक समुत्पन्न जङ्गली लाल कनेरकी दतवन करने से दांतोंकी यावत् बादी बाहर निकल कर शीघ्र लाभ होगा। अथवा आककी सूखी लकड़ीकी दतवन करने से दांतोंका बादीपन, हिलना, चस्क, कमजोरी आदिमें हित कर है। पीड़ित स्थान पर आकका दूध मलना भी लाभ दायक हैं। किम्बा वर्तमान प्रख्यात सर्वत्रोपलब्ध डी. डी. टी. के गर्म जलसे कुल्ले करना भी दन्त व्यथा एवं शीघ्र क्रिमीनाशक है।

शिरःशूल—यह रोग भी वातज और पित्तज भेदेन शारीरिक प्रकृत्यनुसार द्विविध है। प्रत्युत रोगीको अत्यधिक कष्टदायक है। तथाहि प्रकथित रोगसे ग्रस्त रोगीके दुःखकी प्रतिघड़ियां अत्यन्त वेदना मय गिनते और तड़फते ही कटती है। आधुनिक सम्कालीन 'शिरोवेदनाहर' कतिपय आविष्कार उद्धृत हुये हैं, यथा ऐस्प्रो, एनाशन आदि इनसे रोगीको क्षणिक सान्त्वना तो अवश्य मिलती है, किन्तु स्थायी लाभ नहीं होता। कुछ कालोपरान्त फिर उसी वेदनामें डूब जाता है।

पैत्तिकी वेदना पर समुपाय—एक छटांक रक्त गुञ्जोंका एक सेर पानीमें घोट पीस कर कल्क बनावें, तथा १ सेर 'भृंगराज' नामक औषधिका स्वरस तथाहि पाव भर तिल-तैल प्रोक्त कल्कमें संमिश्रण कर, लोह कड़ाहीमें भर कर तथा चुल्हे पर रख कर मंद-मंद अग्निसे चुरावें, तैल शेष रहने पर उतार लें। और ठण्डा होने पर छान कर शीशीमें भर कर, कार्क लगा कर रख लो। यथावश्यक समय व्यवहारमें लाइये तथा रोगीकी घ्राणेन्द्रियसे सुताइये एवं माथे पर मर्दन कराइये, लाभ प्रद है। एतदति रिक्त कण्ठसे ऊपरके प्रायः सभी रोगोंमें हितावह है।

सूचना—पूर्ण लाभ अधिक समयके सेवनसे होगा। अथवा—घृतकुमारीका गूदा ५ सेर पर्यन्त लेकर प्रथम हाथोंसे खूब-भली भांति मर्दन कर यावत् रस बाहर निकाल दीजिये, पश्चात् १ तोला घृत डाल कर पुनः मर्दन करिये, भूयोऽपि पानी डालकर उसी भांति मर्दन करिये, एवं भूत विधिना पदार्थको नीरस बना लीजिये तथा नीरस फोकको ग्रहण कर, चीनी या कांचके बर्तनमें रख लीजिये। बस आश्चर्य जैसा अद्भुत योग बन कर तैयार है। आवश्यकता पड़ने पर शिरः शूल के रोगीके शिरके बाल छुरेसे साफ करवा दीजिये, और उपर्युक्त फोकको शिर पर रख कर ऊपरसे वस्त्र बन्धन करवा देना चाहिये। अनन्तर २४ घण्टेके पश्चात् अर्थात् द्वितीय दिवस प्रातः समय पूर्वकी घी

(शेष पृष्ठ ४७६ पर देखें)

१. भगवद्गीताकार कहते हैं कि—श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः ।। मनुष्य मात्र श्रद्धावान है। जो जिस पर श्रद्धा कर लेता है, उस प्रकारका वह बन जाता है। चाहे ईश्वर और शास्त्रपर श्रद्धा करके देव बने, चाहे प्रकृतिके कार्यों पर श्रद्धा रखने वाला बन कर दानव बने।

२. जिसके पास शास्त्र और ईश्वर पर श्रद्धा है। उसके पास संयम, स्वास्थ्य, जीवन और भावी सुख बिना बुलाये आते रहते हैं और जिसके पास प्रकृतिमें श्रद्धा है, उसके पास असंयम, रोग, अशान्ति और भावी चिन्ता बिना निमन्त्रण दिये आते हैं।

३. ईश्वर न अच्छा करता है, न बुरा। मनुष्य अपने किये हुए कर्मानुसार सुख-दुःख भोगता रहता है।

४. श्री कविराज लोलिम्बराजने लिखा है कि—

पथ्ये सति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः ।
पथ्येऽसति गदार्तस्य किमौषध निषेवणैः ।।

रोग पीड़ित सज्जन पथ्यका पालन करता है, तो उसे औषध सेवन क्यों करना चाहिए? (प्रकृति ही रोगको दूर कर देवेगी) यदि रोगावस्थामें भी पथ्य का पालन नहीं होता है, तो औषध सेवन करनेसे फल क्या होगा? (रोगका जड़ मूलसे विनाश कदापि नहीं हो सकेगा)।

५. स्वास्थ्यका निवास संयममें है। संयम है, तो स्वास्थ्य दूर नहीं हो सकेगा। यदि वह (संयम) नहीं है, तो स्वास्थ्य किसके आश्रित रहेगा?

६. शारीरिक श्रम और मानसिक आवश्यक परिश्रम करने वाले को स्वास्थ्य रक्षा की चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं है, बिना कहे, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य बना रहेगा।

७. स्वास्थ्य संयमसे मिलता है, न कि मूल्यसे या धनके बलसे (जो लोग मान रहे हैं कि मौजशोख करो, बीमार हो जायगें, तो सुई ले लेवेगें, वे भ्रममें हैं)

८. निर्मल, विशुद्ध वायु मण्डलमें निवास, मानसिक शान्ति, संयम, पथ्यका पालन, यथा समय विशुद्ध भोजन और सदाचार हैं, तो रोगके आक्रमणका भय नहीं रहता है।

९. भाग्यको या चिकित्सकको दोष न देवें, अपनी भूलोंको दूर करें। अनुशासनका पालन करें, और शीघ्र स्वास्थ्य और सम्मतिको प्राप्त करें।

१०. स्वास्थ्यका शत्रु असंयम है। असंयममें मुख्य मैथुन है। मैथुन अतिशय शक्तिपात कराता है। दूसरा शत्रु मानसिक चिन्ता है, यह भी देहको निरन्तर जलाती रहती है।

११. आलसी, असंयमी और सर्वदा पौष्टिक पदार्थों के सेवन करने वाले अमीरके पास रोग सर्वदा उपस्थित रहता है। इसके विपरीत परिश्रमी, संयमी, पचनशक्ति का विचार करके भोजन करने वाले सज्जनके पास स्वास्थ्य सर्वदा बना रहता है।

१२. अधिकतर पौष्टिक पदार्थ खा लेनेसे बल नहीं बढ़ता है। पौष्टिक तत्वका पचन होने पर ही लाभ मिलता है (पचन न होने पर आम विष बनता है, जो रोगोंको निमन्त्रण देता है।

१३. आलसी बनकर अति पौष्टिक पदार्थोंका सेवन करने वाला कदापि संयमी नहीं बन सकेगा। काम विकारसे पीड़ित होकर मृत्युको निमन्त्रण देगा।

१४. जो मनुष्य चिकित्सकका कथन सुनता है और मानता है। उसे स्वास्थ्य सरलतासे मिल जाता है, जो अभिमानी बन कर चिकित्सकका अनादर करता है, उसे अन्तमें पश्चात्ताप करना पड़ता है।

१५. चिकित्सक केवल विकारोंकी चिकित्सा करता है, पथ्यका साथ है तो प्रकृति ही आरोग्य प्रदान करती है। (वैद्य कदापि स्वास्थ्य नहीं देता)।

१६. प्रकृति और समयानुरूप पथ्य पालन, मनका संयम और इन्द्रियदमन, ये तीन सर्व श्रेष्ठ औषधियां हैं।

१७. रुग्णावस्थाको दूर करनेके लिए सर्व औषधियोंमें सर्वोत्तम शारीरिक और मानसिक विश्राम और लङ्घन है।

१८. सर्व श्रेष्ठ चिकित्सक वही है जो रोगके मूल को निर्मूल करने वाली श्रेष्ठ औषधि संयमको प्रधानता देता है।

१९. वर्तमानमें प्रयुक्त हो रही औषधियों और उत्पन्न रोगोंके लिए कहे, तो व्याधि हज़ार किन्तु औषध दश (शेष सबको छोड़े)

२०. मुझे दृढ विश्वास है कि वर्तमानमें जो विश्वमें संगृहीत औषधियां हैं, उन सबको समुद्रके तल को स्वाधीन कर दी जाय और नूतन निर्माण कार्यको बन्द कराया जाय, तो मानस समाजका स्वास्थ्य अधिकतर अच्छा रह सकेगा। (समय पथ्य पालन करेगा और सब रोग स्वाभाविक निवारण हो जायेंगे।

२१. जो मनुष्य हिततम विचारोंको नहीं सुनता। उसे अन्तमें पश्चात्ताप ही करना पड़ता है।

— कतिपय-सिद्ध प्रयोग —

(पृष्ठ ४७४ का शेष)

हुई औषधिको उतरवा कर पुनः दूसरा फोक उसी भांति बन्धवा देना चाहिये। सम्प्रोक्त विधि अनुसार लगभग २१ दिनावधि पर्यन्त उपचार कराइये। निसन्देह आजन्मके लिये शिर दर्दसे मुक्ति मिल जायगी। किम्बहुना परीक्षा कर देखें स्वयं सवगत हो जायगा। "करकङ्कनको आरसी क्या ?"

वातज शूल पर—पाव भर 'भृङ्गराज' स्वरस, पाव भर धतूरेके पत्तोंका स्वरस, पाव भर अर्क पीत पत्र स्वरस, रक्त गुंगची १ छटांक पाव पानीमें कल्क, ज्योतिष्मती १ छटांक पाव भर पानीमें कल्क, कुचिला २॥ तोला पाव भर पानीमें कल्क तथा पाव भर तिल तैल। प्रथम सब एकत्रित कर लोह कड़ाहीमें चुल्हे पर रख कर मंद-मंद अग्नि द्वारा चुरावें, तैल शेष रहने पर उतार लो और छानकर शीशीमें भर कर रख लो, यथा समय उपयोगमें लाइये एवं पीड़ित स्थान पर मर्दन कराइये। वातजनित सभी रोगोंमें लाभ कर है, विशेष शिरदर्दमें।

त्रैतीयक और चातुर्थिक ज्वर शामक यन्त्र

विधि—इस यंत्रको श्वेत चन्दनसे पीपलके ३ पत्तोंपर ३ यंत्र लिखे और १ यंत्र जलसे धोकर प्रातः समय रोगीको पिला देवे, और दूसरा ज्वर आनेके समय पिलावे, तीसरे यंत्र को केवल मरीज देखता रहे। ज्वर नहीं आयेगा, परीक्षित है। सूचना—किन्तु प्रोक्त उपचार ज्वर आने वाले दिन ही करना चाहिये। अथवा चातुर्थिक ज्वरमें मदारके ५ पुष्प पुराने गुड़में मिला गोली बांधकर ज्वर आनेसे २ घंटे पहिले रोगीको निगलवा देवे, ज्वर नहीं आयेगा। त्रैतीयक (इकतरा) के लिये ऊर्ण नाभि मकरीका जाला लेकर साफ करलो और उसके अन्दर जो चावल सरिस रहता है उसे दूर करदो और गोली बना कर पुराने गुड़में रख कर मरीजको २ घंटे पूर्व निगलवा दो। अथवा विजया बूटीको ज्वर आनेसे ३ घण्टे पूर्व मात्रा ३ मासा गुड़में मिलाकर दे दीजिये। इसी भांति २ घण्टे पूर्व २ मासा, और १ घंटे पूर्व १ मासा दे दीजिये, ज्वर नहीं आयेगा।

ॐ
२२२ | ३३३
ॐ
ह्रीं | ० ० ०

॥ इति शिवम् ॥

लाभदायक फल--

नींबू के विविध प्रयोग

(लेखिका--श्रीमति सुमित्रा देवी अग्रवाल "विशारद")

भोजनालयमें नींबूको प्रथम स्थान देना चाहिये, क्योंकि सभी ऋतुओंमें प्राप्त होने वाले फलोंमें जितनी उपयोगिता नींबूकी है, उतनी अन्य फलोंकी नहीं। नींबूमें प्रबल कीटाणु नाशक शक्ति होती है, जो अन्य फलोंमें नहीं पाई जाती। साथ ही साथ नींबूमें सबसे बड़ा गुण यह है कि उसके रसमें निमोनियाके कीटाणु मारनेका गुण विशेष रूपसे पाया जाता है। अकेले नींबूके रसमें विटामिन ए० बी० और सी० पाए जाते हैं, जो अन्य फलोंमें नहीं मिलते। नींबू सर्व सुलभ उपयोगी फल है। अतः इसका सेवन नित्य करना स्वास्थ्यके लिए लाभदायक सिद्ध होता है।

नींबू अम्ल, वात नाशक, हल्का, दीपन पाचन, कीड़ोंको नाश करने वाला, तीक्ष्ण उदर रोगोंको दूर करने वाला, श्रम नाशक, वात, पित्त, कफ और शूलमें लाभदायी तो है ही। साथ ही साथ कष्ट साध्य अरुचिको दूर करके रुचिको बढ़ाने वाला भी है। यहां तक कि तत्कालके ज्वर, मन्दाग्नि, मुखादिसे पानी गिरना, कोष्ठबद्धता, हैजा, प्लेग इत्यादि भयंकर बीमारियोंमें भी लाभदायक सिद्ध हुआ है। नींबूका प्रयोग अनेक रोगोंमें सफलता पूर्वक किया जा सकता है। कुछ सरल उपचार जो नींबू द्वारा सम्भव हैं, निम्न हैं—

(१) गरम पानीमें नींबूके रसके साथ थोड़ीसी चीनी मिलाकर पीनेसे कब्ज दूर हो जाता है।

(२) नींबूको आड़ा चीरकर सोंठ और सेंधानमक मिलाकर धीमी आंचपर गरम करके चूसनेसे अजीर्ण दूर हो जाता है।

(३) एक नींबूकी दो फांके करके एकमें आधी रत्ती अफीम रखकर दूसरा भाग उसके ऊपर रखकर आगमें तपाकर ठंडा करके चूसनेसे संग्रहणीमें शीघ्र ही लाभ होता है।

(४) नींबूके रसमें अफीम मिलाकर चाटनेसे अतिसारमें शीघ्र ही लाभ होता है।

(५) हैजेके दिनोंमें २ नींबूओंका रस भोजनके साथ सेवन करनेसे हैजा होनेका भय नहीं रहता।

(६) हैजा हो जानेपर आधी छटांकसे १॥ छटांक तक नींबूका रस अवस्थानुसार देनेसे लाभ होने लगता है।

(७) बिजौरा नींबूके १५ बीज; २ तोले पानीमें पीसकर पिलानेसे हैजेमें लाभ होता है।

(८) चायके एक चम्मच भर नींबूका रस और दो चम्मचपानीमें दो चम्मच शक्कर मिलाकर चाटनेसे वमन बन्द हो जाते हैं।

(९) ज्वरमें यदि वमन होते हों तो नींबूको आड़ा चीरकर उसमें कालीमिर्च और नमक अथवा चीनी मिलाकर चूसनेसे लाभ होता है।

(१०) जम्बीरी नींबूका रस, सोंठ, मिर्च और अदरखका रस मिलाकर चाटनेसे बालकोंकी हिचकी तुरन्त बन्द हो जाती है।

(११) बिजौरा नींबूके २ तोला रसमें ६ माशा शहद और ३ माशा काला नमक मिलाकर पीनेसे हिचकी दूर हो जाती है।

(१२) नींबूको आड़ा चीरकर सेंधा नमक डाल

कर चूसनेसे बवासीरमें खून जाना बन्द होने लगता है।

(१३) नींबूका रस ढाई तोला, चिरायताका काढ़ा २॥ तोला दोनोंको एकसा मिलाकर पीनेसे मौसमी बुखार दूर हो जाता है।

(१४) केवल नींबूका रस गरम या ठण्डे पानी के साथ एक एक घण्टे बाद सेवन करनेसे इन्फ्लुएन्ज़ा में लाभ होता है।

(१५) नीबूका रस तेज कहवामें बिना दूध मिलाये हुये पीनेसे मलेरिया बुखार तुरन्त दूर हो जाता है।

(१६) नीबूकारस और सेंधा नमक मिलाकर सेवन करनेसे पित्त रोगमें लाभ होता है।

(१७) नींबूके रसमें अफीम और जमालगोटाकी जड़ लोहेके तवेमें पीसकर आंखोंके ऊपर लेप करनेसे आंखोंका दुखना दूर हो जता है।

(१८) बिजौरा नींबू आम और अदरखका रस गरम करके गुनगुना ही कानमें डालनेसे कानका दर्द दूर हो जाता है।

(१९) बिजौरा या कागजी नींबूके रसमें सज्जी-खार मिलाकर कानमें डालनेसे कानका बहना दूर दूर हो जाता है।

(२०) चुकन्दरके पत्तेका रस नींबूके रसमें मिला कर लगानेसे दादमें लाभ होता है।

(२१) नींबूके रसमें पंवार (चकौड़ा) के बीज पीसकर लगानेसे दाद दूर हो जाता है।

(२२) नींबूके रसमें हरताल और गन्धक घोंटकर लगानेसे खाज दूर हो जाती है।

(२३) नींबूके रसमें करोंदाकी जड़ पीसकर लगाने से खाजमें तत्काल ही आराम मिलता है।

(२४) नींबूके पत्तोंकी धूनी देनेसे बालकोंकी उतरी हुई हंसली बैठ जातीहै।

(२५) दिनमें चार पांच बार दो-दो तोले नींबूका रस पाव भर साफ पानीके साथ सेवन करनेसे निमो-नियामें लाभ होता है।

नींबूकी उपयोगिताके सम्बन्धमें एक ग्रामीण कहावत इस प्रकारसे है—

खाय कागजी नीबू रोजै, तुलसी बिरवा रोपै।
वैदपसारी करमका झंखै, घरमां मौत न कोपै॥

अर्थात्—कागजी नींबूका प्रतिदिन सेवन करने और घरमें तुलसीका पौधा लगानेसे वैद्य एवं पंसारी अपने भाग्यको कोसते ही हैं, साथ ही साथ घरमें मौतका कोप नहीं होता अर्थात् मौत घरमें नहीं आने पाती। इससे विदित है कि नींबू कितना गुणकारी एवं लाभदायक फल है।

रत्न और उनका उपयोग

(लेखक—वैद्य बद्रीनारायण शर्मा आयुर्वेदाचार्य, काव्यतीर्थ, आयुर्वेद-रत्न
कालेड़ा-कृष्णगोपाल अजमेर)

रत्नकी परिभाषा—विश्वेश्वरकी सृष्टिमें कई प्रकार के रत्न हैं, "रत्नगर्भा वसुंधरा" विश्वावसु या अष्टावसुओंको धारण करने वाली पृथ्वीमें कई प्रकारके रत्न विद्यमान् हैं। चमकीले सुन्दरपाषाण खण्डोंको ही रत्न मणियोंकी आख्यासे भूषित नहीं कर सकते। सर्व प्रथम रत्न मनुष्य देह है, यदि उसकी उपयोगिता उत्तम व अलौकिक हो। और जो देह सकल ज्ञान, विज्ञान व संसारके क्रियाकलापोंका मूल और नटनागर के जगत नाटकका मुख्य अभिनेता है, उस मनुष्यकी देहको नीरोग एवं स्थिर रखने, पालन करने व जीवन बनाये रखनेमें जो पदार्थ समय पर, ऐन मौकेपर काम आवे, वही रत्न है। चाहे वह साधारण हो या असाधारण, चाहे वह बहुमूल्यवान हो या स्वल्प मूल्यवान्। मनुष्यकी देह-रत्नके बाद अन्य पदार्थ रत्नोंकी गिनती में आ सकते हैं। नररत्न, स्त्रीरत्न, पुत्ररत्न, विद्वद्रत्न, किसी भी विद्यामें निष्णात होने वाला पुरुषरत्न अथवा कोई भी मानव द्वारा प्रशंसित उत्तम पदार्थ रत्न हो जाता है। किन्तु मनुष्यने वास्तविक रत्न संज्ञा हीरा, मोती, माणिक, पन्ना, नीलम, पुखराज, गोमेद वैडूर्य आदिको दी है। रत्नोंका मूल्यांकन समय (उपयोगिताके) या परीक्षासे होती है। कभी कभी किसी पदार्थकी स्वल्पता या अभाव होना भी रत्नाधिक मूल्य या महत्व को रखता है। कभी-कभी हीरे, जवाहरात आदि रत्नों को लोहेके भाव भी नहीं पूछते, और ना कुछ, महत्व हीन या अल्प मूल्य वाला पदार्थ रत्नोंसे भी अधिक विशेष मूल्य व महत्व वाला बन कर मनुष्यके जीवन की रक्षा या पालनमें श्रेष्ठ स्थान ग्रहण करता है। दुष्कालके समय कोई भी करोड़ पति या जोहरी हीरा जवाहरातों या मोतियोंकी खिचड़ी बनाकर प्राण रक्षा नहीं कर सकता, प्रत्युत उस समय मोतियोंसे अधिक महत्व वाले बाजरे या गेहूँके दानोंके भक्ष्य पदार्थसे प्राण संकट निकल सकता है, यदि उसके महलमें ये दाने नहीं हैं तो उसके हीरे, मोती आदि रत्न उसका प्राण नहीं बचा सकते और वह अनेक रत्नोंका धनी इस रत्नराशिको यहां पर ही छोड़कर देवलोक वासी बन जायगा। उस समय उन रत्नोंकी कोई कीमत नहीं रहती।

संक्षेपमें जो पदार्थ सुकार्य बाहुल्यसे अपकार की अपेक्षा लोकोपकारमें अधिकरत हो, उसे रत्न कहते हैं। जगत्में अनेक भांतिके रत्न होते हैं ? जगत्की उत्पत्ति रूप उपकार दृष्टिसे पंचतत्व पृथ्वी, जल, तेज, वायु तथा आकाश ये भी रत्न हैं। प्राणि मात्रके जीवनकी विद्यमानताके लिये जल वायु तथा सूर्य ये तीन रत्न महान् उपकारी हैं। वैसे ही मानवीय देहमें कफ, वात और पित्त ये तीन रत्न हैं। यथा जल वायु और अग्नि (सूर्य) विसर्ग आदान तथा विक्षेप रूप क्रियाओंसे अविरल संसारको धारण करते हैं, वैसे ही तदनुरूप कफ, वात, पित्त भी शरीरको अहर्निश पालन करते हैं। जीवित रह कर अन्य पाषाण खंड रत्नोंको पहचानने, धारण करने व किसी भी रूपमें उनका सेवन करनेके लिये सृष्टिके आदि रत्न जल, वायु और सूर्य रूप प्रमुख, आदि रत्नत्रयको भुलाया नहीं जा सकता। तत्पश्चात अन्य रत्नोंकी गिनती होती है।

रत्न अन्योंकी अपेक्षा जो उत्कृष्ट शक्तिशाली,

जीवनीय शक्ति प्रदाता, विघ्नोंसे संरक्षक और कार्यरत महार्घ और दीप्तिमान हो, उसे रत्न संज्ञा या रत्नकी उपाधिसे भूषित किया जाता है। केवल पाषाण खंडोंको ही रत्न नहीं कहा जाता । संसार में अनेक रत्न हैं । प्रजाके उपकारमें या राष्ट्रके निर्माणमें रत राजा या नेता नररत्न होता है । पर्वतोंमें हिमालय, नदियोंमें गंगा, हाथियोंमें ऐरावत, घोड़ोंमें उच्चैःश्रवा, पक्षियोंमें हंस, वृक्षोंमें कल्प वृक्ष, गायोंमें कामधेनु तथा मणियोंमें कौस्तुभ मणि, रत्नोंमें वज्र (हीरा) और हीरोंमें भी कोहेनूर प्रमुख रत्न हैं। इन रत्नोंके सेवनसे और धारण करने मात्रसे भी मानव समाजको विशेष गुणोंकी प्राप्ति होती है। इस विशेषताके हेतुसे आचार्योंने रत्नोंका उपयोग किया। रत्नोंकी रत्नता उनकी लोकोपकारितामें है, न कि चमकीले पत्थर होकर एक स्थानमें निरुपयोगी पड़े रहने में।

वेदों में रत्न

ओ३म् अग्निमीडे पुरोहितं होतारं रत्नधातमम् ॥

यह जगत् की आदिमें प्रादुर्भूत, प्रथम श्रेणीके वेद, प्रमुख ऋग्वेदका सबसे पहला मंत्र है। इस मंत्र में रत्न धारी अग्नि देवका उल्लेख है।

वैसे तो वेदोंके मंत्र अतिगूढार्थ व अनन्त तात्पर्यों से पूर्ण होते हैं, किन्तु शब्दशः सीधा अर्थ करने पर यही भाव निकलता है। यहां हमारा प्रमुख विषय रत्न और मणियां तथा उनके द्वारा चिकित्सासे हैं। ऊपर अग्निदेवको रत्न धारण करने वाले निर्दिष्ट किये हैं। अग्नि सर्व व्यापक पंचमहाभूतोंमेंसे १ महाभूत हैं, किन्तु कल्पना रूपसे उन्हें देवताओंका पुरोहित अथवा यज्ञका होता, अग्नि संज्ञक देव पुरुष मानते हैं । तो वज्र (हीरा) आदि प्रमुख रत्नोंके धारण करने वाला अथवा रत्नजटित अलंकारोंको पहनने वाला भी माना जा सकता है। रत्नोंको धारण करने और ऋग्वेदके मंत्रोंका आविर्भाव होनेका कोई निश्चित समय निर्णित नहीं किया जा सकता। अतः रत्नोंका धारण करना आदि कालसे प्रचलित है।

अग्नि प्रत्यक्ष ज्योतिष्मान् है। तथैव दिनमणि सूर्य भी ज्योतियों (रश्मियों) का भरपूर भंडार है। रत्नोंमें भी (Cosmic Rays) रश्मियां सन्निहित हैं। अग्नि, सूर्य तथा रत्नोंका पारस्परिक अविच्छिन्न संबंध है। यथा सूर्य व अग्नि जगत्के लिये महान् उपकारी हैं, वैसे ही रत्न भी मानवके परम हितकारी हैं।

सभी वेदोंमें रत्न-मणियोंके कई स्थानों पर किये प्रयोग पाये जाते हैं। अतः रत्नोंकी उपयोगिता भी सृष्टिके प्रारंभसे ही निसन्देह मानी जा सकती है।

रत्नोंकी व्यापक शक्ति

रत्नोंमें अद्वितीय शक्ति है। आयुर्वेदीय रसायन शास्त्रकी दृष्टिसे काष्ठौषधियोंकी अपेक्षा अधिक शक्ति शाली स्वर्णादि धातुएं होती हैं । स्वर्णादि धातुओंसे अतिशय शक्तिवान हीरा आदि रत्न होते हैं और रत्नों से भी अधिक शक्ति शाली पारा होता है। आदि पुरुष महेश्वर एवं आदि प्रकृति पार्वतीके द्वारा सृष्टिकी उत्पत्तिके साथ-साथ क्रमानुसार पारद, रत्नों, धातुओं की उत्पत्तिका क्रम आनन्द कन्दमें सुन्दर तथा वर्णित है। यथाः—

पुरा कैलाश शिखरे गह्वरेऽद्रिसुतेश्वरौ ।
चिरमास्तां क्रीडमानौ जिगिषतौ परस्परम् ॥
तदा रेतः सूतरूपः प्रवाहोऽभूत्तयोर्महान् ।
तत्प्रभाव प्रवाहेन वेधिता दृषदोऽभवन् ॥
पद्मरागादि मणयो लोहा हेमादयस्तथा ।
गन्धकाद्याश्चपाषाणा दिव्या औषधयो लताः ॥
नाना वर्णाः बहुविधा नाना सिद्धिप्रदायकाः ।

भावार्थ यह है कि सृष्टिकी आदिमें पुरुष एवं प्रकृतिके पारस्परिक आलिंगन रूप संघर्ष कालमें जो शिव वीर्य स्खलित हुआ। तब वीर्यका प्रवाह रूप पारदका जिन जिन पाषाण शिलाओंसे वेध हुआ, वही रत्न रूप हो गया। पश्चात् उसी के प्रभावसे स्वर्ण आदि धातुऐं पैदा हुई, फिर अनेक प्रकारके अनेक वर्णों वाली दिव्य औषधियां व लतायें उत्पन्न हुईं। इन आनन्द कन्दके श्लोकोंसे हमारे कथनकी पुष्टि हो जाती है कि

(पृष्ठ ४८२ का शेष)

इगलैण्डमें सन्तति-निरोध की मशीन

(लेखक—पं० ठाकुरदत्त शर्मा वैद्य, अमृतधारा देहरादून)

यूरोप और अमेरिका मशीनोंका देश है। कोई काम हो उसके लिए तुरन्त मशीन तैयार। मुझे याद है। पिछली बार इटलीमें एक घरेलू शिल्पशाला देखने गये तो वहां छात्राएं हाथसे कशीदाकारी करके रूमाल, मेजपोश आदि बना रही थीं। हाथसे बनी शिल्पकी वस्तुको लोग उपहारके रूपमें अधिक मूल्य देकर भी ले जाते हैं। हमारे साथ दो अमेरिका वासी थे। देखकर कहने लगे, व्यर्थमें कितना समय गंवा रहे हैं। मशीनसे यही काम एक घण्टेमें हो सकता है, जिसके लिए दो तीन दिन लगा देंगी।

सड़कोंमें ईंटे उखाड़नेके लिए गैंती लेकर एक श्रमिक दिन भरमें थोड़ासा भाग खालीकर सकता है। परन्तु लन्दनमें एक मशीन मिनटोंमें ईंटें और पत्थर उखाड़-उखाड़कर फैंकती जाती थीं।

ऐसा कौनसा कार्य है जिसके लिए पाश्चात्य देशवासी झटपट कोई मशीन न बना लेते हों। मैंने सुना कि किसीने एक भारतीय हलवाईको जलेबियां तलते देखा तो उसके लिए भी एक मशीन बन गयी, जो घूम घूमकर जलेबियां बनाती जाती है।

एक विज्ञापन पढ़कर तो मैं चकित रह गया। सन्तति निरोधके निर्णयार्थ भी एक मशीन बन गयी है। इसका नाम है (Conception Days Indicator) अर्थात् गर्भस्थितिके दिनोंको प्रकट करने वाली मशीन। इसके सिद्धान्त शास्त्री हैं जापान और आस्ट्रेलियाके एक एक डाक्टर। यह स्विट्जरलैण्ड में निर्मित हुई है, लन्दनमें इसके एजेण्ट हैं। सी० डी० इण्डीकेटर्ज लि० ४ एवरीरोड लण्डन डब्ल्यू० आई० मूल्य लगभग ४ पौण्ड रखा गया है। अब संक्षेपमें इसका सिद्धान्त सुनिये। स्त्रियोंकी गर्भ स्थितिके लिए कुछ दिन निश्चित होते हैं। गत कुछ मासोंके मासिक धर्मोंके आरम्भ होनेके दिवस गिनकर इस मशीनको तदनुसार ठीककर लिया जाता है और फिर जब रजोदर्शन हो तो उस तारीखपर मशीनको घुमा दिया जाता है। ऐसा करनेसे वे दिन अथवा तारीखें एक भागपर प्रगट हो जाती हैं। जिनमें वह स्त्री गर्भवती हो सकती है। बस उन दिनों अथवा तारीखोंको छोड़ देनेसे सन्तति निरोध सम्भव हो जाता है। वे कहते हैं कि उपर्युक्त मशीन कभी असफल नहीं होती। आगे ईश्वर जाने।

-- रत्न और उनका उपयोग --

(पृष्ठ ४८० का शेष)

धातुओंकी अपेक्षाकृत रत्नोंकी शक्ति विशेष है। सृष्टि में मानवकी उत्पत्ति कालसे ही रत्नोंका उपयोग होता चला आ रहा है। रत्नोंकी उत्पत्ति ब्रह्मांडकी उत्पत्ति के साथ हुई, यह निश्चित है। अलग अलग प्रकारके रत्नोंमें अलग अलग विश्व ज्योतियां सन्निहित हैं। सारा विश्व सात प्रकारकी ज्योतियोंसे ओत प्रोत है। ईश्वरके प्रमुख नेत्र रूपसे विराजमान् भगवान् भास्कर में ये ७ ज्योतियां हर समय हर अवस्थामें व्यवस्थित रहती हैं। इन्द्र धनुषमें जो आप ७ प्रकारके रंग देखते हैं; वह भगवान सूर्यकी ही किरणोंका प्रति बिम्ब रूप है, जो कि जल भरे मेघोंपर गिर कर ७ रंगों वाला इन्द्र धनुष बना देता है। चांदमें, तारोंमें अथवा प्रमुख सात ग्रहोंमें ये ही ७ रंग वाली विश्वज्योतियां विद्यमान हैं। ये ज्योतियां सर्व शक्तिमान ईश्वरके शरीर (चाहे वह किसी भी रूप है) से प्रादुर्भूत हुई हैं। अतः ये भी व्यापक शक्तिसे परिपूर्ण हैं। ये ही सातों ज्योतियां भिन्न भिन्न रत्नोंमें भी भरी हैं। रत्नोंकी ज्योतियां अक्षुण्ण हैं। रत्नोंकी रत्नताका अभाव या एकान्त विनाश होने पर ही उनमें स्थित ज्योतियां भी नष्ट हो सकती है, अन्यथा नष्ट नहीं होती। रत्न एवं रत्नोंकी ज्योतियां पात्रकी अपेक्षा रखती हुई ही अपनी शक्ति का सफल प्रदर्शन करती हैं। यह विषय ज्योतिष शास्त्रसे घनिष्ट संबंध रखता है। ग्रहानुसार रत्नोंको धारण करनेसे वे रत्न ज्योतियां उत्तम प्रभाव एवं फल दायिनी होती हैं और विपरीत रत्नोंके धारण करने पर फल भी अनिष्टकारी ही होता है। तथैव आयुर्वेदीय चिकित्सा शास्त्र भी इन रत्नों और उनकी ज्योतियों के द्वाराकी जाने वाली चिकित्सासे घनिष्ट संबंध रखता है। यहां हम आपके सामने रत्न धारण तथा रत्नोंकी भस्मके सेवन जन्य सफल परिणाम व प्रभावके २ उदाहरण पेश करते हैं —

१-हेमराज महाजन अपने बाल्यकाल एवं प्रारम्भिक जीवनमें निम्नस्तर एवं असंतोष प्रद आर्थिक स्थिति वाला व्यक्ति था। उस समय ग्रहस्थ पालन संबंधी अनेक कठिनाइयां घिरी रहती थी। दिनभर परिश्रम करते हुये नौकरी या मुनीमात करके भी अपना जीवन संतोषप्रद नहीं बिता सकता था। अपनी भाग्य रेखा या जन्मपत्री एक अनुभवी विद्वान ज्योतिषीको बतानेपर ज्योतिषीने यह निर्णय दिया कि आपको जन्म स्थानमें शनि है या शनिकी दशा है। आप यदि नीलम धारण करें तो आपको शनिकी दशा अनुकूल हो जायगी। उस व्यक्तिने उत्तम दिनमें अंगूठी बनवाकर उसमें नीलम रखवा लिया और वह उसे अंगुलीमें पहनता रहा। धीरे-धीरे उसकी घरकी स्थितिमें अच्छा परिवर्त्तन होता रहा। घरका व्यवसाय प्रारंभ किया। नौकरी गुलामीसे मुक्त हो गया। जिस व्यापारमें हाथ डालें, उसीमें उचित मुनाफा मिलने लगा। कुछ उद्यम और कुछ भाग्य। दोनोंने शक्ति लगाई, पौबारे पच्चीस होते गये। औरत भी शीलवती लक्ष्मी मिल गई। संतानका भरपूर सुख है। दुकानें और कई आलीशान मकान बनवा लिये। बच्चोंको भी पर्याप्त शिक्षित बना दिया। उसका कथन है कि कदाचित न्यायालय आदिमें जब मैं इस अंगूठीको पहने नहीं होता हूँ तो परिणाम मेरे विपरीत जाता है और इसको पहिने हुये जानेपर विपरीत जाने वाले वाद भी मेरे अनुकूल हो जाते हैं।

खैर यह तो हुआ रत्नमणियों का ज्योतिष शास्त्रानुसार प्रभाव। अब औषधिरूपसे प्रयुक्त रत्नमणियोंकी भस्म पिष्टियोंसे अनेक रोगोंकी उत्तम स्वास्थ्य लाभ होनेके प्राप्त हुये अनुभव बतलाते हैं। प्रायः सभी प्रकारके बहुमूल्य व अल्प मूल्यवाले रत्न हीरा, माणिक, मोती, पुखराज, पन्ना, प्रवाल, तृणकान्त, वैक्रान्त आदि रत्न वैद्योंके सदा व्यवहार्य हो रहे हैं। जिनका उल्लेख अगले अंकमें किया जायगा।

राजस्थानमें आयुर्वेदके प्रमुख उपासक

स्वामी श्री कृष्णानंदजी

(लेखक—भानुशंकर एन० मेहता)

(अनुवादक—नरहरिप्रसाद त्रिवेदी)
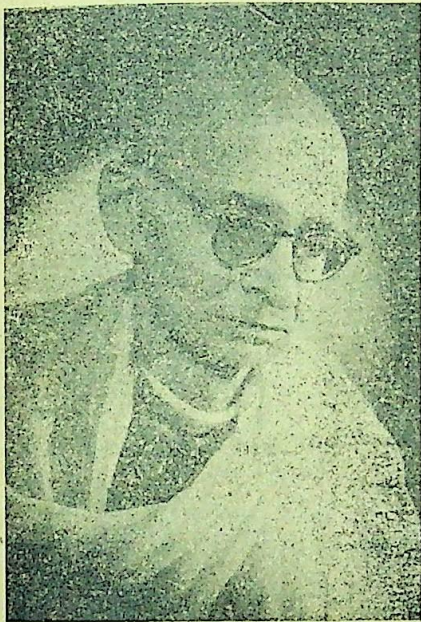
प्राचीन कालसे भारत की प्राधान्य संपत्ति उनकी संतोंही है प्रत्येक युगके संतोंने देशके एक एक क्षेत्र में सर्वांगी विकास द्वारा अनेक आक्रमणके बीच रह कर भारतीय संस्कृति का निर्माण किया है। प्रत्येक युगके अनेक संतोंने मानव जीवनकी समृद्धिके लिये तपश्चर्या की है। जिनका फल इस आर्य संस्कृतिका भव्य इतिहास और परंपरागत मानसिक भावनाओंके कारण आज भी नागरिक उनके नेताके पास त्यागी और साधू जीवनवर्ग अपेक्षा रखते हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधीने भी साधु जीवन अपना के भारतीय राष्ट्रीयताकी ज्योति जगाई.गुजराती साहित्यमें भिक्षु अखण्डानन्दजीकी सेवा आज भी इसी वेगसे प्रगति कर रही है। भिक्षु अखण्डानन्दजीके समकालीन एक गुजराती संतने गुजरातके अतिरिक्त राजस्थानको उच्च वर्ग तपश्चर्याका क्षेत्र बनाया। आज के तपश्चर्याका फल राजस्थानको मिल रहा है वो संत ही पुज्य स्वामी श्री कृष्णानन्दजी महाराज है। पूर्वाश्रम के गुजराती संत भिक्षु अखंडानंदजीके समकालीन और सहकार्यकर थे। आजसे तीस वर्ष पूर्व वे अजमेर जीलाके गांव कालेड़ा की जिसको कालेड़ा-बोगला कहा जाता था। वहां आकर उन्होंने आयुर्वेद विज्ञान के विकास और इसके द्वारा जनसेवा करनेके उद्देश्यसे कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवनकी स्थापना की।

तीस वर्ष बाद यह संस्था राजस्थान की एक विशिष्ट संस्था बनी है। प्रत्येक कार्यमें उन्होंने भव्य सिद्धि प्राप्त की है।

पुज्य स्वामी श्री कृष्णानन्दजी अत्यंत वृद्ध है किंतु उनकी कार्य शक्ति आज किसी नव युवकको शरमा देवे वैसी है। प्रातःकालसे रात्रितक सतत् कार्य करते हुये कभी भी श्रमित नहीं हुये, जिनसे आज हिन्दी साहित्यको उन्होंने अनेक अनमोल ग्रन्थोंकी भेंट दी है। संस्थाका एक प्राधान्य कार्य और साहित्य सेवा है। तीस वर्षमें लगभग २९ ग्रन्थ प्रकाशित हुवे जिनका बड़ा हिस्सा पूज्य स्वामीजी महाराजके ज्ञान की ही प्रसादी है।

संस्थाका प्रथम और एक अग्रगण्य प्रकाशन वो रसतन्त्रसार यह पुस्तक इनकी विशाल सामग्री स्पष्ट विवेचन, और सरल शैलीकी वजहसे इतना प्रसिद्ध हुवा है कि आजतक जिनका आठ संस्करण और १८००० प्रति प्रसिद्ध होकर बनारस आयुर्वेदिक कालेजमें आखरी वर्षमें पाठ्यपुस्तक मान्य हुवा है।

रसतन्त्रसारकी एक विशिष्टता ग्रन्थके अन्तमें दी हुई है। शीघ्र सन्दर्भके लिये रोग और औषध सूची है। कोई भी वाचक इस ग्रन्थके अन्दाज ६०० प्रयोगों मेंसे उनके आवश्यकतानुसार योग चन्द मिनटोंमें प्राप्त कर सकते हैं। इस ग्रन्थका गुजराती अनुवाद भी हुवा है, गुजरातके प्रत्येक अभ्यासी वैद्यके पास यह ग्रंथ हिन्दी या गुजराती भाषामें दिखनेमें आता है।

और इससे भी एक बड़ी विशिष्टता तो यह है कि इस ग्रन्थमें दी हुई पद्धति और योगानुसार ही सभी औषधियां इस संस्थामें तैयारकी जाती है। और छोटे से छोटे पेकिंगमें उपलब्ध होती है, जिससे वैद्योंके अलावा इस ग्रन्थका मनन करने वालोंको भी प्रयोग करनेका दिल होता है। किसी भी प्रयोगकी औषधि फौरन तैयार कर सकते हैं।

इस संस्थाकी महत्त्वका दूसरा प्रकाशन भी नेत्ररोग विज्ञान है। १५) रु० की कीमतका यह बृहत् प्रकाशन आंखके दर्दों और उनकी चिकित्साका एक अपूर्व ग्रंथ है। यह ग्रन्थ हिन्दी वैद्यक साहित्यका एक अनमोल रत्न होते हुवे गुजराती साहित्यके लिये श्रमजनक है। इस पुस्तकके लेखक हैं, कच्छके माजी चीफ मेडिकल ओफिसर डा० जादवजी हंसराज। असली छोटा पुस्तक नेत्ररोग विज्ञान उन्होंने गुजरातीमें लिखा था वो कच्छमेंसे रिटायर्ड होकर बम्बईकी एक अग्रगण्य होस्पिटलमें नेत्र निष्णात होकर कार्य करते थे, वृद्धावस्था तक प्राप्त किया हुआ। विशाल ज्ञान अनुभव एवं नेत्र चिकित्सामें प्राप्त किया हुवा ज्ञान समाजमें देना चाहते थे, पूज्य स्वामी श्री कृष्णानन्दजीने उनके संकल्प को सिद्ध किया और हिन्दी साहित्यको यह अनमोल ग्रन्थ मिला। हां यादवजी भाईने तो असली यह ग्रन्थ गुजरातीमें लिखा उनका हिन्दी अनुवाद करनेका कार्य इस लेखके लेखकने स्वीकार किया डा० जादवजी भाई उनके जीवनका अंतकाल नजदीक देख रहे थे और जीवन समाप्त हो इसके पहले ग्रन्थ तैयार हो वैसी उनकी हार्दिक इच्छा थी, किन्तु शारीरिक अवस्थाके कारण यह कार्य रख छोड़ा था। हिन्दी भाषा में यह ग्रन्थ प्रसिद्ध है। यदि गुजरातीमें प्रसिद्ध हो तो आज भी गुजराती वैद्यक साहित्यमें एक अमूल्य ग्रन्थकी वृद्धि हो सके। कोई संस्था या आयुर्वेद प्रेमी ही इतने बड़े ग्रन्थके लिये साहस कर सकें।

कृष्णगोपाल संस्थाके तमाम ग्रन्थोंने काफी प्रचार पाया है और संस्थाका खुदका प्रेस भी है। 'स्वास्थ्य' नामका एक वैद्यक मासिक भी संस्था निकालती है।

साहित्य विभागके साथ औषधियां बनानेका विभाग भी आज अच्छी तरह चल रहा है जिसमें रसतन्त्रसारके और अन्य अनेक प्रयोगों पुज्य स्वामी जी महाराजकी निजी देखरेखके नीचे शुद्ध शास्त्रोक्त रूपसे तैयार होता है, जिनकी विक्रीका तमाम मुनाफा धर्मादा फण्डमें जाता है। राजस्थान, उत्तर प्रदेशमें उन औषधियोंका काफी प्रचार है। गुजरातके वैद्यों संस्था द्वारा औषधियां मंगवाकर श्रद्धा पूर्वक औषधोपचार करते हैं, किन्तु सामान्य जनतामें उनका प्रचार कम है। अभी अभी सिर्फ भरुंचमें जुना बजारमें कोऽरुक स्टोर्सने, संस्थाका विक्रीकेन्द्र लिया है, एवं बड़ोदामें भी इस तरह विक्रीकेन्द्र शुरू किया है। इसके अतिरिक्त गुजरातमें प्रचार कम है।

रसशास्त्रमें भी इस संस्थाने भागीरथ प्रयास शुरू किया है। रसशास्त्र आयुर्वेदका एक महत्वका अंग है। भारतीय रसशास्त्र काफी आगे बढा हुवा था। पूज्य स्वामीजीने अभी थोड़े ही समयसे एक संशोधन केन्द्र शुरू किया है। दो लाख रुपयोंसे ज्यादा खर्च करके पारदकी अनेक दुष्कर और गुप्त क्रियाएं इस संस्थाने सिद्ध की है, और उनके अनुसंधानमें पिछले वर्ष एक अखिल भारत पारद अनुसंधान सम्मेलनकी योजना इस संस्थाके श्रमसे संस्था द्वारा मिला था। यह संशोधन विभाग अनेक दिशाओंमें संशोधन कार्य कर रहा है।

केवल ज्ञान विज्ञान ही इस संस्थाका आदर्श नहीं है। सेवा इसका मुख्य उद्देश्य है। आज पाश्चात्य

(शेष पृष्ठ ४८६ पर देखें)

श्रीमान् महर्षि आत्रेय ने शरीरको नगरीकी उपमा देकर सम्हालनेका निम्न शब्दोंमें लिखा है—

नगरी नगरस्येव रथस्येव रथी यथा।
स्वशरीरस्य मेधावी कृत्येष्ववहितो भवेत्॥

जिस तरह नगरपति नगरीके भीतर दुष्टजनसे होने वाली पीड़ाके निवारणार्थ तथा सार्वजनिक स्वास्थ्यकी रक्षार्थ गंदगीके निवारणार्थ सावधान रहता है। अर्थात् बाहरसे शत्रुका आक्रमण न होने देनेके लिए तथा नगरीको धनधान्य संपन्न बनाये रखनेके लिये राजा सम्हालता रहता है।

तथा रथी (सारथी) रथको बाहरकी ओरसे गड्ढेमें गिर जाना, गलत रास्ते पर चला जाना आदि विघ्न न आने देनेके लिए एवं अश्वोंको स्वस्थ, सबल और स्फूर्तिवान बनाये रखनेके लिए सम्हालता रहता है। वैसे ही बुद्धिमान मनुष्यको चाहिए कि अन्तर-बाह्य दोनों ओरसे सम्हालने (दुष्ट वायुसे बचने, संयम रखने, पथ्य पालन करने तथा दिन चर्याको व्यवस्थित बनाये रखने) के लिए लक्ष्य देते रहना चाहिए।

जिस तरह मिलोंकी चिमनीसे धुआं निकल कर वायु मण्डल दूषित होता रहता है, मानव समाज और पशुपक्षियोंके आवागमनसे चारों ओर कुडा-कचरा और गंदगी फैलती रहती है; वैसे ही देह रूप नगरीमें श्वासोच्छ्वासका आवागमन निरंतर सतत चालू रहने, विभिन्न यन्त्रोंकी न्यूनाधिक मात्रामें क्रिया होते रहना, उनमें बार-बार प्रतिबन्ध उपस्थित होना आदि कारणों से रस, रक्त, मांस आदि संस्थानमें मलसंचय होता है तथा पचनेन्द्रिय संस्थान तो आम, मल, विष, दूषित वायु, कृमि, कीटाणु और विजातीय द्रव्य संचयके लिए सुप्रसिद्ध है। इन सबको स्वच्छ रखनेके लिए निसर्ग ने कई योजनायें बनाई भी हैं। स्वेद परिस्राव, श्वसन क्रियासे शोधन, मल-मूत्र-दूषित वायुका परित्याग तथा आम विषको जलानेकी क्रिया समय-समय होती रहती है। अतः संग्रह सरलतासे नहीं बढ़ता। किन्तु अपथ्य सेवन, मल-मूत्र अधोवायुके वेगको रोकना, मानसिक चिन्ता, आहार-विहारमें अनियमितता, ऋतु परिवर्तन आदि कारणोंसे संग्रह हो ही जाता है, उसे दूर करके विशुद्धि लाने तथा स्वास्थ्यका संरक्षण करने के लिए बाहरसे सहायता पहुँचानी पड़ती है। लङ्घन करना पड़ता है तथा जीवन संयमित बनाना पड़ता है यदि सम्हालनेमें असावधानता रखी, लापरवाही की, तो अनिच्छा वश रोग रूप शत्रुका आक्रमण हो जाता है। अतः बार-बार लक्ष्य देते रहना चाहिए।

× × × ×

विदुरजीने सम्राट् धृतराष्ट्रको उपदेश दिया है। उसे विदुर नीति कहते हैं। उसमें आता है कि:—

काम-क्रोधौ लोभ-मोहौ देहे तिष्ठन्ति तस्कराः।
हरन्ति ज्ञानरत्नानि तस्माज्जागृहि जागृहि॥

इस देहरूप नगरीके भीतर ४ चोर रहते हैं, काम, क्रोध, लोभ और मोह। अतः जागते रहें, अन्यथा ज्ञान रूपी रत्नों (विवेक, विनय, सदाचार आदि) की चोरी कर जायेंगे।

× × × ×

पुरुषाः बहवो राजन् सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥

हे राजन् ! संसारमें बहुत मनुष्य सतत मधुरभाषी हैं; किन्तु पथ्य हो चाहे अप्रिय हो, उसे कहने और सुनने वाले कम होते हैं।

× × × ×

आपदां कथितः पन्था इन्द्रियाणाम संयमः।
तज्जयः संपदा मार्गों येनेष्टं तेन गम्यताम्॥

इन्द्रियोंका असंयम रखना, बिना विचार किये विचारमें आया वह किया, यह आपत्तिको निमन्त्रण देनेका मार्ग है। उस पर विजय प्राप्त करना, वह सम्पत्ति का मार्ग है। अब जो इष्ट हो, उस मार्गसे अनुगमन करें।

तपो मूल मिदं सर्वं यन्मां पृच्छति पाण्डव।
तदिन्द्रियाणि संयम्य तपो भवति नान्यथा॥

हे पाण्डव ! मुझे जो पूछते हो, कल्याण चाहते हो, तो उन सबका मूल तप है। इन्द्रियोंका संयम रखने से ही तप होता है, अन्य मार्ग नहीं है।

विहितस्या ननुष्ठा नान्निन्दितस्य च सेवनात्।
अनिग्रहाच्चेन्द्रियाणां नरः पतनमृच्छति॥

विहितका अनुष्ठान नहीं करना और निंदित पथ का सेवन करना तथा इन्द्रियोंका निग्रह नहीं करना, इन कारणोंसे मनुष्यका अधः पतन होता है।

राजस्थानमें आयुर्वेदके प्रमुख उपासक स्वामी श्री कृष्णानन्दजी

(पृष्ठ ४८४ का शेष)

चिकित्सा पद्धतिने, भारतीय स्वास्थ्यने अकल्पित नुकसान किया है। प्रचारके अद्यतन साधनों द्वारा रोज रोज बदलती पेटेन्ट औषधियोंका वपराश बहुत बढा है। और उनकी तरफ सरकारकी अन्य बेदरकारी रखती है। जिससे राष्ट्रीय स्वास्थ्यपर जो असर हुआ है वो कागजपर अंक देकर साबित नहीं होती। दीर्घ जीवनका अंक पचास वर्षसे पेतीस वर्षपर पहुँचा है। यह हकीकत लक्षमें रखकर वेतन परिषदने पेन्शनरी के लिये जो फैसला दिया है, यही इनका सचोट पुरावा है।

आयुर्वेदीय शास्त्रसिद्ध औषधियों उपचारके अतिरिक्त आकर्षक विज्ञापन और साहित्यकी ओर आकर्षित होकर बिना मेहनत यश प्राप्त करने वाले चिकित्सकों और इनको वेग देती राष्ट्रीय सरकार ये दोनों ही उनके लिये एक सरखें उत्तरदायित्व है।

जब देशकी चारों ओर दुश्मनोंके रणदुंदभी बज रही हो तब सुदृढ और युद्धकी सफलताका सामना करके विजयी बने। वैसा यौवनधर बिना किसी योजना कल्याणकारी नहीं होता। यह हकीकत जितनी जल्दी समझें उतनी ही लाभप्रद है।

पूज्य स्वामीजी द्वारा संचालित इस संस्थाका एक सुसज्जित आयुर्वेदिक रूग्णालय भी चलता है। और शास्त्रीय आयुर्वेदिक चिकित्सा द्वारा उत्तर भारतमें खूब प्रतिष्ठा प्राप्तकी है।

इस संस्थाकी सबसे बड़ी सिद्धि तो यह है कि आज कालेड़ा गांव जो कालेड़ा-बोगला कहा जाता था वो आज पूज्य स्वामीजी महाराजके नामसे कालेड़ा-कृष्णगोपालसे प्रसिद्ध हुवा है।

यह उत्तर भारतमें एक गुजराती संतका सेवाधाम जिनकी विशिष्ठ रीतिसे आयुर्वेदकी और उनके द्वारा देशकी सेवा कार्य हो रहा है। यह गुजरात के लिये शोभस्पद और गर्वका विषय है।

आयुर्वेद की सर्व प्रथम औषधी पारद

[लेखक—श्री रामकुमार शर्मा (बोहर)]

वर्णन—पारद भारतीय चिकित्सा शास्त्रमें सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है। इसके मिश्रणसे आयुर्वेदके अन्दर अत्यन्त प्रभावशाली और तत्काल प्रभाव करने वाले रस तैयार किये जाते हैं। संक्षेपमें यों कहा जा सकता है कि अगर इसको भारतीय चिकित्साशास्त्र मेंसे अलग कर दिया जाय तो उसका आधा महत्त्व नष्ट हो जाता है। इसलिए ऐसी उपयोगी वस्तुके विषयमें यहां वर्णन करना बहुत उपयोगी है।

पारदके नाम—पारद, रसधातु, रसेन्द्र, चपल, मृत्युनाशक, दिव्य रस, पारा, सूत, हरज, सूतक, रस और मिश्रक नामसे भारतके अन्दर इसे पुकारते हैं।

पारदकी उत्पत्ति—पारदकी उत्पत्तिके विषयमें आयुर्वेदाचार्योंके अनेक मत पाये जाते हैं। इटली और अमेरिकाका मत है कि पारदके कूप मिलते हैं, जिनकी गहराई २४५० फीट तक है, कहीं कहींपर भूगर्भके अन्दर पारद निकालनेके लिये सौ-सौ मील की गहरी खुदाई भी हुई है। रसरत्न समुच्चयके कर्ता ने जहां पांच कूपोंका उल्लेख किया है, वहां इस संसार में १८ कूप (Shafts) पाये गये हैं, जिनसे पारद निकाला जाता है।

अमेरिकाके सुप्रसिद्ध भूगर्भशास्त्री रेंसम और स्पर नामक विद्वानके मतानुसार पारद सदा ज्वालामुखी आग्नेय पाषाणोंसे निकाला जाता है। क्योंकि इसका अस्तित्व अधिकांश अर्वाचीन ज्वालामुखी पाषाणोंमें ही पाया जाता है। इसलिए पता चलता है कि पारद एक खनिज है।

पारदके खनिज—पारद विशेषकर दूसरे यौगिक तत्वोंके द्वारा ही निकाला जाता है, इन यौगिक खनिजोंमें प्रधान खनिज, सिंगरफ, प्रवालाभ, चर्मार, हीरक द्युति, प्राकृतिक पारद इत्यादि खनिजोंमें यह पाया जाता है। इनमेंसे सिंगरफ या हिंगुल ही एक ऐसा खनिज है, जिससे विशेष रूपसे पारद प्राप्त किया जाता है।

पारदके गुण दोष—आयुर्वेदमें भावप्रकाशके मत से पारा मधुर, अम्ल, कटु, तिक्त, कषाय, लवण रसान्वित, स्निग्ध, त्रिदोष नाशक, रसायन, योगवाही, दृष्टि और बलको बढाने वाला होता है। यह सर्वरोग नाशक और विशेष करके कुष्ठ रोग नाशक होता है। जो बीमारी चिकित्सासे ठीक नहीं हो, वह विधि पूर्वक शुद्ध किये हुए पारदके सेवनसे अवश्य ही आरोग्य हो जाता है। पारा देह शुद्धि कारक, सर्व रोग नाशक, पौष्टिक, मृत्युनाशक और दीर्घ जीवी करने वाला होता है। यह राजयक्ष्मा रोगको दूर करता है। और पानके साथ सेवन करनेसे सब रोगों का नाश करता है।

अशुद्ध पारेके दोष—अशुद्ध पारेमें मल, विष, अग्नि, गिरि, चपलता, रांगा तथा शीशा इस प्रकार इसमें सात दोष रहते हैं।

मलके दोषसे मूर्च्छा, विषके दोषसे मृत्यु।
अग्निके दोषसे दाह, गिरिके दोषसे जड़ता॥
चपलताके दोषसे वीर्य नाश, वंग दोषसे कुष्ठ।
और नाग दोषसे नपुंसकता पैदा होती है॥

इस कारण इसको विधि पूर्वक शुद्ध करना चाहिए जो मनुष्य अशुद्ध पारेका सेवन करता है। वह अनेक रोगोंसे पीड़ित होता है।

पारदकी प्रशंसा—निघण्टु रत्नाकरमें लिखा है कि मिट्टीके गुणोंसे अधिक करोड़ गुण सुवर्णके दर्शन करनेमें हैं। सुवर्णके गुणोंसे अधिक करोड़ गुण मणि के दर्शन करनेमें हैं। मणिके गुणोंसे अधिक करोड़ गुण बाजके दर्शन करनेमें हैं। और बाजके गुणोंसे अधिक करोड़ गुण पारेके दर्शन करनेमें हैं। अतः

पारेसे अधिक गुण वाला पदार्थ न हुआ है और न ही होनेकी सम्भावना है।

पारदकी शुद्धि—पारदकी अनेकों औषधियां बनती हैं। इसको सभी प्रयोगमें लाते हैं। ऐलोपथिक, यूनानी आयुर्वेद, होम्योपैथिक आदि सबने किया है। इनमें आयुर्वेदके प्राचीन आचार्योंने इसपर वैज्ञानिक दृष्टिसे विशेष लक्ष्य देकर इसकी अचिन्त्य शक्तिको प्रत्यक्ष कार्यमें परिणित कर दिया। यह वृद्धावस्थासे आई हुई एवं विविध रोगोंसे प्राप्त निर्बलताको दूरकर पुनः युवावस्थाके समान बल, वीर्य, स्फूर्ति आदि प्रदान करता है।

रस, रसायन और धातुवाद तीनोंमें पारद शुद्ध लेनेकी आवश्यकता है। इस हेतुसे आचार्योंने पारदके स्वेदन आदि अठारह संस्कार करनेका विधान किया है। इनमेंसे प्राथमिक आठ संस्कार पारेको विशुद्ध बनानेके निमित्त हैं। शेष १० संस्कार वेध (देह वेध और लोह वेध) करनेके लिए हैं।

पारदके प्रथम आठ संस्कार—स्वेदन, मर्दन, मूर्च्छन, उत्थापन, पातन, रोधन, नियमन और दीपन संस्कार।

(१) स्वेदन संस्कार—रसेन्द्रकल्पद्रुमके मतानुसार कपासके पत्तोंका रस निकालकर उसमें सौंठ, मिर्च और पीपल तीनोंमेंसे प्रत्येक वस्तु पारदका सोलहवां हिस्सा लेकर कपासके पत्तोंके रसमें मिला दें। फिर उस रसको दौलायन्त्रमें भरकर ७ दिन तक पारद का स्वेदन करें।

(२) मर्दन संस्कार—रसरत्नसमुच्चयके मतानुसार घरका धूंआ, ईटका चूरा, दही, गुड़, सेंधानमक और राई इन सब चीजोंमेंसे प्रत्येक वस्तु पारदसे १६ वां भाग लेकर उनमें पारदको तीन दिन तक मर्दन और प्रक्षालन करनेसे पारदका मर्दन संस्कार हो जाता है।

(३) मूर्छन संस्कार—रसेन्द्रमंगलके मतानुसार राई, कपास, मकोय, मेंढ़ासिंगी और काला धतूरा इनमें पारदको घोटकर कांजीमें धोकर धूपमें सुखाना चाहिए। ऐसा सात बार करनेसे मूर्च्छन संस्कार हो जाता है।

(४) उत्थापन संस्कार—रससार नामक ग्रन्थ का कर्ता लिखता है कि जितना मूर्छित पारा हो उससे सोलहवां हिस्सा अमूर्छित पारा उसमें मिला देना चाहिए। फिर उसमें नमक, सुहागा और शहद डाल कर खरलमें मर्दन करना चाहिए। अब इस पिष्टीका दौलायन्त्र द्वारा स्वेदन करनेसे इसका उत्थापन हो जाता है।

(५) पातन संस्कार—त्रिफला, राई, सेंहजना की जड़, त्रिकुटा, नमक, चित्रक और धान्याभ्रक सब पारदके बराबर लेकर खरल करें, इसकी पिष्टी बनने पर तेज अग्निपर पातन करें।

(६) रोधन संस्कार—रससारोद्धार पद्धतिके कर्ता लिखते हैं कि सेंधेनमकके चूर्णके बीचमें पारद को रखकर उसको तीन दिन दौलायन्त्रमें स्वेदन करने से उसकी नपुंसकता दूर होकर वह वीर्यवान हो जाता है।

(७) नियमन संस्कार—एक कपड़ मिट्टी युक्त कांचकी शीशीमें शुद्ध पारदको डालें और फिर इससे १६ वां भाग सुहागा पीसकर उसके ऊपर डाल दें। फिर इसका मुख दृढतासे बन्द करदें। फिर इसे बालुका यन्त्रमें धान्यतुषकी अग्निसे पकायें। इससे पारा अपनी चपलाको छोड़ देता है।

(८) दीपन संस्कार—पारदको क्षार, अम्ल और मद्यमें स्वेदन करलें। फिर एक बिजौरा निम्बू लेकर उसे काटकर उसमें पारदसे सोलहवां भाग नौसादर लेकर भरदें और उसपर पारद भरदें। और फिर इन दोनों टुकड़ोंको उसी प्रकार जोड़कर कपड़ेमें बांधकर दौलायन्त्रमें लटकाकर कांजीमें २१ बार स्वेदन करने से पारदका दीपन संस्कार होता है।

नोट—निम्बुको हर बार बदलते रहें। हिंगुलसे प्राप्त पारा भी शुद्ध होता है। इति शम्

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालयके सेवा कार्यका सिंहावलोकन

(सन् १९३० ई० से ता० १५-३-१९६० ई० तक)

इस धर्मार्थ संस्था की स्थापना सन् १९३० में हुई थी, आज इस संस्था को सुचारु रूपसे चलते हुए पूरे ३० वर्ष होते हैं। इस कालमें जो संस्थाके कार्योंमें उत्थान एवं प्रगति हुई और होरही है। जैसा स्मरणमें आया है, दर्शा रहा हूँ। भ्रान्तिवश वर्षांकमें भूल रही हो, यह सम्हालते हुए भी मर्यादित बुद्धि अथवा प्रमाद वश अंक दर्शानेमें भूल रह गई हो, यह स्वाभाविक है। उसके लिए करबद्ध क्षमा-याचना करते हुए वृतान्त लिख रहा हूँ।

१९३० से १९३८

इस औषधालय की स्थापना सन् १९३० में हुई, और सन् १९३८ तक इस औषधालयके संचालन का पूरा भार श्री ठाकुर नाथूसिंहजी साहब ने ही उठाया था, समय समय पर पूज्य स्वामीजी महाराज द्वारा उचित परामर्श प्राप्त होता ही रहता था। श्री ठाकुर साहबका मुख्य लक्ष्य औषधालय संचालन करने पर ही बना रहा था। भविष्यमें चल कर औषधालय इतना विशाल रूप धारण करेगा, यह भावना दिलमें नहीं आई थी। सेवा भावसे संचालन किया, और निःसहाय गरीब जनता को औषध दान देकर उचित चिकित्सा कार्य स्वयं ठाकुर साहब निःस्वार्थ वश करते रहे। सन् १९३२ में पूज्य स्वामीजी महाराजने ठाकुर साहबका इस और लक्ष्य नहीं मानकर स्वयंने संचालन की ओर ध्यान लगाकर अपने करकमलों द्वारा कठोर परिश्रम करके उसी समय रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह ग्रन्थका प्रथम भाग प्रकाशित करके जनता जनार्दन व वैद्यसमाजके सामने प्रस्तुत किया। संस्थाके विकास हेतु यह प्रथम चरण पूज्यवर का था।

१९३८ से १९४८

पूज्य स्वामीजी महाराज एवं ठाकुर साहब, दोनों के पास धन नहीं और लक्ष्य की सिद्धि प्राप्त करनेका संकल्प करके मैदानमें उतरे थे। पूज्य स्वामीजी महाराजने सन् १९०९ में सन्यास धारण किया और हर प्रकार की पूर्ण योगादि क्रियाओंका ज्ञान प्राप्त कर चुकनेपर दृढ़ संकल्प किया कि शेष जीवन अपना जनता की सेवामें बीता देना है, और साथ ही प्रण किया, कि अपनी कीर्ति लोभके वशीभूत न होकर आज दिन तक किसी सभाओं व जनताके किसी भी जलसों में भाग न लेते हुए मात्र मूक रहकर जनता की सेवा करनी है, ऐसा निश्चय किया था और आज तक प्रतीज्ञासह निभाया है। और श्री हरिने यह प्रण निभाने में रक्षा की है और भविष्यमें भी करेंगें ऐसा पूर्ण विश्वास है।

आम जनता सुकीर्ति, संपति और संमान चाहती है, सुकीर्ति, सम्पत्ति और सम्मानके पीछे आज हर एक दौड़ लगा रहे हैं, और दौड़ लगाते समय शास्त्रकारों का निम्न वचन भूल जाते हैं—

अभिमानं सुरापानं, गौरवं घोररौरवम।
प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठा, त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भवेत्॥

इसी हेतु करके नैतिक सिद्धान्तों में शिथिलता लानी पड़ती है। पूज्य स्वामीजी महाराजका आदिसे जो बर्त्ताव मनुष्य मात्रके साथ रहा है, वह अद्वितीय है। दिल किसीका आज तक न दुखाया, यह खूब सम्हाला है। व्यवहार कुशलतामें पूर्ण नीतिज्ञ पाये गये हैं। प्रत्येक कर्मचारियोंके प्रति एकसा मेरा मान कर बर्ताव, कुटुम्ब सदृश बनाया है, "मनसा वाचा कर्मणा" सदैव तक्रमें से निकले हुए नवनीत सम पाये गये। बार बार हानि उठाई पर आज तक व्यवहारमें लेन देन करनेवाले, ग्राहकों, रोगियों अथवा कर्मचारी वर्गके साथ पूर्ण सत्य को बीचमें रखकर ही सदाचार

स्ह निभाते आरहे हैं। इसी विचार को सुदृढ बनाया है। इसी दृढ़ प्रतिज्ञा हेतु करके बार बार हानि ही उठाई है, और उठाते जारहे हैं।

प्रारम्भमें आर्थिक संकटके साथ साथ कई कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा था। कई एक नूतन ग्रन्थों का लेखन क्रमशः श्रीमान् ने किया। कई लिखे जाकर सम्पूर्ण हो चुके, पर प्रकाशन हेतु धन की समस्या सामने आती थी। अब क्या किया जाय, यह विचार उत्पन्न होता रहता था। अन्ततोगत्वा, सन् १९३८ के उत्तरार्धमें बाहरसे रकम उधार रूपसे प्राप्त करके रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रहका संशोधित और परिवर्द्धित द्वितीय संस्करण छपवा ही डाला। फिर साथ ही साथ चिकित्सातत्व प्रदीप प्रथम खण्डका प्रथम संस्करणका भी प्रकाशन करा दिया गया। पुनः रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह प्रथम भागका संशोधित और परिवर्द्धित करके तृतीय संस्करण प्रकाशन करवाना पड़ा था।

ऐसे तो औषध विक्री विभाग सन् १९३२ से चालू कर दिया था। जिसे सन् १९३८ में विशेष निश्चित किया गया। विज्ञापन अथवा प्रचार न करने पर भी अन्य प्रान्तोंसे काफी प्रचुर मात्रामें आर्डर मिलने का श्री गणेशाय नमः हुआ और क्रमशः औषध कृतिमें सत्यताके हेतुवश आर्डरोंमें दिन-प्रति-दिन वृद्धि होती ही गई।

औषध और पुस्तक विक्री इन दो हेतुओंसे १९४५ ई० में संस्थाके पास ५० हजारसे अधिक की सम्पति होगयी थी। फिर ट्रस्ट डीड बनाया जाकर रजिस्टर्ड कराया गया। छोटा ग्राम होनेके कारण, रोगियों को योग्यस्थान निवास गृह न मिलनेके कारणवश उनके कष्टसे प्रेरित होकर पूज्य स्वामीजी महाराजका दिल दयार्द्र हो उठा था और सन् १९४५ ई० के नवेम्बर मासमें अजमेरके माननीय चीफ कमिश्नर साहब श्री शिवदासानी साहब पधारे। उन्होने भी यह न्यूनता जानी। फिर आगे होकर आतुरालयके निर्माणका विचार प्रदर्शित किया। फिर उनके करकमलों द्वारा शिलान्यास करवा दिया गया। चूँके श्री० चीफ कमीश्नर द्वारा लिखित स्वीकृति, इस कार्य को पूरा करने हेतु ७००००) रु० की मिल चुकी थी। इसी कारणको लेकर आतुरालयका निर्माण कार्य प्रारम्भ सन् १९४६ में करा दिया गया, करीब करीब भवनकी दीवारें आधी ऊंचाई तक आयी होगी और सरकारका शासन बदल गया।

सन् १९४८ से १९५४

अंग्रेज सरकार गई और भारत सरकार की स्थापना हुई जबतक भवन आधा बन चुका था और ४०००० से ५०००० रुपये तक आशा ही आशा मात्रमें खर्च हो चुका था। फिर अधिकारियोंसे विदित हुआ कि आतुरालय—निर्माण कार्यमें सरकार की ओरसे सहायता नहीं मिल सकेगी। सांप, छछुन्दर निगलनेके समान स्थिति हुई। आखिर कर्ज प्राप्त करके भवनको तो पूरा करना ही पड़ा, भवन पूर्ण होनेमें ९०००० का खर्च हो गया। जिसमें ७०००० कर्ज लिया गया और २०००० दान प्राप्त करके रकमकी पूर्ति की गई। पर सत्तर हजारका ब्याज ४००० से ३५०० रुपये वार्षिक भरनेका प्रश्न टेढ़ा बनगया था? परम पूज्य स्वामीजी महाराजने बुद्धि स्थिर रखकर पुस्तक प्रकाशन और औषध विक्रीको उत्तेजना दी, बाहर से दान प्राप्त किया और कर्जमें कमी क्रमशः करते गये। कई नये नये प्रकाशन और औषध विक्रीकी सहायता द्वारा सन् १९५४ तक इस ऋणको सर्वांशमें दूर किया। इस प्रकार सन् १९५४ के अन्त तक संस्थाके पास करीब पोणे चार लाख रुपये की सम्पति हो गई थी।

सन् १९५२ से जो पारद अनुसंधान कार्य आचरणमें आचुका था। प्रारम्भमें इस कार्यकी गति अति मन्द थी। यह गति वैसी ही १९५७ के अन्त तक रही इसी हेतु करके उसका कोई परिणाम नहीं आया और न विशेष खर्च ही आया।

१९५४ ई० तक १५ ग्रन्थ प्रकाशित कर दिये गये थे। अन्तिम प्रकाशन सिद्ध परीक्षा पद्धति और चिकित्सा तत्त्व प्रदीपकी जिल्दें सन् १९५५के अन्त तक भी नहीं

बन पायी थी। इधर जनताकी मांगे दिनों दिन बढती जा रही थी, उधर प्रकाशनमें क्रमशः कठिनाईयां आ रही थी। इस प्रकार संस्थाको हर प्रकारसे दिक्कतों का सामना करना पड़ा।

मुद्रण कार्यमें घोर कठिनाई थी फिर भी तारीख १-९-५३ जन्माष्टमीसे स्वास्थ्य मासिकके प्रकाशनका निर्णय किया गया। प्रति मास निश्चित मिति पर मासिक निकलनेमें विघ्न न आ जाय इसके प्रति श्री पं० भगवान स्वरूपजी ने अपनी ओरसे पूर्ण सुविधा प्रदान की और हमें समयपर मासिक निकालनेमें सहायता दी उनके हम हृदयसे कृतज्ञ हैं।

कालचक्र वैदिक प्रेसके कर्मचारियोंपर भी अपना असर कब दर्शा दें। जुटबन्दी होकर कब प्रेस कार्यमें रुकावट आ जाय, यह कल्पना हो रही थी। ऐसा भ्रम होनेपर मासिककी व्यवस्था न बिगड़ जाय, अतः स्वतन्त्र प्रेसकी स्थापना करनेका विचार उत्पन्न हुआ और सन् १९५४ में कृष्णगोपाल मुद्रणालयका श्री गणेश हुआ और शनैः शनैः रकम अधिकाधिक इसमें डाल देनी पड़ी यह रकम बढ़कर इस समय १९६० में ६३०००) रु० की इस विभागमें लागत है।

सन् १९५५ से १९५७

यह काल, विकासकी दृष्टिसे बड़ा महत्वका गुजरा। सन् १९५५ में संस्थाको २५ वर्ष पूर्ण हुए थे। रजत जयन्ती (Silver Jubbillee) मनाना अनिवार्य था, अतएव २१ मई १९५५ ई. को रजत जयन्ती मनाई गई, यह कार्य आदरणीय केन्द्रीय नियोजन, सिंचाई और बिजली मन्त्री श्री गुलजारीलालजी नन्दा द्वारा सुसम्पन्न हुआ।

सन् १९५६ बड़ा महत्वका साबित हुआ और अन्तर्यामी ने पूज्य स्वामी जी महाराजको विदेश पधारनेकी प्रेरणा भेजी। पूर्व अफ्रिकासे पूज्य स्वामी जी महाराजको निमन्त्रण मिला और वे अपने स्वास्थ्य की कुछ भी परवाह न करके शीघ्र संस्थाका भाग्य फल सिद्धि हेतु करने पधारे और वहां पचास हजार रुपयोंकी व्यवस्था हो जाने से, संस्थाको काफी सहारा मिला और उन्नति कार्यमें प्रगति हुई।

जहां संस्थाके सेवा कार्यकी सुवास सर्वत्र विदेश तक पहुँची। इस समय पूज्य स्वामीजी महाराजके सद्प्रयत्नो द्वारा संस्थापर का कर्ज काफी हल्का हो गया था। व्यापारिक दृष्टि मात्रसे व्यापार वृद्धि हेतु शेष कर्ज रखा गया था। सन् १९५७ के अन्त तक १७ पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका था, कईयोंके कई संस्करण हो चुके थे अब ग्रन्थ प्रकाशन एवं मासिक छपाई कार्य निजि प्रेसमें होने लगा था, खर्च बढ़ा किन्तु आय भी साथ साथ बढ़ती जा रही थी।

बिक्री दिनोंदिन बढ़ती जा रही थी आमद विशेष के चिह्न दृष्टि गोचर होरहे थे, क्योंकि, सन् १९५७ ई. की औषध पुस्तक ग्रोस बिक्री १,६९,१५६-३१ की हुई थी ? उस समय आर्थिक सुविधा दृष्टिसे शान्ति प्रतीत होने लगी थी पर भविष्यको कोई नहीं जान सकता उक्त शान्ति कब अशान्तिके रूपमें आजायगी कोई नहीं कह सकता था, भगवतीको स्वीकार नहीं था। विकास कार्य मार्ग पर आगे कदम बढ़ाना है मस्तिष्कपर भूत सवार हो गया था परन्तु १९५७ के अन्त तक यह विचार पलटा खा गया ?

१९५८–१९६०

१९५८ के आरम्भमें पारद अनुसन्धान कार्य (The work of Mercury Research) को तीव्र गति देनेका विचार हुआ और विचारको आचरणमें ला दिया गया ? एकसे सवा वर्ष भीतर काफी सन्तोष प्रद परिणाम मिलते रहे। खर्च भी इस कार्य पर ५००००) रु० हो चुका था। जो कुछ हमने प्राप्त किया एवं अनुभव किया वैद्य समाज और जनताको जानकारी करा देने हेतु १९५९ के मार्च मासमें २७ से २९ तारीख तक वैद्य सम्मेलन योजना की थी। ४०० वैद्योंके समक्ष कार्य विभिन्न रीतिसे प्रत्यक्ष कराया गया था।

यह जो कार्य संस्थाने किया ऋण भार बढ़ाकर

किया था इसी हेतु करके १९५६ के अन्त तक ६५०००) रु० का ऋण हो गया था जो अब तक ज्यों का त्यों सिर पर है।

सन् १९५९ में विक्री विकास हो ऐसा मानकर विभिन्न प्रदेशोंमें विक्री केन्द्रोंकी स्थापना कराई गई। विज्ञापन खर्च बढाया गया। औषध निर्माण गतिमें तेजी लायी गई पर संस्था की शक्ति और आर्थिक स्थितिका पूर्ण ध्यान रखा गया। तारीख ३१ मार्च १९५९ तक एक पूरे वर्षकी ग्रोस विक्री २,०८,००० रु० की थी और सन् १९६० में ३१ मार्चतक सवा तीन लाखसे कहीं ज्यादा पहुँचेगी ऐसी आशा है। हमारा लक्ष्य १९६१ में चार लाखसे ऊपर तक विक्री ले जानेका है।

इस नव वर्ष १९६० के प्रारम्भमें नव्य पेटेन्ट दृष्टि के अनुरूप सिद्ध प्रयोग संग्रहको कार्यान्वित करके हम ग्राम्य जनताके हृदय तलतक पहुँच जानेका सोचा है। अबतक केवल वैद्योंके हृदयतलतक पहुँचनेका प्रयास था जो तो यह लक्ष्य पूर्ण हुआ है। यह योजना पूर्ण रुपेण प्रस्तुत है मात्र आचरणमें निकट भविष्यमें ले आना है। इस कार्यमें १०००० रुपये रोक देनेकी स्वीकृति ट्रस्ट मण्डलसे प्राप्त करली गई है।

आसवारिष्ट जो पहले थे, उन सबको व्यवस्थित कराये गये हैं, सुधार सुधार कर जनताको दिये गये। अब जो नये बनाये जा रहे हैं अत्याधिक मात्रा में, विशेष व्यवस्था सह, विशेष टिकाऊ और पारदर्शक बनाने की व्यवस्था की गई है। इस कार्यमें भी २०००० रुपयेसे अधिक रकम रोक देनेका निर्णय हुआ है।

यह वर्ष संस्थाके लिये अति संघर्ष मय बीतेगा। इसी वर्षमें पारद अनुसंधान कार्य सम्पूर्ण हो जाने की पूर्ण आशा है। आसव-अरिष्ट अधिक से अधिक मात्रा में जनताको दिया जा सकेगा। उत्तम कृति सह पेटेन्ट औषधियां भी प्रदान की जायगी? इस बार हमें संस्था की शक्ति और आर्थिक स्थितिकी दृष्टिसे अधिकतम कार्य करना है। इसी हेतु करके कई आपत्तियों का सामना हमें करना है। श्री हरि हमारे पथ प्रदर्शक हैं। जनताका सहयोग हमें हृदयसे वांछनीय है।

पूज्य स्वामीजी महाराज जो इस संस्थाके प्राण हैं, शारीरिक शक्ति साथ नहीं देने पर भी संस्थाके प्रति रात दिन एक करके अथक परिश्रम कर रहे हैं। अतएव इन दिनों उनका स्वास्थ्य काफी गिर गया है। मानसिक शक्तिको विश्रान्तिकी पूरी पूरी आवश्यता है। प्रकृति अति नाजुक होनेसे, इधरकी गर्मी सहन नहीं कर सकते हैं। थोड़ा समय एकान्तमें बीते और चिन्ता से दूर रहे इस हेतु करके स्वास्थ्य लाभ लेनेके लिये २ या ३ मास हेतु बाहर पधारना चाहते हैं। संस्थाकी आर्थिक स्थितिका चित्र-पट ऊपर दर्शा चुका हूँ। अब उपरोक्त स्थितिमें कैसे कार्य करना, यह सब सरकार, जनता और आप सब हितचिन्तक बन्धुओं, बहनोंके हृदयपर आश्रित है।

मुझे पूर्ण आशा है, आप सब कोईका सहयोग मुझे मिलेगा।

मैंने अब तक पूज्य स्वामीजी महाराज की सेवामें रहते हुए मात्र विहंगावलोकन तो किया है, किन्तु कार्यभार कन्धों पर उठाया नहीं है अब अकस्मात मुझे भार उठाने की आवश्यकता हुई है। यदि अब मैं सेवा कार्यमें आलस्य करूंगा तो संस्था, आयुर्वेद जगत् और देश को पूज्य स्वामीजी महाराज की सेवाओंसे वंचित होना पड़ेगा।

संस्था की स्थिति, नीति, विचार धारा और भावना का यह संक्षिप्त चित्र है। संस्थाका सेवाकार्य कार्य-विवरण (Annual report) में प्रतिवर्ष प्रकाशित होता ही है। अतः इस लेखमें नहीं दर्शाया गया है।

विनीत—

कालेड़ा-कृष्णगोपाल
१५ मार्च १९६०

मन्त्री ट्रस्ट मण्डल
कृष्ण-गोपाल आयुर्वेदिक
धर्मार्थ औषधालय

— दीर्घ जीवन एवम् —

स्वास्थ्य और आयुर्वेद

(लेखक—धर्मकवि पं० ईश्वरदासात्मज यमुनाप्रसाद शर्मा पालीवाल वाशिष्ट वैद्य)

आयुर्वेद शास्त्रमें स्वास्थ्यकी पूर्ण परिभाषा केवल एक ही श्लोकमें करदी गई है।

समदोषः समाग्निश्च समधातु मलक्रियः ।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थ इत्यभिधीयते॥

वात-पित्त कफ अग्नि धातु मल, सब जिनके सम हों निर्दोष।
वही स्वस्थ जिनका प्रसन्न मन, और इन्द्रियोंमें सन्तोष॥

आयुर्वेदके मतानुसार वही व्यक्ति पूरा स्वस्थ (तन्दुरुस्त) है, जिसके शरीरमें वात, पित्त, कफ तीनों बराबर हों, न कोई कम, न अधिक पाचक अग्नि भी मन्द न हों, न अधिक हो। शरीरमें रस, रक्त आदि धातुएं न कम हों, न ज्यादा। मल मूत्र और पसीना आदि भी कम या अधिक न हों। मानसिक और शारीरिक क्रियाएं ठीक ठीक हों। इन सबके साथ सबसे बड़ी बात यह है कि आत्मा, इन्द्रियां तथा मन सदा प्रसन्न रहते हों।

यहां मन एव मनुष्याणां कारण बन्ध मोक्षयोः बन्धन और मोक्षका कारण मन ही है। एवम् प्रसन्नात्मेन्द्रियमना यह उपरोक्त पंक्तियां बहुत महत्वपूर्ण हैं। सभी साधनोंसे सम्पन्न होकर भी जो मनुष्य बनावटी आनन्द पानेकी इच्छा रखता है, वह मानस शास्त्रानुसार दुखी है।

भगवान यादवेन्द्र व्रजचन्द्र नन्दनन्द यशोदा नन्दन श्री कृष्णचन्द अर्जुनसे कहते हैं।

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते काम कारतः ।
न स सिद्धि मवाप्नोति न सुखं न परांगतिम्॥

जो पुरुष शास्त्रकी विधिको त्यागकर अपनी इच्छासे वर्तता है, वह न तो सिद्धिको प्राप्त होता है, न परम गतिको, न सुखको प्राप्त होता है। इसलिये

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्य व्यवस्थितौ ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि ॥२४॥

इससे तेरे लिये इस कर्तव्य और अकर्तव्यकी व्यवस्थामें शास्त्र ही प्रमाण है। ऐसा जानकर तू शास्त्र विधिसे नियत किये हुए कर्मको करनेके लिये योग्य है। अध्याय १६ गीता।

कविकुल भूषण श्री गोस्वामी तुलसीदासजी विनय पत्रिका पद १३६में कहते हैं।

जो तेहि पंथ चलै मन लाई।
तौ हरि काहे न होहि सहाई॥
जो मार्ग श्रुति साधु दिखावै।
तेहि पथ चलत सबै सुख पावै॥

पावै सदा सुख हरि कृपा, संसार आसा तजि रहै।
सपने हुँ नहिं सुख द्वैत दरसन, बात कोटिक को कहै॥
द्विज देव गुरु हरि संत बिनु, संसार पार न पाइये।
यह जानि तुलसीदास त्रास, हरन रमा पति गाइये॥

संसार दीर्घ रोगस्य सुविचार महौषधम्॥

संसार ही महान् भयानक रोग है और उसे दूर करने वाला सुविचार ही महौषध है।

आज हम जिस पाश्चात्य समाजको स्वस्थ और सुखी समझते हैं, वस्तुतः वह सुखी नहीं है। केवल अमेरिकामें चालीस लाख व्यक्ति ऐसे हैं, जो नींदकी औषधि खाये बिना सो नहीं सकते। यह दुःख उनके अप्रसन्नात्मेन्द्रिय मना होनेका प्रत्त्य प्रमाण है। तम्बाखू, चाय, काफी, अफीम, भांग, शराब, कोकीन आदिके प्रचारसे भी यही सिद्ध होता है कि वर्तमान सभ्यताके विकासके साथ साथ मनुष्य समाज बहुत दुखी होता जा रहा है और वह अपने दुखोंको भुलाने के लिए ही इन मादक वस्तुओंका सेवन करता है। क्योंकि चाय और तम्बाखू भी नशा ही है।

मादक वस्तुओंके सेवन करने वाले अक्सर कहा करते हैं कि इनके सेवनसे उनकी तबीयत प्रसन्न रहती

है शरीरमें स्फूर्ति आती है, थकान नहीं रहती, भूख खुलकर लगती है, आदि आदि। किन्तु ये सब बातें भ्रान्त और कल्पित है। नशीली चीजोंके सेवनका सबसे पहला असर मस्तिष्कको शून्य कर देता है। दुश्चिन्ताओंसे ग्रसित, थकित मनुष्यके मस्तिष्कपर जब मादक वस्तुओंके सेवनका प्रभाव होता है तो वह थोड़ी देरके लिए अपनी वास्तविकताको भूल जाता है और इस तरह भूल जाना एक कृत्रिम आनन्दकी सृष्टि उसके सामने कर देता है। वर्तमान सभ्यताके साथ हमारे भारत देशमें हम भारतीयोंके जीवनमें भी दिखावटपन बढ़ गया है। हम देखा देखी ऐसा करते हैं, जिससे अन्ततः दुखी होते हैं। फिर बनावटी उस दुखको भुलानेके लिए और बनावटी प्रसन्नता रखनेके लिए या शोकिया ही नशेकी वस्तुओंका प्रयोगकर बैठते हैं, जो शरीरको बड़ा मंहगा पड़ता है। नशा थोड़ी मात्रामें प्रारम्भ होकर अनिवार्य रूपसे बढ़ता ही जाता है। और फिर छूटता ही नहीं। आर्थिक, सामाजिक और शारीरिक, धार्मिक चारों तरफसे दबा देता है।

मादक पदार्थोंसे न थकान मिटती है, न स्फूर्ति या प्रसन्नता ही आती है, बल्कि इनका सबसे पहला असर दिमागको शून्य कर देता है, जिससे मनुष्य भ्रमित-सा हो जाता है। नशीली चीजोंका प्रभाव स्थायी होता है और रक्तमें एक प्रकारका जहर पैदा हो जाता है, जिससे क्रमशः शरीर अनेक भयंकर रोगोंका केन्द्र बन जाता है।

इस प्रकार इन सबसे दूर रहकर और देखा देखी में न पड़कर अपनी स्थितिमें ही मस्त और मग्न रहना ही सच्ची प्रसन्नता है, अस्तु। महर्षि चरक स्वास्थ्यके आधारका वर्णन करते हैं।

त्रय उपस्तम्भा आहारः स्वप्नो ब्रह्मचर्य मिति।
भोजन निद्रा ब्रह्मचर्य, इन तीन थंभ पर।
सबल, निरोग, शरीर-स्वास्थ्य रहता है निर्भर॥

(च० सू० अ० ११)

शरीरको पूरी तरह सदा तन्दुरुस्त रखनेके लिए, आयुर्वेदके, इस उपर्युक्त निर्देश पर चलना अति हित कर है। स्वस्थ शरीरके लिए केवल तीन ही स्तम्भ हैं। जिस पर आपका आरोग्य टिका रह सकता है। इन तीनों स्तम्भोंको आप ठीक रखें तो कभी आपकी तन्दुरुस्ती बिगड़ नहीं सकती और रोगका आक्रमण नहीं हो सकता। अब हम प्रत्येक स्तम्भ पर विशेद विवेचन करेंगे।

आहार भोजन, खुराक,

पहला स्तम्भ है आहार, अर्थात् सन्तुलित पौष्टिक भोजन, आहारका सरल अर्थ है मुख और नासिका द्वारा किसी चीजको पेटके भीतर पहुँचानेकी क्रिया। इसलिए जल और वायु भी आहार हैं। यहां मुख्य अभिप्राय भोजनसे है, क्योंकि शरीरको अन्नमय कोष कहा गया है। हमारे बुंदेलखण्डी ग्रामीण भाई अब भी मानते हैं कि—

दुध बियारी जे करें, तिन घर वैद्य न जाय।

फिर भी दुर्भाग्य वश भोजनके विषयमें हम लोग सब से अधिक लापरवाह और भ्रान्त हो गए हैं। बाहरी शौकमें खाने पीनेको कम महत्त्व देने लगे हैं। जितना व्यय (हम अनावश्यक रूपसे फैशन, बनावट और टिपटाप पर करते हैं, उतना भोजन पर नहीं करते। रोटी रूखी खायेंगे किन्तु सिनेमा जरूर देखेंगे दूध नहीं पीयेंगे लेकिन तेल, फुलेलसे बालोंको संवारेंगे। साबुन, स्नो, क्रीम, पाउडर, आदि से चेहरे पर चमक लानेमें इतना खर्च अवश्य कर देखेंगे। चाहे कर्जदार ही क्यों न हो जाय। हमारे पूर्वाचार्य कहते हैं।

'ऋणम् कृत्वा घृतम पिबेत्' उसे भुला दिया।

भर पेट भोजन तो नसीब नहीं, फिर दूध घी, कहां से खाए, इस धारणाको भुला दीजिए। देशमें दूध घीकी अब भी कमी नहीं है। बाहरी शौकीनीसे पैसा बचा कर कीमती और चटपटे-खाद्योंकी जगह यह मन्त्र याद रखिये।

दूध और घी साथ, संतुलित पाचक भोजन।
अगमें खोई शक्ति, जुटाता करता पोषन॥

देश काल और ऋतुके नियमानुसार हमारे भिन्न

प्रदेशोंमें जो भिन्न-भिन्न भोजन क्रम हैं, वे योग्य और उचित हैं। केवल इस बात पर हमें ज़ोर देना चाहिए कि हमारे भोजनमें दूध घी की मात्रा अधिक बढ़े। साधारणतः एक मनुष्यको एक सेर दूध या एक छटांक घी नित्य नियमित अनिवार्य भोजनके साथ लेना चाहिए। इसीका मतलब पौष्टिक भोजन है। आयुर्वेद में कहा है।

दूध और घी श्रेष्ठ रसायन पुष्टाई दाता।
दूर भागती मृत्यु बुढ़ापा पास न आता।
क्षीराघृताभ्यासी रसायनानां श्रेष्ठतमम्॥

सबसे अधिक महत्व दूध का है, इस लिए अधिक मात्रामें दूध ही लेना चाहिए। दूध अच्छा न मिले तो छेना मक्खन, मलाई, घीका उपयोग करना चाहिए।

अण्डा भी श्रेष्ठ पौष्टिक खाद्य है। जिन्हें कोई धार्मिक बाधा न हों और जो खाते हों, उन्हें मांस भी यथोचित रूपमें खाना चाहिए। सारांश यह है कि अच्छे स्वास्थ्य और निरोग शरीरके लिए सबसे बड़ा महत्व पौष्टिक भोजनका ही है। भोजनके प्रति सुरुचि रखना चाहिए। आज बाजारमें जो अच्छी और असली चीजें नहीं मिलती, उसका कारण यही है कि अच्छी चीजें खाने की लोगोंने आदत छोड़ दी। यदि अच्छी चीजें खाने वाले अधिक हो तो बाजार वाले भी शुद्ध चीजें बेचनेके लिए बाध्य हो जाये।

जीविकोपार्जनके लिए आजके युगमें हमें अधिक परिश्रम करना पड़ता है। इस परिश्रमसे शरीरकी शक्तियां वाले अंशोंकी कमीहोना स्वाभाविक है। काम करने से हमारे अंगोंपर जो थकान आती है और जो मांस की बोटियां एवं स्नायुएं घिसती टूटती हैं, पौष्टिक भोजन उसकी कमी को तो पूरा करता ही है। साथ ही शरीरको आगे बढ़नेके लिए कुछ शक्ति भी देता है। आगे किसी रोगका आक्रमण होनेपर या अधिक परिश्रमका काम करनेपर, शरीर एक दम टूट न जाये, इसके लिए जरुरी है कि हम रोज रोज होने वाली शक्ति को तो पूरा करते ही रहें कुछ जमा भी करते जाये। और यह नियमित बंधे समय पर पौष्टिक भोजनके द्वारा ही हम कर सकते हैं। यह भोजनका ही तो प्रभाव होता है कि जन्मके समय डेढ़ फीट लम्बा और ढाई सेर वजनका बच्चा मांका दूध पीकर फिर दाल रोटी और दूध घी खाते खाते कालान्तरमें पौने छै फीट लम्बा और पौने दो मन वजनका जवान पट्ठा बन जाता है। गीतामें कहा है अन्नाद्भवन्ति भूतानि। अब आपकी समझमें आया होगा कि शरीरको निरोग रखनेके लिए पहला काम है पौष्टिक संतुलित भोजन। अतः आप निम्न लिखित बातोंकी गांठ बांध लीजिए —

भोजन सम्बन्धी ९ नियम

१. भोजनमें पचने वाले पौष्टिक पदार्थ बढ़ायें।

२. भोजन नित्य नियमसे नियमित समय पर ही करें।

३. न कभी भूखे रहें, न अधिक भोजन करें।

४. भोजन खूब चबाकर धीरे-धीरे करें।

५. थकावटमें भोजन न करो, विश्रामके बाद भोजन करें।

६. पानी या दूध भोजनके एक घंटा पूर्व या ३ घंटा बाद पीयें।

७. अधिक मसालेदार, चरपरे, चटपटे और घी तैलके बाजारू वस्तुओंसे बचें।

८. भोजनके बाद तुरन्त न सोवें।

९. भोजनके बाद दांतोंकी खूब सफाई करें फिर एक घंटा विश्राम करें।

आवश्यक है तीन काम यह, बंधे समय पर होना।
खाना-पीना-शौच-क्रिया, नित सुख-निद्राका सोना॥

आरोग्यार्थ आवश्यक सूचना

१—सूर्यके प्रकाश और ताजी शुद्ध हवाका अधिक से अधिक सेवन करना।

२—अधिक सर्दी और अधिक गर्मीके आक्रमणसे बचते रहना।

३—नियमित स्वच्छ ताजे जलसे स्नान करना।

४—समयानुसार व्यायाम, संयम और विश्राम करना।

५—अस्वस्थ होनेपर विशुद्ध आयुर्वेदीय औषधि आवश्यक पथ्य और अनुभवी वैद्यकी सहायता लेना।

निद्रा अथवा पूर्ण विश्राम

ग्रामोंमें पुराणी कहावत है—

भूख न देखे रुखो भात, नींद न देखे टूटी खाट।

अच्छी नींद प्रकृति की कृपा पूर्ण देन है। जैसे भोजन प्यास और विषय आदिकी इच्छा स्वयं ही होती है, वैसे ही समुचित शारीरिक श्रम एवं मानसिक चिंतन के पश्चात् शरीर और मन स्वयं ही निद्राकी गोदमें गिर जानेको विवश हो जाते हैं।

शरीर एवं मनके पूर्ण विश्रामको ही निद्रा कहा जाता है। विश्रामसे ही शरीरका नव निर्माण होता है काम काजमें थके शरीरको तरो ताजा और बिल्कुल स्वस्थ बना देना निद्राका ही काम है। बहुत उत्तम भोजन और ब्रह्मचर्यका पालन करके भी निद्राके अभाव में कोई स्वस्थ नहीं रह सकता।

बहुत चिन्ता करनेसे मनको फालतू कामोंसे परेशान रखनेके कारण जिनका हाजमा बिगड़ जाता है, उन्हें अच्छी निद्रा नहीं आती। कुछ लोग सिनेमा, क्लब, गप्प गोष्ठियों और अन्य कर्मोंमें अपने को इतने उलझाये रहते हैं कि वे रात्रि जागरणके आदी हो जाते हैं। अस्वाभाविक शयनके कारण नींद नहीं आती, नींद आनेके लिए दवाइयें या नशा (मादक) पदार्थ लेते हैं। परिणामत: उनका मेदा सदाके लिये खराब हो जाता है। ऐसे लोग जल्दी बुड्ढे हो जाते हैं और औषधियोंके सहारे थोड़े दिनों तक ही जी पाते हैं। यह भी पश्चिमकी ही नकल है, जिसके कारण हमारे स्वास्थ्यके इस दूसरे मुख्य स्तम्भकी ऐसी दुर्दशा है। शिक्षित और शहरी जनतामें निद्राके प्रति उपेक्षा बहुत दुःख दायी रूपमें फैली हुई है। उसको दूर करना परमावश्यक है।

समयपर स्वयं आने वाली नींद स्वास्थ्यको बढाने वाली होती है। वही नींद सुख निद्रा कही जाती है। सदाचारी ऐसीको प्राप्त करते हैं। स्वेच्छाचारी नहीं।

ब्रह्मचार्य रते गम्य सुख निस्पृह चेतनः।
निन्द्रा सन्तोष क्षुम्रस्य स्वकालं नातिवर्त्तते ॥
भोग भोग श्रम कर्म वचनमें, नियम संयमी होते हैं।
वही सदाचारी सन्तोषी, सुख निद्रामें सोते हैं ॥

अच्छे स्वास्थ्यके लिये अन्य बातोंके अतिरिक्त निद्रा और विश्राममें भी नियमित होना चाहिए। चिन्ता रहित और शान्त चित्त होकर बन्धे समयपर सोना तथा श्रम रहित तनके साथ अति प्रातःकाल उठकर दैनिक कार्योंमें लगना चाहिए।

३ ब्रह्मचर्य यथार्थ संयम ब्रह्मचर्य रतै प्रीप्यः
सुख निश्चय चेतसः ब्रह्मचर्य हि दीर्घायु
जीवनस्य स्व जीवनः ॥
ब्रह्मचर्य ही बड़ी आयु, पानेका शुभ साधन है।
संयम नियम मृत्युपर, जय करने वाला जीवन है ॥

हमारे स्वास्थ्यका तीसरा और स्वयं सम्पूर्ण महत्व पूर्ण स्तम्भ है। इसपर ही हम विशद विवेचन करेंगे ब्रह्मचर्य। ब्रह्म अर्थात सबसे बड़ा चर्य अर्थात आचरण संसारमें सबसे बड़ा आचरण करने वाला स्वयं ही इन्द्रियोंका गुलाम न होकर उसका मालिक होता।

ब्रह्मचर्य का अर्थ संयम है, जो इन्द्रिय विजयके बिना कदापि संभव नहीं। सब इन्द्रियोंमें जननेन्द्रिय प्रधान है। अतः ब्रह्मचर्यका अर्थ वीर्य रक्षा प्रचलित है। एवं यही यहां उपयुक्त है।

अष्ट मैथुनसे बचना (स्त्री-सम्बन्धी बातें सुनना १ स्त्री सम्बन्धी स्मरण करना, २ स्त्री सम्बन्धी बाते कहना. ३ स्त्री को देखना, ४ स्त्रीसे मिलनेका प्रयत्न करना. ५ स्त्रीको इशारा करना, ६ स्त्रीसे एकान्तमें मिलना, ७ स्त्रीका अङ्ग स्पर्श करना,ये अष्ट मैथुन है।

ब्रह्मचर्य भङ्ग स्त्रीके रजस्वला होनेके दिनसे सोलह रात्रि ऋतुकाल हैं। इनमेंसे पहली चार रात्रियां और ग्यारहवीं तथा तेरहवी रात्री सर्वथा वर्जित है। बाकी दश रात्रियोंमेंसे अमावस्या, अष्टमी, पूर्णिमा, चतुर्दशी, तथा व्रत, उद्यापन या पर्वादिके दिन टालकर बाकी रात्रियोंमेंसे सन्तोनोत्पत्तिके अभिप्रायसे केवल दो ही रात्रि मात्र अपनी विवाहित धर्मपत्नीके साथ जो गृहस्थ सहवास करता है, वह ब्रह्मचारीके समान माना गया है। विवाहितके लिये इससे अधिक स्त्री समागम करना, तथा अन्य तीनों आश्रमोंमें किसी

(शेष पृष्ठ ५१० पर देखें)

पारद अनुसंधान दिग्दर्शन

ले०—श्री नवनीतलाल बी. षण्ड्या. सहायक तन्त्री–"आयुर्वेद विज्ञान" झन्डु फार्मास्यूटिकल वर्क्स लि. बम्बई
अनुवादक—महेन्द्रकुमार शान्तिलाल जोशी, पारद अनुसंधान (कालेड़ा)

गत वर्ष मार्च २७, २८ और २९ सन् १९५९ में (कालेड़ा) कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनकी ओर से पारद अनुसंधान सम्मेलन हुआ था। इस सम्मेलनमें इस संस्था द्वारा किये हुए पारद अनुसंधानमें किए हुए संशोधनका संक्षिप्त परिचय विद्वान वैद्योंको दिया गया था। तदुपरान्त संस्थाकी ओरसे प्रकाशित स्वास्थ्य मासिकके पारद विशेषांक में संशोधकके द्वारा जो प्रकाश डाला गया था, और उनके साथ किए हुए वार्तालापकी जो विचारणीय बातें लगी है वह मैं संक्षिप्त में यहां वर्णन करता हूँ।

इस संस्थामें पारदके संस्कारोंके विशिष्ट ज्ञाता श्री राजवैद्य शान्तिलाल जी प्रा० जोशी कार्यकर रहे हैं।

पारदके विषय पर बहुत सारा साहित्य अपने रस शास्त्रके ग्रन्थोंमें भरा हुआ है। एक भी ग्रन्थमें पारदका पूरा विवरण नहीं है। अलग अलग ग्रन्थोंमें अलग अलग क्रियाएं भिन्न-भिन्न प्रकारसे बताई हैं, अपने विश्वसनीय ग्रन्थोंमें (१) रस हृदय तन्त्र, (२) रसार्णव (३) रस प्रकाश सुधाकर (४) आयुर्वेद प्रकाश (५) रस रत्न समुच्चय (६) रसरत्नाकर (७) रस महोदधि आदि ग्रंथों है। तदुपरान्त द० भारतमें पुराने ग्रंथोंमें से रसोपनिषत् और आनन्द कन्द यह दो पुस्तकें प्रमाण भूत हैं, आयुर्वेदमें इस शास्त्रकी परीभाषा (Symbols) एक भिन्न प्रकारकी है, जिसमें औषधि निर्माण प्रकरणमें जो जो परीभाषाएं बताई हैं उनसे भी यहां कुछ भिन्न है।

पारद-रसको यहां जीव सजीव स्वरूपसे गिना हुआ है, जैसे कि मनुष्यकी देहमें आहार और उनके रसका शरीरमें पचन, मलोत्सर्ग, अजीर्ण, मन्दता, आदि क्रियाएं होती हैं। शरीरकी धातुओंसे अंगकी वृद्धि होती है, शरीरके वर्णका रूपान्तर होता है और आखिरमें बीज और योनि के संयोगसे नई सृष्टि निर्माण होती है, उसी प्रकारसे पारद पर भिन्न-भिन्न प्रकारके संस्कार करनेसे उपरोक्त क्रियाएं होती हैं, और यह सब रसके ग्रन्थोंमें भिन्न-भिन्न स्थानों में पाचन, रंजन मल विमोचन, बीज, वेध आदि क्रियाओं द्वारा बताई है। तर्क संग्रह के आरम्भमें लिखा है कि—

"बालानां सुख बोधाय क्रियते संग्रहो मया"।

बालक न्याय शास्त्र को सरलता पूर्वक ग्रहणकर सकें उसी हेतुसे तर्क संग्रह बनाया है, यहां बालक किसको कहना? उसके प्रत्युत्तरमें शास्त्रकार कहते हैं कि जो व्याकरण शास्त्र पढा हुआ है, वैसा जानकार बालक है, चाहे छोटी उम्र हो या बड़ी हो मगर न्याय शास्त्रमें प्रवेश करने वाले सभी अज्ञानी (अनजान) बालक हैं। इसी प्रकार रस शास्त्रमें प्रवेश करने वाले चाहे आयुर्वेदके बड़े आचार्य क्यों न हों, किन्तु रस शास्त्रकी क्रियाओंका सम्बन्ध है वहां तक वो बालक ही है, रस शास्त्र आयुर्वेदका एक अंग होते हुए भी वह एक पृथक् शास्त्र है। इनके पारिभाषिक शब्द, परीभाषा, (Symbols) सांकेतिक शब्द विधि, क्रियाएं आदिमें भेद है।

रस शास्त्रकी सर्व क्रिया वैज्ञानिक है, थोड़ी-सी भी त्रुटि हो या क्रिया आगे पीछे हो जाय, अग्नि कम ज्यादा मात्रामें दिया जाय तो सभी महेनत व्यर्थ हो

जाती है। इसी लिए शास्त्रकी मर्यादाको पूर्ण ख्याल से सोचे।

पारद संसारमें एक ऐसा माध्यम है कि वो कोई भी धातु, उपधातुकी शक्ति, उसका रंग, स्वरूप आदिको ग्रहण कर लेता है, कारण कि उसकी अवस्था नहीं तो निश्चित (Solid) है और न प्रवाही (Liquid) है। उसमें बीज मिलाके वेध करनेसे पारदका रुपान्तर हो जाता है।

रसायन वाद और धातुवादमें ज्योतसी क्रियाएं और संस्कार समान (Equel) है, और कहीं कहींपर भेद भी है, उसके प्रारम्भमें अष्ट संस्कार है वह क्रमसे करना चाहिये। अब शेष दस संस्कारोंको संख्याकी दृष्टिसे गिनाये हैं, उनके क्रमका ख्याल नहीं रखना चाहिये। पारदके अष्ट संस्कारोंके बाद धातुवादमें ले जानेके लिए जिन जिन अवस्था (Staje)की जरुरत है उसी प्रमाणसे पीछले संस्कारो पारदके उपर करनेमें आते हैं। वर्तमानमें धातुवादके विषय पर उन्नति करना भय प्रद है। इसी लिए वैद्यगण क्रामण और वेध जैसी थोड़ी क्रियाएं छोड़कर रसायन वादकी दिव्य औषधियां तैयार करें, वही आवश्यक है।

धातुवादकी क्रियाएं अनुभवी सद्गुरुके सनिध्य में रहकर करनी चाहिए, सिर्फ शास्त्रका वांचन लेखनसे प्रमाणित होकर क्रिया करनेसे योग्य फल नहीं मिलता है। किन्तु शास्त्रों में जो क्रियाएं दिखाई है वह प्रत्यक्ष (Practical) स्वरूपकी नहीं है, परन्तु कई विषयों में वार्तिकोंके विषयकी है। इसी लिए संस्कारोंकी कार्य पद्धतिके सम्बन्ध में सद्गुरुकी शरणके बिना और कोई रास्ता नहीं है पारदमें संस्कारों का वर्णन प्रत्यक्ष दृष्टिसे कोई भी रसायन शास्त्रीसे अनधिकारी विद्यार्थी यह विद्या न जान सके और इस विद्याका कोई दुरुपयोग न कर सकें। इसी दृष्टिसे लिखा नहीं हैं।

जो पारदके संस्कारों और उनके विशेष द्रव्य शीघ्रतासे निर्माण करना चाहते हैं, वह कदापि दिव्य औषधि निर्माण नहीं कर सकते। क्षार और तेजाब से बनाई हुई भस्में हीन गुण वाली होती हैं। क्योंकि उन द्रव्योंमें वनस्पति या प्राणीज औषधोंकी चेतना शक्ति प्राप्त नहीं होती है।

नये सीखने वाले वैद्योंको रस शास्त्रकी मर्यादाका उल्लंघन नहीं करना चाहिए, एक समय क्रियामें सम्मिलित होनेके पीछे उस विषय पर विशेष विचार करना चाहिए।

धातुओंकी भस्में वारितर बनानी पड़ती हैं, रस कार्यके लिए कई भस्में अर्ध जीवित भी रखनी पड़ती हैं, भस्म वारितर हो या न हो, उसका विशेष महत्त्व नहीं है भस्ममें चेतना शक्ति कितनी आकर्षित हुई है वह मुख्य लक्ष्य है।

वनस्पतिका चेतन सत्त्व, नाग (सीसा Lead) में नागका बंगमें, बंगका ताम्रमें, ताम्रका चांदीमें, चांदी का स्वर्णमें, स्वर्णका पारदमें स्थापित होता है। पारदमें अद्भूत शक्ति है वह वीर्यवान है, उसमें चाहे जितनी रुप, गुणकी शक्ति दाखिल कराकर, पीछे अन्य द्रव्योंमें उनको दाखिल करानेके कर्मको धातुवाद का कर्म कहते हैं।

पारदमें प्राप्त कराई गई विद्युत शक्ति, उपधातुओं के रंग, गुण और वीर्य-बीज यह सभी वेधके समय मिलानेसे (कनिष्ट धातु या पारदमें) अन्य गुण धर्म वाली नूतन श्रेष्ठ धातु स्वर्ण, रौप्य और रत्न बनते हैं, यह प्रयोग सिद्ध बात है।

केवल बंग बीजकी शक्तिसे सारी दुनियां लोह युक्त बन सकती है, उसका दृष्टान्त लंका और द्वारिका था, यह पुराणोंका कथन है।

पारदके कोई भी संस्कारकी क्रिया, बिना परिश्रम, बिना तपश्चर्या, बिना शास्त्र विधि या सद्गुरु शरण बिना प्राप्त नहीं होती है। कई चाहते हैं कि हमें कोई राह पर चलते हुए इस विषयको दे दें, यह दुर्लभ है। पारदके प्रत्येक संस्कारोंमें प्रत्येक क्रियाओंके समय पर नई नई वस्तुओंका अनुभव होता है यदि सद्गुरुके सानिध्य और समाधानके सिवा अप्राप्य है।

पारद विषयके विशेष ज्ञाता श्री नारायण स्वामी कनखल (हरिद्वार)की राय है कि खेचरी जारित पारद के योगसे शब्द वेध, पृथ्वीवेध, पर्वतवेध, स्वर्णवेध,

आदि बनते हैं और उस पारदकी गुटिका बनाके मुंहमें धारण करनेसे मनुष्य अजर अमर हो जाता है। आकाशगामी भी हो सकता है। इसके सिवाय केवल धातुवाद ही नहीं अन्य क्रियाएं भी शास्त्रमें मिलती हैं। इस प्रकारसे तैयार किये हुए पारदको हठ रस कहते हैं। पारदको रज, वीर्य, मल, मूत्र, नाग, वंग और विषोंसे जबरदस्तीसे अग्नि स्थाई करनेमें आता है और ऐसा पारद हठरस कहलाता है। यह खानेमें और रोग निवारणके कार्यमें नहीं आता है। सिर्फ एक नागको ही अग्निस्थाई बना सके तो उनसे सोची हुई क्रियाएं मनुष्य कर सकता है। कालेड़ामें पारदके ऊपर जो जारणा करनेमें आई है वह भूचरी जारणा है। पारदके दिव्य औषध योगसे धातु भस्म अभ्रक, सुवर्ण माक्षिकसत्व आदि द्रव्योंसे सिद्ध करके देह सिद्धयोग्यबनाया है। इसको भूचरी जारणा कहते हैं। द्रुति और रत्नोंकी जारणा युक्त सिद्ध पारद से खेचरी जारणा होती है। पारदको अष्ट संस्कारके पीछे जो दस संस्कार ग्रास मान, चारण, गर्भ द्रुति, बीज निर्माण, बीज जारण, रंजन, सारण, क्रामण वेध ये सब क्रियाएं अति कठिनाई युक्त हैं। उसमें थोड़ी सी भी गलती होवे तो भारी हानि होती है। रसायनके प्रयोगोंमें शास्त्रकारोंने कहा है कि "पूर्व लोहे परीक्षेत ततो देहे प्रयोजयेत्"। प्रथम रसायनकी परीक्षा धातुवादपर करके देखो और जो उसमें सफलता प्राप्त होवे तो उनको शरीरके रसायन गुण युक्त बनानेका उपयोग करें। शरीर निरोगी और अजर अमर बनावें। सिद्धे रसे करिष्यामि निर्दारिद्र्यं गदं जगत्। सिद्ध रस प्राप्त करनेके बाद अखिल विश्वको निर्दरिद्र और निरोगी बनावें। रसहृदयमें कहा है कि

यथा लोहे तथा देहे कर्तव्यं सूतकस्तथा।
समानं कुरुते देवी प्रत्ययं देह लोहयोः॥

इस क्रियामें पारद आदि धातु, उपधातु आदि प्रथम शोधन करना पड़ता है।

धातुओंका शोधन करनेके लिए शास्त्रोंमें कहा है, उनका कारण सिर्फ मल शुद्धिकरनेका ही नहीं है, किन्तु गुणाधानार्थ भी है और इसी लिए उसको संस्कार किया ऐसा कहा जाता है संस्कार ही नाम गुणा निराधानम् जिन वस्तुओंमें एक गुणमेंसे दूसरे गुणका परिवर्तन होना उनको भी संस्कार कहते हैं, उसको विशेष स्पष्ट रीतिसे समझें तो धातुएं संस्कारसे मिश्रण स्वरूप वाली नहीं बनती है। किन्तु एक कम्पाउन्ड (Compound) जैसी नये ही गुण धर्म वाली नई चीज बनती है, पारदके संस्कार करनेसे पारदका-लौकिक नाम भले ही पारद H. G. रक्खें, किन्तु उसमें पारदके सिवा थोड़े कुछ अंशसे दूसरी विशेष गुण धर्म वाली वस्तु भी होती है। धातुओंको शोधन के उपयोगमें आने वाले द्रव्यो छाछ, तैल, गौमूत्र आदि से उस धातुमें चेतन संस्कार आता है। उसमें दूसरी धातुमें प्रवेश करनेकी शक्ति आती है। मारण कर्मसे धातुओंका सिर्फ महीन बुरादा नहीं होता है। किन्तु धातुओंका सेन्द्रिय कल्प बनता है। जो अपने जीवित शरीरमें पाचन होनेके लिए विशेष उपयोगी है।

पारदका नाम शिव वीर्य, शिव बीज भी कहा है, गंधकको पार्वतीका रज मानते हैं। वीर्य और रजके संयोगसे नई सृष्टि पैदा होती है, इस प्रमाणसे पारद और गन्धकके संयोगसे नया ही योग प्राप्त होता है। पारदके बन्धनके लिए गंधक जितना उपयोगी है उतना एक भी द्रव्य नहीं है। यह गन्धक शुद्ध स्वरुपमें होता है, गंधक वायुके स्वरूपमें हो या गंधकद्रुति (गंधकाम्ल) का स्वरुपमें हो कि अन्य उपधातुके उपरस जैसे कि हरिताल (Yellow arsenic) मैनशिल (Redorpiment) माक्षिक (Copper pyrite) हिंगुल (Red sulphide of mercury) आदि स्वरुप होता है इस में से किसी भी स्वरुपका गंधक योग पारदका बन्धन कर सकता है, कई आचार्यने गंधकको पारदमें जारण नहीं करते हैं किन्तु गंधकका तेल डालकर तप्त खरलमें पारदका बन्धन करते हैं, गन्धक जारण युक्त पारदमें अभ्रक सत्वका जारण शीघ्रतासे हो सकता है और अभ्रक सत्वका और माक्षिक सत्वका जारण जो यदि अच्छी तरहसे किया जाय तो पारद पचच्छेदित होता है, वैसे ही अन्य धातुओंका ग्रास करानेसे पारदकी बुभुक्षा दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। पारदको बद्ध

करनेके लिए कितनेक गन्धक बाष्पकी विधि को उपयोगमें लेते हैं, पोटली बनानेकी क्रियामें गधंक बाष्पका उपयोग किया जाता है।

जारण क्रिया—जैसे कि भोजन करनेसे उस भोजन का पचन हो के पोषक अंश शरीरमें चूसा जाता है और मल अंशसे, पसीना (स्वेद), मूत्र और दस्तके स्वरूपमें बाहर निकलता है, वैसे ही पारदमें ग्रास देनेके पहले चारण करनेमें आता है और पीछे गर्भद्रुति होती है और बादमें जारण क्रिया की जाती है, इन क्रियाओं से जो उपधातु सत्व (धातुओंकी भस्म) का ग्रास दिया हो तो उनमेंसे मल भाग पृथक् होता है।

बीड़ याने अनेक प्रकार के क्षार (Acids or Alkali) मिला के बनाया हुआ विशिष्ट प्रकारका योग। पारदमें जारण क्रिया करनेके पीछे यह बीड़के साथ पारदको रख के जारण किये हुए द्रव्यका पचन कराते हैं, इसीलिए सत्वका अंश पारदमें आ जाता है, और मलका अंश पारदमेंसे विभक्त होता है। जो उपधातुके सत्वका ग्रास दिया गया हो तो उसमें से मल भाग पृथक् होता है। बीड़ भावनाके द्रव्यके साथ मिल जाता है। उसमेंसे कोई अंश बाष्प बन कर स्थानान्तरित हो जाता है। जारण क्रिया हो जानेके पीछे पारदका वजन जो पहले था उतना ही मिलेगा। उन्होंने चार प्रकारके बीड़ बनाये हैं उसमें प्रथम तीन क्षार युक्त बीड़ हैं।

अभ्रक ग्रास, स्वर्णमाक्षिक सत्व ग्रास, और स्वर्ण भस्म आदिका ग्रास शास्त्रोक्त विधि से दिया जाता है। जिस बीड़, क्षार या भस्मका ग्रास दिया गया हो उसकी चेतना शक्ति ही पारदमें मिलेगी, स्थूल अंश इसमें नहीं मिलता है।

पारदमें स्वर्णका ग्रास, देनेसे वह पारद बुभुक्षित होता है, ज्यों ज्यों भूख बढती जाती है त्यों त्यों ग्रास का प्रमाण बढाया जाता है। ज्यादा मात्रामें ग्रास दिया गया हो तो पारदको अजीर्ण होता है, अजीर्ण होता है तो बीड़ द्रव्य मिलाके उसका पचन कराना होता है, तदुपरान्त निराहार अवस्था में रखनेसे पचन कराया जाता है। वर्तमानमें जो भ्रामक मान्यता है, कि पारद स्वर्णको पूरा खा जाता है, वह रस शास्त्रकी सच्ची क्रिया का बिना अनुभवसे रची हुई मान्यता है।

पारद को स्वर्ण ग्रास देने के पश्चात्
सग्रासं पंच षड् भागैर्यवक्षारै विमर्दयेत्।
सूतात् षोडशांशेन गन्धेन अष्टांश के नवा॥
ततो विपर्य जम्बीर रसेवा काञ्जी कैथवा।
दोला पाके विधात् व्योदोला यन्त्र मिदं स्मृतम्॥

प्रारम्भ में $\frac{1}{64}$ वां भाग या ३२ वां भाग स्वर्णका ग्रास पारदके साथ मिलाके पीछे १६ वां के अठार वां भाग गन्धक मिलाके कज्जली बनावें, पश्चात् ५ से ६ भाग यवक्षार मिलाके नींबूके रस या काञ्जी (Starch) में तीन दिन घोटें पीछे भोज पत्रमें बान्धके दोला यन्त्रमें तीन दिन तक काञ्जीमें पकावें और बाष्पसे ग्रासका जारण करावें, इसी प्रकार तीन दिन तक ग्रास जीर्ण होवे वहाँ तक पकावें।

सत्व पातन—सत्व पातन याने कोई भी मिश्रित धातुमें से मूल धातु को अलग करने की क्रिया को सत्व पातन की क्रिया कहते हैं, इस क्रियामें ऐसे द्रव्यों को मिलाया जाता है जो मूल धातुका गलन बिन्दु कम करना और उसको शीघ्रतासे पिघला देना। इसको (Fuzing Mixcher) फ्यूझींग मिक्सचरके नामसे आधुनिक वैज्ञानिक पहचानते हैं। उसके उपरांत यह फ्यूझींग मिक्सचरके लिए निम्न लिखित द्रव्य हैं जैसे कि–सोहागा और सज्जीक्षार इन दोनोंका मिश्रण है। वैसे ही आयुर्वेदमें ऐसे कई द्रव्य हैं जैसे कि—लाख, सोहागा, चिरमी, शहद, गुड़, मच्छी आदि को मित्र पचंकके नामसे पहचानते हैं। तदुपरान्त एक द्रावक गण भी है। मिश्र धातुओंके साथ यह द्रव्य मिलाके उसकी श्वेत ज्वाला न दिखाई देवे वहां तक सत्व पातन की भट्टीमें फूंके ताकि उसमेंसे मूल धातु का सत्व अलग हो जाय। धातुओं को कहां तक सत्व पातन भट्टी में फूंकना इसके लिए ज्वालाके रंगोंमें से प्रमाण निश्चित किया गया है इसी लिए ये सब क्रियाएँ जिसने प्रत्यक्ष निश्चित न की हो वहां तक उसको साक्षात ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। केवल ग्रन्थोंके वाचनसे रसका पूर्ण तथ्य प्राप्त नहीं होता है

अमुक प्रकार की ज्वाला निकलनेपर भी यदि अग्नि विशेष दिया जाय तो पदार्थमेंसे अलग हुआ सत्व अन्य द्रव्यमें रूपान्तरित हो जाता है। अभ्रक सत्वमें लोह जैसी मूल धातु मिलती है, वैसे ही माक्षिक सत्वमेंसे ताम्र जैसी धातु प्राप्त होती है। अभ्रक सत्व निकालते समय जहां तक अभ्रक द्रव होवे वहां तक इनकी ज्वाला पीले रंगकी होती है। पूर्ण सत्व द्रव रूप मिलने से उस सत्वकी ज्वाला श्वेत रंगकी होती है, उस समय मूसको नीचे उतार लेवें और ठण्डा होनेपर कणके रुप में जमा हुआ सत्व ले लेवें।

पारदमें अभ्रक सत्वका जारण करनेसे अभ्रक सत्वके गुण पारदमें आ जाते हैं। पारदका गलनांक (Melting Point) ३५६ C. g. है, उसमें कोइ अभ्रक सत्व रुप लोह धातु मिलाके नया मिश्रण (CompoUnd) बनानेसे पारदका गलन बिन्दु बढ़ जाता है। तात्पर्य है कि इतनी गर्मी देने पर भी वह पारद उड़ता नहीं है। इस न उड़ने वाली क्रियाको पक्षच्छेदन के नाम से शास्त्रमें पहचान दी गई है। पारदमें अभ्रक सत्वका जारण करनेसे पारद पक्षच्छिन्न हो जाता है। इस पारदको स्वर्ण पिघले उतनी (Heat) गर्मी देनेपर भी वह पारद उड़ता नहीं है, पक्षच्छिन्न हुआ पारदके पहले थोड़ा सा ज्यादा द्रव हो जाता है। पश्चात् ज्यादा समय तक अग्नि देनेसे भस्म रुप हो जाता है ? परन्तु यह भस्म मृत नहीं होती है। इसमें दिव्य शक्ति होती है।

द्रुति क्रिया—धातुओं, उपधातुओं, उपरसों और रत्नोंकी द्रुति बनानेका उल्लेख शास्त्रमें किया गया है। द्रुति दो प्रकारकी होती है। (१) गर्भद्रुति (२) बाह्य-द्रुति। द्रुतिकी सारी क्रियाएं प्रत्यक्ष ज्ञानके सिवा प्राप्त नहीं होती। आयुर्वेद प्रकाश ग्रन्थकारको भी द्रुति बनानेमें सफलता नहीं मिली है ऐसा इस ग्रंथमें उन्होंने दर्शाया है। "द्रुतयो नैव जायन्ते शास्त्रे प्रोक्ताऽपि ध्रुवम्"। श्री गोविन्द पादाचार्य अपने रस सार ग्रंथमें लिखते हैं कि "आदौ धान्याभ्रकं कृत्वा स्वेदयेद्दिन विंशतिः स्नेह दुग्धा वसाऽम्लैः क्षारैर्विधियते। पश्चाद् द्रुति प्रकर्तव्या अन्यथा नैव जायते॥ अर्थात् प्रथम धान्याभ्र करके उसको स्नेह, दुग्ध, वसा, अम्ल क्षार, आदिसे २० दिन तक स्वेदन करना, पश्चात् उनकी द्रुति करने पर वह जल स्वरूप बनता है। जिसने अभ्रक द्रुतिकी है और उसीसे पारदकी भस्म बनाई है उसके लिए यमराज ने और कुबेर ने अपने द्वार खुले कर दिए हैं। मतलब यही है कि अभ्रकको द्रुति करके पारदकी भस्मसे अनेक रोग दूर होते हैं और वह धातुवादमें भी काम आता है।

जारणके अनेक प्रकार हैं सब की विधिमें भेद है उसमें गर्भद्रुति क्रिया बड़ी कठिन है। जारण यह कष्ट साध्य और बुद्धिका विषय है। इसीसे कहा है कि "दुर्लभा जारणा देवि विना भाग्य न लभ्यते"।

चारणके तीन प्रकार हैं। समुख चारणा, निर्मुख चारणा और वासना मुख चारणा। इसी प्रकार त्रिविध मार्ग दर्शाया है। सम्मुख पारदके लिए प्रथम मुखोत्पत्ति करनी होगी। निमुख चारणामें दिव्यौषधियोंकी सहायता ली जाती है, अथवा वज्र या वैक्रान्तके योगसे भी होती है। बासना मुख चारणाके लिए प्रथम गंधक का दौलायन्त्रसे जारण करना चाहिए। विशेषतः उसके बाष्प द्वारा यह वासना दी जाती है। इस जारण क्रियामें धातुवाद और रसायनवादकी दृष्टिसे समय, औषध, और आयोजनमें भेद है।

गर्भद्रुति और जारण क्रियामें कभी कभी बीड़की सहयता ली जाती है। बीड़ अनेक प्रकारका बनाया जाता है बीड़ योग्य नहीं बनाया गया होगा तो सफलता असम्भव है। यह सारी क्रिया गुरुशरण बिना प्राप्य नहीं है।

सारणाके तीन प्रकार है (१) सारणा, (२) प्रतिसारणा, (३) अनुसारणा। इन तीनोंमें मात्रा भेद और क्रिया भेद है। सारणा क्रिया क्यों करना, कब करना, और किसके लिए करना, यह सब समझकर किया जाय तो परिणाम शुभ प्राप्त होता है।

क्रामण और वेध क्रिया यह भी महत्त्वकी क्रिया है। किस द्रव्य पर कितनी मात्रामें क्रियाकी जाय, बीज कौनसा लेना, बीजकी दृष्टिसे पारदका बल कितना है यह सब अनुभवसे और अनेक समय प्रयोग करने से क्रिया हस्तगत होती है।

बीज—रस शास्त्रकी पुस्तकोंमें स्वर्ण बीजका ग्रास देनेके लिए लिखा है कोई भी जगह पर स्वर्ण वर्क या क्षारका उपयोग नहीं किया है। अब यह बीज किस प्रकारका होना चाहिए? ताम्रवेधी, रौप्यवेधी, नाग वेधी, या रसेन्द्रवेधी, कौनसा बनावें? जो बीज बनाना हो उसकी (उस धातुकी) प्रथम भस्म बनाकर उस भस्मका जारण स्वर्णमें करना और पीछे उस स्वर्णका पारदमें जारण करना चाहिए।

बीजानां संस्कार कर्तव्य स्ताप्य सत्व संयोगात्।
येन द्रवन्ति गर्भे रस राजस्य अम्ल वर्गेन ॥
(रसहृदय, आयु० प्रकाश)

शिलया निहंत नागं ताप्यं वा सिंधुनाहतम्।
ताम्यंतु मारितं बीजं सूतके द्रवतिक्षणात ॥
(आ. प्र.)

इस श्लोकसे ऐसे समझमें आता है कि स्वर्ण बीज बनानेके लिए प्रथम स्वर्णका विविध औषधियोंसे मारण करना चाहिए। जैसे नाग भस्मका मनःशिलसे मारण करके उससे स्वर्ण भस्म बनाए। इस स्वर्ण भस्मका पारदमें जारण करें। इस जारणके लिए प्रथम ६४. ३२, १६, ८, ४, २ और पश्चात् समान भाग स्वर्णका जारण करना चाहिए, इन ग्रासोंका पचन करानेके पश्चात् गर्म कांजीसे पारदको धोवे। बीड़ साथ पचन करानेपर मल भाग कांजीमें मिल जाता है और चेतना तथा प्राण शक्तिकी साथ उसके सत्वका अंश पारदमें रह जाता है, रसेन्द्रमें सामान्यतः स्वर्णका जारण किया जाय, किन्तु वह स्वर्ण बीज भावको प्राप्त न हुआ हो, तो रसेन्द्र रक्त या पित्त बनता है। यदि रसेन्द्रको विष में तैयार किया गया हो तो अमुक मात्रामें स्वर्णके वर्क को वह ग्रहण कर लेता है। बिना बीज वह रसेन्द्र वेध क्रियामें उपयोगी नहीं हो सकता। यह बात रस हृदय तन्त्रके नवम् पटलमें लिखा है कि—

"रति रक्तोपि रसेन्द्रो बीजेन बिना कर्मकृद्भवति।
द्विविध तरपोतं सितं नियुज्यते सिद्धमेवैतत् ॥

जिस धातुका वेध करना हो उनके अनुरुप बीज बनाना होगा और उसके पीछे पारदमें उनका जारण करना चाहिये।

वेध क्रिया—रसेन्द्र चिन्तामणिके आधारपर आयुर्वेद प्रकाशकार लिखते हैं कि पहले नागको शुद्ध कर पीछे शिला सत्व मिलाकर उसका मारण करें अथवा स्वर्ण माक्षिक या गन्धकके योगसे ताम्र का मारण करें अथवा हिंगुलसे कान्त लोहका मारण करें पश्चात् इसीमें किसी एकको तीन समय स्वर्णके साथ मिलाकर जारण करें, यह बीज स्वर्णमें मिलाई हुई भस्मोंके अनुरूप तैयार होगा, पश्चात् इस बीजको परिपक्व बनानेकी क्रिया होती है।

"कुनटिहत करिणा……सहस्त्रांशेन विध्यति" (आ.प्र.)

स्वर्ण माक्षिकके योगसे ताम्रका मारण करना या नागका मारण करना पश्चात् इस नागको ३२ गुनी मात्रामें स्वर्णमें जारण करना इसको श्रेष्ठ नाग बीज संज्ञा कही जाती है। रसेन्द्रके साथ इस बीजको सम-गुण जारित करनेसे यह सहस्त्र वेधी होता है। इस कथनका पूर्ण स्पष्टी करण रस रत्नाकर और आनन्द कन्दके चौथे उल्लासमें है, जैसे कि—

"ताप्येन मारयेत……स्याद् हेम बीजकम्।

समगुण बीज जारित करनेके पश्चात् सारण कर्म होता है। यह शत वेधी होता है, पश्चात् जितना भी ज्यादा सारण होवे उतनी ही वेधक शक्ति अधिक तर दश गुनी बढती है।

रसार्णवमें कहा है कि पारदमें स्वर्णबीज चार गुना जारित करनेसे वह पीले रंगका स्वर्णके रंगका होता है। इस बीजके जारण करनेसे वार वार सारण होता है। पारदमें कितनेक शत्वांश का जारण हुआ है, आकर्षक हुआ है या धारण हुआ है इसका निर्णय वेध क्रिया होती है तब होता है। शतवेधी, सहस्त्रवेधी, लक्ष वेधी या कोटिवेधी या कितने वेधी हुआ है, वह क्रिया के फलसे निश्चित किया जाता है।

पारद अनुसंधान कर्म दरम्यान पारदके उपर करने के संस्कारोंके लिए अमुक प्रकारके विशिष्ट द्रव्यों की जरुरत होती है। इन द्रव्योंको तैयार करनेमें भी कितनी ही मुश्किलता है जब भी अति परिश्रमसे निम्न लिखित द्रव्य उन्होंने तैयार किए हैं।

(१) मनःशिलसे बनाये हुए द्रव्यः—मनःशिल मोमिया, मनःशिल तैल, मनःशिल सत्व कृष्ण, मनःशिल सत्व रक्त (र० र० स०) मनःशिल सत्व मृदु और मनःशिल सत्वके भिन्न २ पद्धतिसे बनाए हुए पांच प्रकार, मनःशिल पुष्प, शिला सिन्दूर, शिला पित्त सिन्दूर, शिला चन्द्रोदय।

(२) हरतालमें से बनाए हुए द्रव्यः—हरताल मोमिया (पा० सं०) हरताल तैल, हरताल सत्वके ६ प्रकार हैं, हरताल सत्व कृष्ण (र० रत्न), हरताल काच, हरताल भस्म कृष्ण (उंटके हड्डियोंसे बनी हुई) हरताल भस्म श्वेत, अग्नि स्थाई हरताल, ताल चन्द्रोदय, ताल पर्पटी, ताल सिन्दूर बंग युक्त, हरताल भस्म पीली (अपामार्गसे बनी हुई) हरताल पुष्प पीले।

(३) सोमलमें से बनाए हुए द्रव्यः—सोमल मोमिया (पारद संहिता), मल्ल तैल दो प्रकारके हैं, मल्ल सत्वके दो प्रकार (र० र० स०), मल्ल भस्म, मल्ल सत्व (वत्स नाभ मारीत), मल्ल सत्व (हरिद्रा) मल्ल चन्द्रोदय, मल्ल चन्द्रोदय तलस्थ, मल्ल पुष्प दो प्रकारके हैं, पीले सोमलका तैल (पारद संहिता), पीले सोमलका सत्वके दो प्रकार हैं (र० स०), पीले सोमल दो प्रकार (र० र० स०)।

(४) गन्धकसे बनाए हुए द्रव्यः—गन्धक पर्पटी (र० र० स०), गन्धक पुष्पके दो प्रकार (र० र० स०), गंध रहित गन्धक, (पा० सं०), गन्धक श्वेत।

(५) मयुर तुत्थसे बनाए हुए द्रव्यः—तुत्थ मोमिया, तुत्थ सत्वके चार प्रकार (र० र०), तुत्थ सत्वके रंजनके लिये दो प्रकार, तुत्थ सत्व रक्त (र० र०), तुत्थ भस्म, तुत्थ सत्व करंज तैल युक्त (र० र०)।

(६) अभ्रकसे बनाए हुए द्रव्य—वज्राभ्रक सत्व कृष्ण, वज्राभ्रक सत्वके अन्य छः प्रकार हैं (र० र० स०), वज्राभ्रक श्वेत सत्व (र० र० स०), वज्राभ्रक पीला सत्व, कृष्णाभ्रक द्रुति (जल), अलसियोंसे दो प्रकारके सत्व निकाले हैं (पारद संहिता)।

(७) नवसारमें से बनाए हुए द्रव्यः—नवसार तैल, नवसार पुष्पके तीन प्रकार (र० र०)।

(८) सज्जीक्षारमें से बनाए हुए द्रव्यः—सज्जीक्षार पुष्पके तीन प्रकार (पा० स०)।

(९) स्वर्ण माक्षिकसे बनाए हुए द्रव्य—स्वर्ण माक्षिक सत्व दो प्रकार के (र० र०), रौप्य माक्षिक सत्व पांच प्रकारके हैं, रौप्य माक्षिक सत्व श्वेत (चन्द्रमा), स्वर्णमाक्षिक सत्व (ताम्र धातु), रौप्य माक्षिक काच, विमल काच।

(१०) टकंण खारमें से बनाए हुए द्रव्यः—टकंण क्षार अग्नि स्थाई, टंकण काच, टकंण श्वेत काच चूर्ण।

(११) नीलांजनमें से बनाए हुए द्रव्यः—नीलांजन सत्व प्रकार (शीसाजैसे), नीलांजन सत्व बीजके दो प्रकार हैं (र० र०)।

(१२) खुराखारमें से बनाए हुए द्रव्य—सूर्य क्षार अग्नि स्थाई, सूर्यक्षार पुष्प, सूर्यक्षार अग्नि स्थाई (सोमल युक्त)।

(१३) फीटकडीमें से बनाए हुए द्रव्यः—सौराष्ट्री सत्व तीन प्रकार के हैं।

(१४) हिंगुलमें से बनाए हुए द्रव्य—हिंगुल मोमिया, हिंगुलोत्थ भस्म (र० र०) हिंगुल भस्म श्वेत हिंगुल भस्म (अपामार्गसे बनी हुई) हिंगुल गुटिका (अर्क युक्त), हिंगुल सत्व पारद।

(१५) पारदके संस्कार और योगः—पारदके अष्ट संस्कारके प्रत्येक संस्कारके भिन्न-भिन्न नमूने (र० र.), षड्गुण गंधक जारित कृष्ण पारद, (सरसव तैलमें), बुभुक्षित पारद, स्वर्ण जारण युक्त पारद, पक्षछिन्न पारद, पक्षछिन्न पारद पीला (र० र०)।

पारद बद्धके विभिन्न प्रकारः—हठ बद्ध, खोट बद्ध पिष्टीबद्ध, पोटबद्ध, क्रिया हीन बद्ध, कल्क बद्ध, आभास बद्ध, कज्जली बद्ध, सजीव बद्ध, क्षार बद्ध, खर्पर बद्ध और पारद गुटिका (र० र० स०), रंजित पारद स्वर्णमाक्षिकसे, अग्निस्थाई पारद हरताल योगसे, तमाल पत्र से पारद भस्म, यशदसे पारद भस्म, स्वर्णमाक्षिकसे पारद भस्म, लजवन्तीसे पारद भस्म।

(१६) बीडके प्रकार—तार युक्त बीड़ तीन प्रकार के शंख बीड़ (र० स०)।

(१७) धातुवाद के उपयोगमें आए हुए द्रव्य—वर लोह तीन प्रकारके हैं (र० र० स०) शुल्बनाग।

(द्वन्द्व धातु), के दो प्रकार (र० र० स०), बंग शुल्ब वेध, बंग पतंगी तमाल पत्रसे (र० र० स०), बंग पारद योग, शुकतुन्ड ताम्र, शुकतुन्ड ताम्रके तीन प्रकार प्रथम, द्वितीय, तृतीय। ताम्र रंजित शुकतुन्ड ताम्र, अयस कान्त, (र० स०) पीतल, कांस्य, रौप्य, हरतालसे (र० र० स०), बंग भस्म (हरताल मारित) शुकतुन्ड ताम्र और रौप्य का द्वन्द्व (तार रत्ती) (र० र० स०) वर लोह और रौप्यका द्वन्द्व (तार रत्ती) (र० र० स०) चन्द्रदल (र० र० स०) चन्द्रार्क, घोषाकृष्ट ताम्र, हेम रत्ती।

उपरोक्त लिखे हुए तथा और भी अनेक द्रव्य उन्होंने बनाए हैं। इस दिशामें विशेष कार्य अब भी चालू है। संशोधन कदापि पूर्ण नहीं हो सकता है। ज्यों-ज्यों इस विषय पर विवेक बुद्धिसे विचार करते जायें त्यों त्यों अनेक नई २ वस्तुएं प्राप्त होती जाती हैं, अनेक भूलें समझी जाती हैं, अनेक नवीन क्रियाओं के लिए प्रेरणा बढती जाती है। इसके लिए ध्यान, धारणा, तपश्चर्या, निस्वार्थता और श्रम भी मांग लेता है। जिसको खुदके योगक्षमकी कदापि परवाह नहीं होती है। जिसे विश्वकी कोई भी प्रकारकी, फिकचिन्ता होती नहीं हैं, वही एकाग्र चित्तसे ऐसा संशोधनका कार्य कर सकते हैं। माननीय श्री राजवैद्य शान्तिलाल भाईने इसके लिए अथक परिश्रम किया वह सचमुच अभिनन्दनीय है। भले ही किसीको आज उनका इस कार्यकी कीमत लक्ष्यमें न हो, किन्तु एक समय अवश्य आयगा जब भारतकी भावी पिढियां यह सोचेगी कि पारदके लिए अपने रस ग्रन्थोंमें कहे हुए कथन असत्य नहीं थे। तब भी पारदकी इन क्रियाओंके लिए बहुत नये वैज्ञानिकों और आयुर्वेदके अर्द्धदग्धोंको कई शंकाएं रहती हैं कि—

(१) इस सर्व कार्यकी फल श्रुति क्या है ?

(२) इस समयके विकसित हुए नव्य विज्ञानके इस प्रकारके संशोधनका मेल कहां बैठता है ?

(३) इस समयके रसायन शुद्ध पारद और अष्ट संस्कारित पारदके बीचमें क्या भेद है ?

(४) धातु वादके लिए रासायनिक गुण लेनेके लिए अष्ट संस्कारके पीछेकी क्रियाएं भले ही होवे किन्तु ऐसे ही सामान्य औषधियां बनानेके लिए रसायन शुद्ध पारद क्यों न उपयोगमें लिया जाय। और धातु वादके लिए भी अष्ट संस्कारके पीछेके संस्कारों की शुरुआत क्यों न करनेमें आए ?

(५) पहलेके समयमें खनिज, अन्य धातुओं से मिश्रित पारद मिलता था, इसलिए अष्ट संस्कार करने पड़ते थे। अब शुद्ध स्वरूपमें पारद मिल सकता है तो अष्ट संस्कार करने की क्या जरूरत है ?

(६) और यह सबसे अधिक हकीकत है कि अष्ट संस्कारोंके पीछेके संस्कारोंकी परीभाषा यहां स्पष्ट नहीं समझी जाती है। जारण, चारण, सारण, द्रुति आदि शब्द पुस्तकोंमें अनेक समय विभिन्न अर्थ और रहस्यमें लिखे हैं कि उनका किस समय पर कौन सा घटित अर्थ करना वह समझमें नहीं आता है।

(७) इसलिए समग्र रसक्रियाके प्रत्यक्ष स्वरूप का एक नया ग्रन्थ अनुभवी विद्वानके हाथसे निर्माण कराना चाहिए।

आज समग्र विश्व अलौकिक औषध सिद्ध रस, Wonderdrug के पीछे पड़ा हुआ है। आयुर्वेद को जीवित रखनेके लिए जो भी ऐसा कोई द्रव्य प्राप्त होवे तो वैद्योंके लिए अवश्य स्वर्ण भानुका उदय होवे।

इस पारद अनुसंधान सम्मेलनको पूर्ण हुए आज एक ही साल पूर्ण हुआ है। यह सम्मेलन समग्र भारत की कक्षासे 'पारद अनुसन्धान मण्डल' की स्थापना भी हुई है, उसके संयोजकों इस विषयके लिए फिरसे अधिवेशन भारतके किसी भी केन्द्रमें बुलाके विचार विनिमय करें और रसके रसीले विद्यार्थियोंको और रस साधकोंको रसामृतका पान करावें।

पुनश्च हरि ओम्

—आयुर्वेद विज्ञानसे उद्धृत

भारतीय रसविद्याके-प्रवाह

लेखक—वैद्य शास्त्री मणिशंकर कालीदास याज्ञिक हलवदकर आयुर्वेदालंकार, (मनहर प्लोट सेरी नं० २ राजकोट)

भारतीय रसविद्याके साहित्यपर दृष्टिपात करनेसे प्रतीत होता है कि—इस विद्याका प्रवाह पाश्चिमात्य देशोंमें भी वहन कर रहा है और पाश्चात्य रस विद्या का साहित्य भारतीय रसविद्याके साहित्य के साथ बहुत साम्यता है, इसलिये निःशंक माना जायगा की भारतीय रसविद्याका ही प्रवाह पश्चिमके देशोंमें बहा है, और वहां इस विद्या की अच्छि प्रतिष्ठा है।

इस मान्यतामें क्वचित श्रद्धाका अतिरेक भी हो, किन्तु इतना तो अवश्य कहा जायगा की "भारतीय रसविद्या विश्व व्यापी बनी हुई है, पश्चिममें लिखे हुए रस प्रन्थों और इस्लाम युगमें लिखे हुए रस प्रन्थों में इस विद्या की प्रक्रिया और साधना पद्धति अल्प शब्द भेद को दूर करनेपर प्रायः भारतीय रसविद्याके साथ मिलने जुलनेवाली है। मूत्रवर्ग, रक्तवर्ग, मांसवर्ग और स्त्री रजस् आदि रसविद्याके सहायक द्रव्योंका उल्लेख भी भारतीय रसविद्याके साथ मिलता है। पंचम सत्त्व शब्द भी सिद्धरस का ही द्योतक है।

इस समय विज्ञान क्षेत्रमें प्रथम स्थान प्राप्त करने वाली जर्मन प्रजाके प्रति दृष्टि करनेपर प्रतीत होता है कि विश्वके अनेक विध विज्ञानमें से "देहसिद्धि और लोहसिद्धि" विज्ञान बुद्धि प्राह्य होनेपर उनकी उपासना करनेवाले जर्मन वेनिडिक्सटस फिग्युलस नामका वैज्ञानिक प्रथम व्यक्ति था। यह महाशय कवि, ग्रन्थकार, तत्त्ववेत्ता, और चिकित्सक भी था, इतना ही नहीं किन्तु उसकी रसविद्याके प्रति असाधारण श्रद्धा और भक्ति भी थी, किन्तु उनको रसविद्या साध्य हुई या नहीं उनका उल्लेख किया गया नहीं है। किन्तु साधक अवश्य थे। उनका पुरुषार्थ भी स्मरणीय था। पाश्चात्य रससिद् थियोप्रास्टस-पेरासेलरस उनका भक्त था, उन्हींने जर्मन भाषामें लिखा हुआ रसविद्या के साहित्यको प्राप्तकर, प्रकाशित करनेका संकल्प किया था, किन्तु वह संकल्प (फलित) सिद्ध हुआ नहीं, तो भी उसने अपने राष्ट्रके रसविद्याके प्रन्थोंको प्राप्तकर, उसमेंसे सारभूत वस्तुका दोहन करके एक मौलिक प्रन्थ The goldenand blessed casket of napire marvels इस नामसे लिखा है, इसका आंग्ल भाषामें अनुवाद हुआ है, इस प्रन्थमें प्राचीन रसप्रन्थोंका साहित्य संग्रहीत किया गया है। इस प्रन्थके सिवा उन्हींने निम्न लिखित प्रन्थ और चार लिखे हैं।

(1) The heayenly triparitite golden treasury.

(2) The Newolympic and blessed rosary.

(3) Hortulvsolympicus aureolys.

(4) The golden hermetic paradise.

इन प्रन्थोंके सिवा और अन्य प्रन्थ भी लिखे हैं,

किन्तु यह ग्रन्थ महत्वपूर्ण ग्रन्थ नहीं हैं। यह दर्शाये हुए ग्रन्थ प्राय: जर्मनीमें सन् १६०८ ई० में प्रसिद्ध हुआ है।

रसविद्या प्राप्त करनेके लिए दिक्षाकी जरूरत नहीं है, ऐसी मान्यता रखने वाले व्यक्तिओंमेंसे यह भी एक थे। पश्चिमके विशाल रस साहित्यके अभ्यासुओं का मंतव्य यह है कि पश्चिममें भी रसविद्या साध्य करनेके लिए दिक्षाकी आवश्यकता है, ऐसा मानने वाला एक जनताका बड़ा समूह है।

पश्चिममें रसविद्याके उपासक साधकको (रससिद्ध) Adepts कहते हैं और जिस व्यक्तिने रससिद्धिकी पूर्णता प्राप्तकी हुई हो, उनको Adeptship कहते हैं, वैसे यह सभी साधकोंको कम ज्यादा मात्रामें रस सिद्धिका साक्षात्कार हुआ ही होगा।

पश्चिमका दूसरा ख्यात नाम अलेक भांडर व्हान सचेहन थे उन्हींने भी भूतपूर्व रसविदोंका मौलिक विचारोंका संग्रह करके स्वतन्त्र ग्रन्थ प्रसिद्ध किया है, उसी समय यह व्यक्ति पश्चिममें 'रससिद्ध" माना जाता था, और उसका "बर्नहार्ड"के साथ साधक दशा के बारेमें वार्तालाप हुआ था, इस वार्तालापका ग्रन्थ स्वरूपमें प्रकाशन किया गया था जिस ग्रन्थका नाम "The noyumiumen chemicum" (The newlight of alchem है इस रस ग्रन्थका अंग्रेजी भाषामें अनुवाद भी हुआ है और (The hermtic museum) की ओरसे प्रसिद्ध हुआ है। यह ग्रन्थ पाश्चात्य रस साहित्यमें मौलिक ग्रन्थ माना जाता है। यह ग्रन्थ अलेकभांडर सचेहन (रससिद्ध) ने लिखा है। यह ग्रन्थ प्रतिभा संपन्न होनेपर भारतीय रससिद्ध श्री नागार्जुनके समान लेखककी प्रतिष्ठा पश्चिममें मानी जा रही है।

रसविद्याका दूसरा उपासक "ऐलेक्टर ऑफ सोक्सनी" जिसने रसविद्या प्राप्त करनेके लिए अलेक भांडर व्हान सचेहनके साथ अनेक प्रपंच खेला था, He was pierced with ponointed iron acorched with × × × किन्तु उन्होंने रसविद्याका गुह्य भागका किञ्चित भी उल्लेख किया नहीं। दु:ख सहन किया, आखीरमें प्राण हानि हुई, किन्तु गुरुगम्य (मर्म भाग जाहेर किया नहीं) बात प्रगटकी नहीं और रागद्वेषसे मुक्त रहकर गुरुविद्याका रक्षण किया था।

रसविद्याको पश्चिममें 'हर्मेरिक फिलोसोफी" नाम से पहिचानते हैं। उसमें रसविद्या ज्योतिष और तंत्र-शास्त्र (Magic) का समावेश होता है।

भारतीय रसविदोंके मन्तव्यके अनुसार पश्चिम के रसविद भी मानते हैं कि रसविद्याके द्वारा देह सिद्धि प्राप्त होती है किन्तु वह परमात्माकी कृपासे प्राप्त होती है।

(It is the office of the hoiy spirit to in struct men in things eternal) उसका मंतव्य यह है कि प्रत्येक देशोंमें रससिद्ध हुए हैं, उसका उल्लेख ख्रिस्ती ग्रन्थोंमें विशेषत: किया गया है।

रसविद्या रूप देवका आखीरमें विजय होता ही है। ऐसी मान्यता फिग्युलस रखता था। पाश्चात्य रसविद्याके विषयका मौलिक साहित्यमें "पंचमसत्व" शब्द प्रयोग मिलता है, जिसको भारतीय रस साहित्यमें "सिद्धरस" नाम दिया है। ईश तेज उर्फे "पंचमतत्व" उसका वर्णन थियो फ्रास्टसने किया है। उसके बारेमें अधिक नहीं लिखते हुए, मात्र इतना कहना चाहते हैं कि भारतीय रसविद्या शाश्वत है। उसी विद्याको सा विद्याया विमुक्तये कहा जायगा। पुनःश्च हरि ॐ

क्या आयुर्वैदिक और होमियोपैथिक अवैज्ञानिक हैं ?

(लेखक--डॉ० कमलसिंह एम. डी. एस. एच. साहित्यायुर्वेद विशारद)

मध्य प्रदेशीय मेडिकल एसोसियेशनके दशम वार्षिक अधिवेशनकी अध्यक्षता करते हुये मध्यप्रदेशके मेडिकल एसोसियेशनके अध्यक्ष और इन्दौरके ख्याती प्राप्त नेत्र-विशेषज्ञ डा० जी० एच० वागले ने अपने अध्यक्षीय भाषणमें जो कुछ कहा वह दैनिक हिन्दुस्तान हिन्दी दिनांक १३-११-५६ के पृष्ठ छः पर प्रकाशित हुआ है। उसके आधार पर श्रीमान् डा० साहब के शब्द जो उन्होंने आयुर्वेद और होमियोपैथिकके विषयमें कहे वह उद्धृत करता हूँ।

सरकार द्वारा आयुर्वेद, यूनानी और होमियोपैथिक चिकित्साओंको प्रोत्साहन दिये जाने और सरकारी सहायता दिये जाने को डा० वागले ने जनताके धनका दुरुपयोग बताया। उन्होंने कहा कि ये चिकित्सा पद्धतियां बहुत ही पुरानी और अवैज्ञानिक हैं। श्रीमान् डा० वागले जी ने अपने विचार किस आधार पर प्रगट किये हैं यह कहीं भी पढने को नहीं मिला बिना आधारके दोषारोपणका कोई मूल्य नहीं है। कदाचित इसी कारणसे आयुर्वेद जगतके विद्वानोंने कोई उत्तर नहीं दिया। मैं चाहता था कि कोई विद्वान इसका उत्तर देते तो उत्तम होता फिर भी मैं अपनी लघु बुद्धिसे कुछ प्रस्तुत करना अपना कर्तव्य समझ कर प्रस्तुत कर रहा हूँ। जिसमें मैं यह प्रगट करूंगा कि आयुर्वेद और वेद तथा आयुर्वेद तथा अन्य पैथियों के सम्बन्धमें संसार प्रसिद्ध इतिहास कार, डाक्टर तथा विद्वानोंका मत क्या है।

आयुर्वेद और वेदका सम्बन्ध

इह खल्वायुर्वेदो नाम यदुपांगमथर्ववेदस्य।

॥ सुश्रुत अ० १-१० ॥

अर्थात् आयुर्वेद अथर्ववेदका उपांग है।

श्री पंडित प्रियरत्नजी आर्ष वैदिक रिसर्च स्कालरने अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र नामक ग्रन्थ रचा है, जिस में अथर्व वेदके मन्त्रों द्वारा, सूत्र, शरीर, निदान और चिकित्सा स्थानका प्रतिपादन किया है। साथ ही चिकित्सा स्थानमें, आश्वासन, उपचार, सूर्य किरण, जल, होम, शल्य, सौम्य 'होमियोपैथिक' सर्पादिविष, कृमि, चिकित्साके लिये भी वेद मन्त्र दिये हैं। यह पुस्तक लगभग ३०० क्राउन साइजके पृष्ठोंमें छपी है और ५०० वेद मन्त्रों द्वारा उस आयुर्वेदका प्रतिपादन करती है कि जिसके भीतर सबही पैथियोंका समावेश है।

नोट—यह पुस्तक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्लीसे प्राप्य है।

डा० वागले महोदयको आयुर्वेद तथा होमियोपैथिक का खंडन करनेके लिये उन्हें प्रथम वेदका खण्डन करना होगा जिस वेदके लिये भारतीय विद्वानों तथा पण्डतोंको छोड़कर योरूप और अमेरिकाके पं० कौलब्रुक, पं० मोक्समूलर, पं० ग्रीफीथ, पं० बेनफी, पं० व्हीटनी, पं० लेन्सन, पं० श्री रेवरेण्ड स्टीन्सन लण्डन आदि आदिने वैदिक भाषा सीखकर वेदोंका अध्यन करके उनकी प्रशंसा ही नहीं की किन्तु संसार की सर्व प्रथम पुस्तक और ज्ञानका भंडार ठहराया है।

आयुर्वेदका अन्य देशोंमें प्रवेश

८ वीं शताब्दीमें संस्कृतसे जो पुस्तकें अनुवादित हुई उन्हींपर अरबके वैद्यककी नींव पड़ी और सत्रहवीं शताब्दी तक योरपके वैद्य अरब वालोंके वास्तवमें हिन्दुओंके नियमोंपर चलते थे। ८ वीं शताब्दीसे पन्द्रहवीं शताब्दी तक वैद्यककी जो पुस्तकें यूरोपमें बनती रहीं उनमें चरकके वाक्योंके प्रमाण दिये गये हैं।

—डा० हन्दर

२. शस्त्र चिकित्सामें हिन्दुओंने जो सफलता प्राप्तकी थी वह उसी प्रकार आश्चर्यजनक है जिस प्रकार रसायन शास्त्रकी उन्नतिमें उनकी सफलता।
—आनरेबिल अलफेन्सटन

३. दो हजार दो सो वर्ष पूर्व सिकन्दरने अपने यहां उन लोगोंकी चिकित्साके लिये हिन्दू वैद्योंको रखा था जिनकी चिकित्सा यूनानी नहीं कर सके थे। ११०० वर्ष हुवे तब बगदादके हारूरशीदने अपने यहां दो हिन्दू वैद्य रखे थे जो अरबीके ग्रन्थोंमें मनका और सलह्के नामसे विख्यात हैं। —आर० सी० दत्त

आयुर्वेदपर हमारे देशके नेता डाक्टर तथा विद्वान क्या कहते हैं

(१) आजकी एलोपैथी चिकित्साका जन्म आयुर्वेदसे ही हुवा है आयुर्वेद ही वर्तमान युगकी अन्य सारी चिकित्सा प्रणालियोंका जनक है।
—श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य
सचित्र आयुर्वेद ११-५४

(२) रोग एवं चिकित्साके विषयमें आयुर्वेदीय दृष्टिकोण ही अब पुनः मान्यता प्राप्त करने लगा और स्वेच्छासे या अनिच्छासे हम अपनेको वहीं उपस्थित पा रहे हैं जहां हमारे पूर्वज खड़े थे। पाश्चात्य जनता ने भी यह अनुभव करना आरम्भ कर दिया है कि वैज्ञानिक उन्नतिसे ही मानव जातिका कल्याण नहीं हो सकता वह दिन दूर नहीं जब आयुर्वेदको ही विश्व चिकित्सा पद्धति बननेका गौरव प्राप्त होगा।
—डा० प्राणजीवन एम. मेहता एम. डी. एस. एस.
सचित्र आयुर्वेद १२-५४

(३) यूनानी और आयुर्वेद पद्धतियोंको घृणाकी दृष्टिसे देखना मूर्खताकी बात होगी। आयुर्वेदको अवैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति कहना घोर मूर्खता है।
—पं० जवाहरलाल नेहरू
सचित्र आयुर्वेद ९-५५

(४) आयुर्वेद और यूनानी पद्धतियां रोगोपशम एवम् रोगोन्मूलनके अपार गुणोंसे पूर्ण समृद्ध हैं और भारत जैसे देशोंमें इन पद्धतियोंकी विशेष उपयोगिता है।
—पं० जवाहरलाल नेहरू
सचित्र आयुर्वेद ८-५६

(५) ऐलोपैथीमें तो मनुष्यके केवल शारीरिक आरोग्यका विधान है लेकिन आयुर्वेद मनुष्यके शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक स्वास्थ्यका संरक्षण करता है।
—कालीपद मुकर्जी श्रम मन्त्री बिहार
सचित्र आयुर्वेद १२-५६

(६) आधुनिक चिकित्सा शास्त्रियोंको चाहिये कि आयुर्वेद प्रणालीसे सहानुभूति रखें। उन्हें इस प्रणालीका बहिष्कार इसलिये नहीं करना चाहिये कि इसे वे समझते नहीं। मेरी राय यह है कि आयुर्वेदिक पद्धति अन्ततोगत्वा एलोपैथिकसे सस्ती है और यदि परीक्षणके तौरपर उसपर व्यय भी करना पड़े तो मुझे पूर्ण यकीन है कि यह फिजूलखर्ची नहीं होगी।
—डॉ० राजेन्द्र प्रसाद राष्ट्रपति
सचित्र आयुर्वेद ९-५७

(७) आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति अनेक अंशोंमें एलोपैथिक पद्धतिसे भी अधिक वैज्ञानिक है।
—लाल बहादुर शास्त्री
सचित्र आयुर्वेद ३-५९

एलोपैथीका जन्म

विक्रमकी सोलहवीं शताब्दीमें पारा शेल्सस नामक एक प्रतिभाशाली वैद्य जर्मनीमें हुवा। जिसने आंख मूंदकर गालीनु और अबूसेनाके अनुयायित्वका घोर विरोध किया। गालीनु-रोमकमें विक्रमके २०० वर्ष पीछे एक प्रसिद्ध भिषगाचार्य हुवा जो शरीर विज्ञानमें सुश्रुतका अनुयायी था और प्रकृति निरीक्षण पूर्वक नैसर्गिक चिकित्साका प्रचार किया साथ ही रासायनिक धातव यौगिक औषधियोंके प्रयोगकी पूर्वपर्न इसने पहले पहल नींव डाली।
—स्वास्थ्य विज्ञान श्री रामदास गौड़ एम०ए० कृत

एलोपैथिकके विपरीत पथियां तथा उनके जन्मदाता श्री प्रीस नीटस, श्री हान, श्री लुइंकुने, श्री रिकली श्री क्रेप्स, श्री लाभान, श्री अडालफयुष्ट, श्री टर्नफाटर योरोपियन, श्री ट्राल, श्री जैक्सन, श्री केलाग अमेरिकन उपरोक्त पहलेके सात नाम प्रसिद्ध एलोपैथिक के डाक्टरोंके हैं, उन्होंने इनमेंसे किसीने स्वाभाविक भोजन, किसीने जल चिकित्सा. किसीने मालिश, जलवायु, मिट्टी, प्रकाश आदि आदि द्वारा चिकित्सा पद्धतियोंका आविष्कार किया।

इन महापुरुषोंने भारतके संस्कारोंकी सुन्दर प्रथा जो आयुर्वेदमें है, को सुप्रजनन शास्त्रके रूपमें फैलाया और यद्यपि आजकलकी उद्धत और अभिमानी सभ्यताने इनकी अवहेलनाकी तथापि प्राकृत चिकित्साने धीरे धीरे अपना सिक्का बैठा लिया और आज यूरोप महाद्वीपमें उसका समुचित आदर हो रहा है।

—स्वास्थ्य विज्ञान रामदास गौड एम० ए० कृत०

एलोपैथिकके महान् पंडित और विरोधी तथा होमियोपैथिके जन्म दाता युग प्रवर्त महात्मा हनिमन

महात्मा हनिमन एलोपैथीके पंडित और विद्वान् थे उन्होंने एलोपैथीके विरोधमें अपने घोर परिश्रम और लगन, तपसे जो भी सिद्धान्त निश्चित किये और उन्हें मूर्त रूप दिया उनका खण्डन करनेका साहस आज तक किसी एलोपैथिको नहीं हुआ अतः इनकी जीवनी जो संक्षिप्तमें २०-२५ पृष्ठोंमें छपी है उसका बहुत ही महत्वपूर्ण अंश नीचे उद्धृत कर रहा हूँ।

होमियोपैथिक के जन्म दाता तथा अथर्ववेदीय सौम्य चिकित्साके पुनर्जन्मदाता हनिमनका जन्म १० अप्रेल सन् १७५५ ई० में जर्मनीमें हुआ जब यह १२ वर्षके थे तब अपने सहपाठियोंको, मित्रोंको ग्रीक भाषा की शिक्षा दिया करते थे। १२ वर्षकी अवस्थामें प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर अपने घरमें लिपजिग नगर को गये। वहां चिकित्सा कलाकी शिक्षाके साथ अनेक राष्ट्रीय भाषाओंका ज्ञान प्राप्त किया। वहांसे विएना गये। जो आज भी यूरोपीय चिकित्साका केन्द्र समझा जाता है। वहां उन्होंने विभिन्न हास्पिटलमें रहकर ६ महिने तक प्रत्यक्ष शिक्षा प्राप्त की पश्चात् लियोपोल्ड वटेडर नगरसे बुलावा आनेपर वहां चले गये वहां के डाक्टर कोयरीनने इन्हें चिकित्सककी उपाधी प्रदान की। आपकी प्रतिभा की चमक टैनसिल वैनिया के गर्वनर तक पहुँची उसने इन्हें वहां बुला लिया और एक बहुत बड़ी लायब्रेरी जिसमें ग्रीक, लेटिन, फ्रैन्च, अंग्रेजी, इटालियन, जर्मन, हिब्रू, अरबी, फारसी, स्पेनिश, सीरियन आदि भाषाओंकी पुस्तकें थी उसका इन्हें अध्यक्ष बना दिया। हनिमन जिस प्रकार की रुचि चिकित्साके ग्रन्थोंमें रखते थे उसी प्रकार साहित्यसे भी, इसलिये यह वहां चले तो गये परन्तु उसकी सत्य जिज्ञासाकी शान्ति इतने बड़े पुस्तकालयसे न हो सकी क्योंकि उन्हें उस समय की एलोपैथी की निःसाथेना दिखाई देने लगी और अपने मतकी पुष्टीके लिये अधिक अध्ययन करना आवश्यक था इसलिये आप एनलाजन नगर चले गये वहां जाकर बोटानी तथा अन्य आवश्यक शिक्षाओंको ग्रहण कर चिकित्सा कला की एम० डी० की उपाधी सम्मानप्रद से प्राप्त की। इस समय इनकी उम्र २४ वर्ष की थी। १७८२ ई० में गोमर्नके सरकारी चिकित्सकके पदपर नियुक्त हुये। इस समय वह रसायन शास्त्र सम्बन्धी पुस्तकोंका अनुवाद करते और स्वतन्त्र टीका टिप्पणी अपने सम्पादनके साथ लिखकर प्रकाशित करते। जिसका लोहा तत्कालीन विद्वानोंने मान लिया। सब से प्रथम उन्होंने कण्ठमाला और उसकी चिकित्सा नामक पुस्तककी रचना की जिसमें उन्होंने लिखा कि ऐसी निराधार चिकित्सा पद्धतिके अनुसार चिकित्सा करनेके बदले इस कार्यको त्याग देना ही श्रेयस्कर है और इस पदको त्यागकर १७८७ में पृथक् हो गये।

(क्रमशः)

— दीर्घ जीवन एवम् स्वास्थ्य और आयुर्वेद —

(पृष्ठ ४९६ का शेष)

तरह भी वीर्य पात करना ब्रह्मचर्य भङ्ग करना है। इसी तरह स्त्रियां भी समझें।

दीर्घायुष्य कराणां ब्रह्मचर्य श्रेष्ठतमम्।
ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत्॥

दीर्घायुके लिए ब्रह्मचर्य पालनको सबसे श्रेष्ठ साधन हमारे महर्षियोंने बताया है। किन्तु आधुनिक लोग इसे असम्भव मानते हैं। किन्तु आधुनिक डॉक्टरी विधानमें तो वीर्य रक्षाको स्वास्थ्य उन्नतिके लिये बिलकुल आवश्यक ही नहीं माना है। फिर इन लोगोंके द्वारा आयुर्वेदके इस भारतीय सिद्धान्तको अव्यवहारिक भी कहा जाता है। किन्तु जो लोग आर्य संस्कृतिमें पले हुए हैं, तथा सिनेमा, सिगरेट, चाय, कुत्सित साहित्य आदिसे बचे हुए हैं वे उन लोगोंके इन अनार्य सिद्धान्तों को कदापि स्वीकार नहीं कर सकते। आज भी सन्त विनोबा भावे, श्री प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी, श्री अनन्त विभूति स्वामी करपात्री जी महाराज, श्री चण्डी चरण तीर्थ महाराज इस भारत पुण्य भूमि पर विद्यमान हैं जिनके अनुभवसे ब्रह्मचर्यका महत्त्व प्रत्यक्ष समझा जा सकता है।

आजकलके पाश्चात्य सभ्यतानुगामी सुधारकीय भारतीय नवयुवक, कुमार, बालक, अनायास वासना को जगाने वाले सिनेमा, चित्रपत्रिका, गंदा साहित्य का प्रचार, मनोहर कहानियां, उपन्यास आदिकी पठन पाठन करने वाले व्यक्ति यदि ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहें तो वे कैसे करें। इसके लिये तो भारती शासन ही इसमें इस समय सिनेमा, आदिकों को प्रोत्साहन दे रही है और कलापथकों के द्वारा बाल शिक्षाका प्रसार किया जायगा ऐसा बंबई सम्मेलन जलसाका बम्बईमें, बम्बई सरकारके समाज कल्याण मन्त्री श्री विरपुडे घोषित करते हैं. इससे कैसी आशा करें कि सरकार जनताके आरोग्य की रक्षा चाहती है।

प्रायः शिक्षालयोंमें जाकर देखते हैं प्राथमिक विद्यालयोंसे बड़े कालेजों, विश्वविद्यालयोंमें शिक्षकोंके रहन सहनका विद्यार्थियों पर असर देखनेको मिलता है, स्कूलोंमें शिक्षक लोग विद्यार्थियोंके सामने चाय, बिड़ी सिगारेट, पीते हैं। इतना ही नहीं उन्हींके हाथसे मंगाते हैं विद्यार्थियोंके सामने गन्दी बाते, गन्दा उपहास किया करते हैं। बीड़ी तम्बाखू पर नियन्त्रण करनेके लिये भारत सरकारने कानून बनाये कि स्वल्प उमरके बच्चे तम्बाखूसे बीड़ी से बचे, उसके लिये कानूनमें मास्टर, डाक्टर, वैद्य, कौंसिलर, पुलीस पटेल, ग्राम पंचायत मेम्बर, तहसीलदार, एम.एल.ए. आदि कम उमरके लड़के के हाथसे बिड़ी तम्बाखू खरीद कर लाते या इसे उपयोग करते देखें तो कानून इसे शिक्षा दिलावें। किन्तु वैसा न कर उसे प्रोत्साहन देते हैं। बम्बई प्रदेशमें जगह जगह मद्य बन्दी सप्ताह सरकारी तौरपर मनाया गया। जगह जगह किन्तु बम्बई राज्यके एम. एल. ए. मिनिष्टर, पुलिस, मजिस्ट्रेट मद्यका उपयोग करते पाये जाते हैं। यह हमने सुना है कहाँ तक सत्य है प्रभु जाने।

छोटे छोटे गांवमें शराब बिकती है, होटलोंमें जुवे खेले जाते हैं। कई माताओंकी इज्जत बिगाड़ी जाती है, सुधारकों सरकारी, अधिकारियोंकी ओरसे हमारी भारत सरकार बम्बई सरकारके महामन्त्रियोंसे एवं कांग्रेस कमेटीके कांग्रेस अध्यक्षोंसे प्रार्थना है कि क्या वे इसीमें सुधार मानते हैं? क्या यही स्वर्गीय बापू का राम राज्यका स्वप्न आप सफल बना रहे हैं? हमारी माता श्री ब्रह्म महाशक्तिसे प्रार्थना है कि इन्हें स्वास्थ्य रक्षणार्थ भारतके उन्नत्यर्थ सुबुद्धि प्रदान करे। मेरी इस लेखमें किसीपर टीका टिप्पणी करनेकी मनसा तनिक भी नहीं है। जो प्रत्यक्ष सर्वत्र दीखता है उसे स्पष्ट सामने रखा है। आशा है हमारी धृष्टताको क्षमाकर हमारे लक्ष्यको देखें तभी भारतकी स्वतन्त्रता चिरस्थाई रहकर इसकी कीर्ति दिग्दिगन्तमें फैलेगी भी। ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः।

मस्तिष्क शोथ

(ENCEPHALITIS)

(लेखक—श्री पं० जयदेव शर्मा, वि० अ० सी० वनस्थली विद्यापीठ जयपुर)

आजकल भारतके बहुतसे प्रान्तोंमें यह रहस्यमय रोग फैल रहा है जिसके लिये डाक्टर लोग और सरकार भी बहुत चिन्तित हैं। समाचार पत्रोंमें समय २ पर इस रोगके थोड़े बहुत रोगी मृत्यु मुखमें जाते पढ़े जा रहे हैं। इसके सम्बन्धमें समाचार पत्रोंमें भी बहुत कम जानकारी प्रकाशित हुई है। आयुर्वेद दृष्टिसे भी विशेष लेख दृष्टि गोचर नहीं हुए हैं। पाठकोंकी जानकारीके लिये मैं "होम डाक्टर" के आधारपर कुछ विवरण नीचे देता हूँ। आशा है वैद्यगण इसके आगे अपना परामर्श प्रस्तुत करेंगे।

मस्तिष्क शोथको अंग्रेजीमें (Encephalitis) एन्सिफेला इटिस कहते हैं। इस रोगमें मस्तिष्कमें शोथ हो जाता है। यह रोग फैल भी जाता है और कभी स्थानिक भी रहता है। इस रोगमें मस्तिष्कका भूरा तत्व (Gray matter) दूषित होता है। शोथ का लक्षण तो मस्तिष्कके अनेक पुराने रोगोंमें भी प्रकट होता है। जैसे मेनेनाइटिसमें या स्क्लेरोसिसमें भी। परन्तु ऐन्सिफेलाइटिसका नाम नवागत मस्तिष्क रोगके लिये ही प्रयोगमें आता है। सिरपर भारी आघात लगने से भी मस्तिष्कमें शोथ हो सकता है पर इस नाम से तुरन्त किसी विषके दूषण मात्रसे हुआ मस्तिष्क शोथ ही लिया जाता है।

इन्फ्लुएन्जा (कफ ज्वर) और मीजल्स (खसरा) लाल बुखार; कुकुर खांसी, मध्य कर्णगत रोगोंमें भी मस्तिष्क शोथ हो जाता है। परन्तु कुछ विद्वानोंके विचारसे भोजन गत विष्ट के कारण मस्तिष्कमें शोथ हो जाता है। इसकी भयंकर दशामें तो रक्त स्राव भी होने लगता है।

यह रोग एक दम बल पकड़ता है. प्रायः नवयुवकों और स्वस्थ लोगोंपर प्रकट होता है, बच्चे, छोटी लड़कियोंपर विशेष बल पकड़ता है, दो एक दिन की तीव्र शिरो वेदना, भारीपन, बेचैनी, में ही रोगी अध पागलसा हो जाता है फिर मूर्छा आने लगती है, और फिर लम्बी निद्रा या तन्द्रामें पड़ जाता है। गर्दनमें जकड़ाव भी प्रगट हो सकता है, बांयटे होना आवश्यक नहीं है।

मूर्छा की दशामें बेचैनी भी सम्भव है। मोह, भ्रम, भूलने या कभी बकझक भी होने लगती है तन्द्रा या निद्रागहरी हो जाय, दो एक दिनमें ही ज्वर बहुत तीव्र होकर मृत्यु हो जाती है। यदि रोगका आक्रमण तीव्र नहीं हो तो मृत्यु की दुर्घटना कुछ सप्ताह तक भी नहीं होती, इस दशामें अर्धांगके लक्षण देखनेमें आने लगते हैं। यदि रोग पुराना पड़ जाय तो रोगी रोग मुक्त भी हो जाता है।

इसका निदान करना सहज नहीं होता है; क्यों कि लक्षण एकदम तीव्र रूपमें प्रगट होते हैं। और निदान बहुत सोच समझकर करना आवश्यक होता है। फिर चिकित्सा या उपचारके सम्बन्धमें तो बहुत ही कहा जा सकता है। आराम करना, जहां शब्द या कोलाहल न हो वहां रोगीको शान्त वातावरणमें रहना, उद्वेग जनक कारण न हों, सिरपर बर्फ की टोपी रखना फस्द खोलना या सिरा व्यधन करना भी इसमें लाभ दायक हो सकता है, परन्तु कोई खाने की दवाका बतलाना कठिन है।

इस रोगके बलात् सहसा आक्रमणके साथ साथ

अर्धांगके लक्षण बच्चोंमें प्रकट होते हैं, २ से ५ वर्ष तक के बीचमें बांयटे. फिटें आना, ज्वर और वमन ये लक्षण एकदम प्रकट होते हैं और फिर रोगी आरामसे सोने लगता है, सिर लुढ़क जाता है, देहका एक तरफका भाग लकवेसे मर जाता हैं। बार बारके दौरोंसे या दीर्घ निद्रासे ही कुछ दिनोंमें मौत आ जाती है। या ज्वर कम हो जाता है तो बच्चा ठीक भी हो जाता है परंतु लकवा ठीक नहीं होता, इसको ठीक होनेमें काफी लम्बा समय चाहिये। मस्तिष्ककी शक्तियां इस रोगके आक्रमणसे जो नष्ट हो जाती हैं उनकी पुनः प्राप्ति नहीं होती। प्रत्युत कुछ और भी नये मस्तिष्क विकृति के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। जैसे पागलपन, उन्माद आदि।

यह रोग फैलने वाली महामारीके रूपमें भी फैलता है, उसका नाम 'एन्सेफेलाइटिस लेथार्जिका' या निद्रा रोग (Sleepy sickness) कहाता है।

मस्तिष्कमें कीटाणुओं का दूषण

यदि रोग कीटाणु मस्तष्किमें दोष या विकार उत्पन्न करते हैं तो वहां भी लसके समान दूषित द्रव या पूय बढ़ता है, इससे अग्रमस्तिष्क भागमें कहीं गुम, फोड़ा उत्पन्न हो जाता है। सिर पर कड़ा आघात लगकर मस्तिष्कमें आस पासके भागोंमें शोथके फैलनेसे यह भी संभव होता है। या मध्य कर्णके रोग दूरसे रक्त दूषित आनेसे भी हो सकता है। यहां एक फोड़ा (पिड़क) भी हो सकता है, और बहुतसे भी हो सकते हैं, अधिक स्थानमें भी फैल सकते हैं, किसी एक स्थानमें भी हो सकता है, इनका आकार भी सुपारीसे लेकर नारंगी तक बड़ा हो सकता है, पर प्रायः फोड़ा एक होता है, 'सेरेब्रम' (महा मस्तिष्क) के टेम्पेराल लोब (कनपटीका भाग) में होता है। क्योंकि यही भाग कानके पास होता है। प्रायः सेरेबेल्लम (लघु मस्तिष्क) का भाग भी दूषित होता है।

इसके लक्षण यह होते हैं सिरमें दर्द, ज्वर, वमन, सर्दी लगना, कंपकंपी होना, यह बहुत तीव्रतासे आता है और बहुत शीघ्र प्राण हर हो जाता है। एक दम तीव्र लक्षण उत्पन्न होनेके पहले भी बहुत देर तक उक्त लक्षण रह जाते हैं। बादमें ऐसे लक्षण भी प्रकट होते हैं जिन से इसका ठीक स्थान निश्चित हो सकता है। मस्तिष्क में जो गति देनेका केन्द्र है वहाँ कई प्रकारके लक्वे के लक्षण भी प्रकट होते हैं। यदि सेरेबेल्लम (लघु-मस्तिष्कका मध्य अंश दूषित या रोगाक्रान्त हो तब रोगी चलते उठते लड़खड़ाता है, इसके भी सब लक्षण सेरेब्रम (महा मस्तिष्क) के फोड़ेके समान होते हैं। परन्तु ज्वर विशेष होता है, इसकी चिकित्सा केवल शल्य प्रयोगसे ही होती है।

ऊपर हमने एनसेफेलाइटिस लिथार्जिका (अर्थात् निद्रारोग या स्लीपी सिकनेस) का भी उल्लेख किया है। है। परन्तु यह भी एक अपनी विशेषता रखता है। इसी प्रसंगमें इसका भी वर्णन करना चाहिये। उसे हम अगले लेखमें दर्शाएंगे।

(१) सेरेब्रम (महामस्तिष्क) खोपड़ीके ऊपरके भागको अधिकांश घेरता है। बीचमें एक गहरी चीर से विसक्त होता है जो सामनेसे पीछे तक चली आती है। यह चीर दिमागको बराबर दो भागोंमें बांट देती है। ये दोनो भीतरसे सूत्रबन्धिनियोंसे जुड़े रहते हैं। मस्तिष्कका सारा पृष्ठ चीरों गहरी रेखाओं नामातहों से अच्छादित रहता है। महामस्तिष्कका गोलार्क विवेक बुद्धि और इच्छाका स्थान है, ये गुण उसके भार पर निर्भर है। और पृष्ठपर पड़ी गहरी रखाओंपर भी निर्भर है। वही भाग मांस पेशियोंकी गति विधियों, वाह्य जगत्के ज्ञानोंको संचित करता है।

(२) सेरेबेल्लम (लघु मस्तिष्क)—यह महामस्तिष्क के पीछेके भागमें होता है। जो खोपड़ीके पिछले भागमें होता है। इसकी तहें उत्तम, अधिक नाजुक, होती हैं। यह भी दो भागोंमें विभक्त है। इसका अधिकार पेशियों की गति विधियोंको व्यवस्थित करनेका है जिससे कि वे ठीक समय पर कार्य कर सकें। यह शरीरका संतुलन रखता है जब कि रोग शरीरकी गति को लड़खड़ा देते हैं, देहको चलने और खड़ा होनेमें डगमा देते हैं।
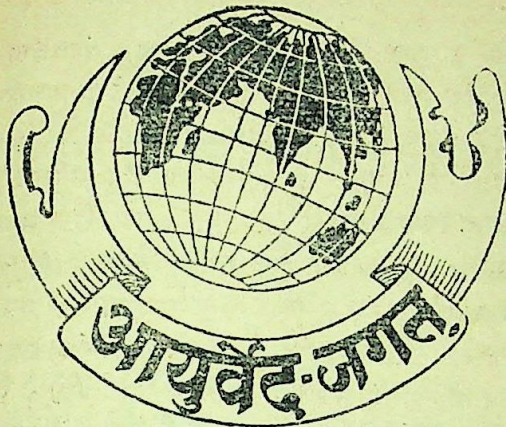
अ० भा० राष्ट्रीय स्वास्थ्य परीक्षा संस्थान

पो० ओड़ो (गया)

इस संस्थाने भारतीय जनता की सेवा करानेके लिए निम्न उद्देश्य रखते हुए इस संस्था की स्थापना की है।

उद्देश्य—अक्सर यह देखा गया है चिकित्सक जिस गांवमें नहीं होते हैं वहांके नजदीक ग्राम या शहर के चिकित्सक उस चिकित्सक विहीन निरीह जनता से मन मानी फीस वसूल करते हैं। इन्जेक्शन आदि टीका लगानेमें जहां उनकी आवश्यक्ता पड़ती है तथा जन स्वास्थ्य शिक्षाके अभावमें जनता भयानक बिमारियोंमें फंस जाती है, अत: साधारणतया इन्जेक्शन का पूर्ण ज्ञान जन स्वास्थ्य रक्षा हित मलहम पट्टी, औषधि वितरण, कीटाणु नाशक औषधिका प्रयोग, टीका, भेक्सीन, ग्राम सफाई, जड़ी बूटी परिचय तथा उनके गुण जिससे कि उसके द्वारा साधारण चिकित्सा हो सके आदि २ का प्रत्यक्ष कर्माभ्यास प्रशिक्षण देकर परीक्षा ग्रहण करना तथा समाज सेवी जनता, शिक्षक, ग्राम सेवक, मुखिया, समाज शिक्षा आयोजक, पंचायतके दलपति एवं स्वास्थ्य नवयुवक वैद्य रजिस्टर्ड चिकित्सक को उपाधि देकर स्वयं सेवक रूपेण भारत के प्रत्येक जिलेमें सम्बन्धित स्वास्थ्य विभाग द्वारा उचित पारिश्रमिक पर नियुक्त करानेपर प्रयत्न करना मुख्य उद्देश्य हैं जिससे कि राज्य सरकारों को सुलभ से ऐसे स्वयं सेवक मिल सकें।

संस्थाका उद्देश्य बड़ा अच्छा है, हम चाहते हैं कि भारतके युवक आप के सुविचारों को देखकर जनता जनार्दनकी सेवामें सदैव तत्पर रहें यह हमारी शुभाकांक्षा है।

वैद्य श्री रामदत्तजी भारद्वाज का अभिनंदन

आज ता० २५-१-६० को गवर्न मेण्ट आ० औष० दरीणी (कांगड़ा) के प्रधान चिकित्सक रसायनाचार्य श्री वैद्य रामदत्त जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्यका अभिनन्दन समारोह दरीणीकी जनता की ओर से श्री पं० चुन्नीलालजी सरपंचकी अध्यक्षतामें मनाया गया समारोहमें सर्व साधारण जनताके अलावा नगरके गण मान्य प्रतिष्ठित व्यक्ति एवं सरकारी कर्म चारियोंने भाग लिया।

आप सब लोगों ने श्रीमान वैद्य जी के कार्योंकी भूरी-भूरी प्रशंसा की एवं वैद्यजी के जाने पर अपना क्षोभ प्रगट किया।

श्रीमान अध्यक्ष महोदय ने कहा कि वैद्यजी एक चिकित्सालयके प्रधान चिकित्सकसे अब श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवनकी झांसी निर्माण शालाके प्रधान वैद्यके पदपर जा रहे हैं,यह सुनकर सब उपस्थित सज्जनोंको प्रसन्नता हुई आपने यह भी कहा कि आप बहुत ही मिलनसार एवं साधारण जनताके बड़े ही हितेच्छु हैं और आपमें स्वार्थ लिप्सा बिलकुल भी नहीं है। इस लिए वैद्यजीके अभ्युदयमें जनता का आशिर्वाद एवं शुभ कामनाएं अवश्य ही सफल होगी।

आखिरमें दरीणीकी जनताकी ओरसे उन्होंने वैद्यजी का अभिनन्दन किया और उन्होंने अपनी त्रुटियों की क्षमा मांगी।

अभिनन्दनके पश्चात् वैद्यजी ने सब उपस्थित व्यक्तियोंके प्रति कृतज्ञता प्रगटकी और अन्तमें उन्होंने इस गांवको एक स्वर्गपुरीकी उपमा एवं यहांके निवासियोंको देवता तुल्य मान कर दरीणीकी जनताका सम्मान बढ़ाया और उन्होंने जनताके प्रति बहुत ही नम्र शब्दोंमें आभार प्रगट किया।

★ सौराष्ट्र में आयुर्वेद की उन्नति ★

अमरेली जिला वैद्य सम्मेलनका प्रथम अधिवेशन

(हमारे प्रतिनिधि नरहरि प्रसाद त्रिवेदी द्वारा)

कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनकी ओरसे मुझे अमरेली जिला वैद्य सम्मेलनमें अमरेली जानेका सद्भाग्य प्राप्त हुवा, जिनका संक्षिप्त विहंगावलोकन प्रस्तुत किया गया है। उपरोक्त संमेलन ता० ९-१०-११ जनवरी १९६० के रोज बड़े उत्साहसे अमरेली शहरमें मिला था। दो सौ से अधिक वैद्योंने अपना अमूल्य समय इस सेवा कार्यमें सद्भाव, सहयोग सह दिया था। ता० ९ को सायंकाल से कार्य की शुरुवात श्रीमान आदरणीय अध्यक्ष महोदयके स्वागतार्थ जुलुस शहरमें निकाला गया था। बादमें सौराष्ट्र वैद्य सभा की कार्यवाही श्रीमान् बालकृष्ण भाई दवेकी अध्यक्षतामें हुई। एवं अमरेली जिला वैद्य संमेलनकी विषय विचारणीय सभा श्री बालुभाई कालीदासकी अध्यक्षतामें हुई।

ता० १० के रोज सुबह वैद्यरत्न श्री चम्पक भाई ने भगवान धन्वन्तरिके मंगलमय स्तवनके बाद सभा की कार्यवाही शुरु हुई। मंत्री श्री दामुभाई त्रिवेदी ने अनुपस्थित सज्जनोंके सम्मेलनकी सफलताके संदेश सुनाये गये स्वागत प्रमुख श्री जगजीवनदास नारायण महेता जिनकी शुभेच्छासे, एवं मार्गदर्शनसे इस सम्मेलन का आयोजन किया गया था, दैवशात् वह बिमार होनेसे उनकी सुपुत्री श्री दुर्गाबहिन द्वारा उनका भाषण सुनाया गया था बादमें अमरेली जिला वैद्य सभाके प्राण एवं अध्यक्ष वैद्यरत्न श्री कांतीलाल रामकृष्ण आचार्यने जिला वैद्य सभाके कार्य वृत्तांत प्रस्तुत किये। बादमें सौराष्ट्र वैद्य सभाके अध्यक्ष एवं श्री गुलाब कुंवर आयुर्वेदके फेकल्टीके मंत्री श्रीमान् बालकृष्ण भाई दवे ने परिषदका उद्घाटन किया एवं आयुर्वेद और एलोपैथिक तुलनात्मक विस्तृत प्रवचन किया बादमें संमेलनके अध्यक्ष भावनगर आयुर्वेद विद्यालय के प्रधानाचार्य श्रीयुत भास्कर भाई म. पोलकिया ने वैद्य जीवनके प्रत्येक मार्गपर हृदय स्पर्शी प्रवचन किया था।

दोपहर बाद प्रसिद्ध लोक सेवक श्रीमान् सेठ श्री न्यालचंद मूलचन्दजी ने प्रदर्शनीका उद्घाटन किया था। एवं शुद्ध आयुर्वेदके उपासक गढडा निवासी वैद्यरत्न श्रीमान् कृपाशंकर भवानी शंकर भट्ट ने आयुर्वेद के "शल्य शालक्य" जैसे रहस्य मय विषय पर ढाई घण्टे तक ज्ञानप्रद सुंदर प्रवचन किया था। रात्रिमें महत्त्वके वांचन हुवा एवं सेवा उत्सुक वैद्य भाइयोंका उत्साह बढाने हेतु चंद्रके एवं धन्यवाद पत्र दिये गये, रचनात्मक कार्य हेतु पैसा इकट्ठा करनेके लिये श्री भगवान धन्वन्तरि भंडारकी छोटी-छोटी पेटीयां देनेमें आई यह कार्य अत्यन्त प्रशंसनीय है। बादमें वैद्यरत्न श्री चम्पकभाई मुलाणीने आयुर्वेद और योगासनके प्रत्यक्ष प्रयोग करके दिखाया था। बादमें सद्भाव पूर्वक साभार किया गया था।

ता० ११-१२ दोनों दिन भावनगर आयुर्वेद विद्यालयके अध्ययन मंडलके विद्यार्थी भाइयोंने जो अपने भगीरथ परिश्रमसे तैयारकी हुई आयुर्वेद औषधियोंके शुद्ध द्रव्यों एवं वनौषधियोंका प्रदर्शन, एवं कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन कालेड़ा कृष्ण गोपाल की शुद्ध शास्त्रोक्त औषधियों एवं आयुर्वेद जगतके अनमोल ग्रंथोंका स्टोल जन सेवा, जन स्वास्थ्यके लिये रखा गया था। जिनका लाभ वैद्य भाइयोंने एवं आयुर्वेद प्रेमी जनता ने सहर्ष उठाया था।

श्री देवेन्द्र भाई भावनगर, श्री प्रागजी भाई राठोड़ सणोसरा, भावनगर जिला वैद्य सम्मेलनके अध्यक्ष श्री वसंत भाई गांधी तथा श्री प्रजाराम भाई रावल एवं मोरबी वैद्य सभाके अध्यक्ष इत्यादि ने कष्ट करके

संमेलनके कार्यको सद्भाव सह सहकार दिया है। और सौराष्ट्र वैद्य सभाके मानदमंत्री श्री वसंतराय डी. भट्टने सतत् मार्ग दर्शन देकर कार्य की सफलतामें सुन्दर सहकार दिया है। संमेलनके आयोजक मंत्री श्री जयंतिलाल जगजीवन जोशीने चार मास तक सतत् परिश्रम करके अमूल्य समय देकर जो सेवा की है वो प्रत्येक वैद्य, प्रत्येक जिलेमें दिया करे तो वैद्य समाजके प्रश्नों का निकाल सरलतासे हो सकता है।

धन्वन्तरि यज्ञ शिविर आयोजन

इस सम्मेलनमें एक महत्व पूर्ण विशेषता तो यह हुई है कि अमरेली जिलाके वैद्यों एवं आयुर्वेद प्रेमी जनताने एक धन्वन्तरि यज्ञ शिविरका आयोजन किया है। वैद्यों एवं जनताके आत्मबल पर ही आयुर्वेदकी उन्नति, जागृति एवं जनस्वास्थ्यके संरक्षणार्थ यह धन्वन्तरि यज्ञका आयोजन किया है जिससे विविध रोगों से पीड़ित अनेक रोगियोंको रोग मुक्त करनेके लिये सुज्ञ वैद्यों प्रयत्न करेंगे और उनकी रहने की खाने पीनेकी सभी सुगमता जनता जनार्दनकी ओरसे करने में आई है। अमरेलीके आंगनमें आयुर्वेदका निदान चिकित्सा यज्ञ आयुर्वेदकी उन्नति और वैद्य जगतकी एकता एवं जनता के स्वास्थ्यके प्रश्नोंके अनेक ठरावें सर्वानुमते प्रसार करनेमें आया था।

शिविरका उद्देश्य :—(१) निर्धन रोगियों कि जो रोगसे पीड़ित हों आर्थिक स्थिति इलाज करानेकी न हो, उनका योग्य उपचार करना।

(२) कष्टसाध्य दर्दीसे पीड़ित कि जिन्होंने अन्य स्थान पर उपचार कराकर निराश हुवे हो उनका योग्य उपचार करना।

(३) आयुर्वेदके स्वास्थ्य वृतके शिक्षण द्वारा रोग न हो वो ज्ञान रोगियोंके उपचारके समय देना।

(४) आयुर्वेद सत् शास्त्र है इसमें दर्शाई हुई चिकित्सा शुद्ध एवं असर कारक है। और अपने देशके प्रतिकुल है इस विषयको जनता की सेवा करके बढाना उपरोक्त चार उद्देश्यसे इस यज्ञका आयोजन किया गया है शिविर ता. ३-३-६० से ता. ३१-३-६० तक चलेगा. शिविरके दर्दीयोंके लिये २५ खाट रहेगी जिन के बिस्तर, भोजन औषधोपचार इत्यादि देख रेख सेवा भावी वैद्योंकी नीजि देख रेखमें मुफतकी जायगी, पथ्य पालन करके अपने घर रहने वाले दर्दीयोंका निदान करके औषधि की जायगी शुद्ध शास्त्रिय औषधोपचार होगा।

शिविरकी यह महत्व की सेवा आयुर्वेदके उपासक गढडा निवासी वैद्यरत्न श्री कृपाशंकर भवानी शंकर भट्ट निष्काम भावसे करेंगे, अन्य सेवा भावी वैद्यों भी इस सेवा कार्यमें सम्मलित होंगे सेवा करने वाले वैद्य का भोजनादि खर्च स्वयंका ही रहेगा।

इस रुग्णालयके नियम, समय, इत्यादि आवश्यक जानकारी निम्न पतेसे प्राप्त करें।

श्री धन्वन्तरि सेवाश्रम
निर्भय निवास जेसींगपरा
अमरेली (सौराष्ट्र)

विविध रोगोंसे पीड़ित भाई बहिनोंको सूचित किया गया है कि इस सेवाका लाभ उठानेसे पहले उनके नियम एवं आवश्यक जानकारीके लिये उपरोक्त पतेसे पत्र व्यहवार करें।

अन्नदो जलदश्चैव आतुरस्य चिकित्सक।
त्रयस्ते स्वर्गमायान्ति बिना यज्ञेन भारत॥

भूखोंके लिए अन्नदान, सदाव्रत शुरु करना, प्यासों के लिये तलाव बावडी, प्याऊ करना और रोगग्रस्त दुःखी रोगियोंके लिये निस्वार्थ भावसे औषधोपचार करनेवालों को यज्ञ करनेकी जरुरत नहीं है। ये बिना यज्ञ ही मोक्षके अधिकारी हैं।

इस सम्मेलनमें एवं धन्वन्तरि यज्ञमें जिन जिन आयुर्वेद प्रेमी वैद्यों, आयुर्वेद प्रेमी श्रीमंत एवं जनता जनार्दनकी निष्काम सेवा की है। ये अत्यंत प्रशंसनीय एवं धन्यवादके पात्र है। मैं उनका हृदय पूर्वक स्वागत करता हूँ जिनकी सद्भाव पूर्वक अमूल्य सेवाका विस्तृत विवरण शब्दों द्वारा करनेमें असमर्थ हूँ।

आवश्यक सूचना

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवनान्तर्गत आयुर्वेद औषधालयके प्रधान वैद्य श्री बदरीनारायणजी अपनी सेवासे निवृत्त होकर इतर स्थान पर गये हैं। इसलिये संस्था सम्बन्धक पत्र व्यवहार बदरीनारायणजी के नाम पर न करते हुए मात्र प्रधान चिकित्सक एवं व्यवस्थापकसे करनेका कष्ट करें।

कृष्ण गोपाल धर्मार्थ चिकित्सालय

कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन द्वारा संचालित कृष्ण गोपाल धर्मार्थ चिकित्सालय एवं आतुरालयमें १ दिसम्बर १६५९ से ३१ दिसम्बर १९५९ तक एक मासमें ३२९० रोगियोंकी निःशुल्क चिकित्साकी गई। उनमें नुतन रोगी ९१३, पुरातन रोगी २३७७, पुरुष रोगी ४३९, स्त्री रोगी १५२, बालक रोगी ३०२ आये, नवागुन्तक रुग्णोंका रोगानुसार विवरण निम्न प्रकार है।

कर्ण रोग २७, वर्णरोग १३२, जीर्णकास ३६, उष्णवात '०, ज्वर ४३, नाड़ीव्रण १६, दौर्बल्य २९, उदर शूल २९, शिरशूल २५, यकृत रोग १६, भ्रम ७, कण्डु ९, फुफ्फसावरण शूल ३, कास ८६, नेत्ररोग ५६, मन्दाग्नि २२, प्रतिश्याय ५२, दन्तरोग २२, वात शूल १५ आमातिसार ६, श्वास २८, अग्निदग्ध ४, दद्रु २३ विबध १७, वातव्याधि १२, मो ज्वर १. आमवात ४, पक्षाघात २, पल्हीदर ३, श्वेतप्रदर ८, अतिसार १५, उदावार्त ५, प्रवाहिका ७, शीतपित्त २, विषकारक २, वातगुल्म ३, शुक्रमेह १४, वस्तीशूल ३, मधुमेह ३, अष्यमान २, चर्मरोग ६, ग्रध्रसी वात १, अघात ७, रक्तप्रदर २, विस्फोट ६, मुखपाक ११, शुक्रदौर्बल्यं १, अनियमित्तार्तव २, अर्दीठ १, उन्माद १, उदरवात २, अनन्तवात ३, कष्टार्तव १, अम्लपित्त ८, अरुचि १, पार्श्व शूल ५. रक्ताल्पता अर्श ५, पाण्डूरोग १, मेदावृद्धि १, अबुर्द १, लिगशेथ १, प्रसूतपीड़ा १, बहुमुत्र १, कक्षाग्रन्थी १, वि. ज्वर ७, मूत्रघात १, मूत्रकृच्छ्र १ हृदयरोग ७, विचर्चिका २१, मलावरोध ४, हिक्का १, मूर्च्छा १, कृमी रोग २।

– साहित्य-समालोचना –

"गामडानी वनस्पति"

यह पुस्तक गुजराती भाषामें लिखी गई है।

प्रकाशक—गूर्जर ग्रन्थ रत्न कार्यालय, गांधी मार्ग अहमदाबादकी ओर से प्रकाशित की गई है।

वाईट प्रिन्टिंग पेपर, साईज २०×३० का १६ पेजी, पृष्ठ संख्या १६६, कीमत सजिल्द ३-००।

इस पुस्तकके लेखक श्री वैद्यराज माधव मो चौधरी जी हैं, जो सामायिकों और मासिकोंमें कई सालसे अपनी कलमका आस्वाद, गुजरातकी जनताको दे रहे हैं। आपने पूज्य श्री कृष्णानन्द जी महाराज श्री (कालेड़ा कृष्णगोपाल) का लिखा हुआ रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह द्वितीय भाग हिन्दीका गुजराती अनुवाद किया है। छोटी मोटी और भी पुस्तकें गुजराती भाषामें लिखी है। लेखक आयुर्वेदानुरागी और ग्राम्य वासियोंके मानसका अच्छा अभ्यास होनेपर आपने इस ग्रन्थमें सर्व सामान्य सुलभ ग्राम्य वृक्षों, और वेलीओंका वर्णन, गुण धर्म, उपयोग आदि देकर जनताके हितके लिए अच्छा प्रयत्न किया है।

आभार प्रदर्शन

सस्तु साहित्यवर्धक कार्यालयकी ओर से हमारी संस्थाको गुजराती भाषामें—

(१) रामचरित मानस।
(२) मुण्डकोपनिषद्।
(३) ज्ञान भैषज्य मन्जरी।
(४) नीति समुच्चय।

ये चार पुस्तकें भेंट रूपसे भेजी गई हैं साभार हम स्वीकार कर रहे हैं। यथा समय हमारे स्वास्थ्य पत्रमें इनकी समालोचनाकी जायगी।

शक्ति वटी
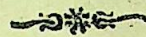
यह औषधि रौप्य वर्क तथा दिव्य गुणप्रद कई वनौषधियां मिलाकर बनाई गई हैं। यह शीतकाल, उष्णकाल आदि सर्व समयमें देहको पुष्ट करनेके लिए व्यवहृत होती है। यह हृदयबल वर्द्धक, वातघ्न, शूल नाशक, अग्निप्रदीपक, रक्तवर्द्धक और स्फूर्ति प्रदान करने वाली है। सौम्य होनेसे पथ्य पालनका अति आग्रह भी नहीं रखा जाता। १ से २ गोली प्रातः, रात्रिको दूधसे सेवनकी जाती है।

मूल्य—१ तोला २-५०, ६ माशा १-३५, ३ माशा ०-७३।

शाही जीवन
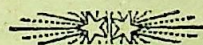
यह जीवन गुलकन्द, मिश्री, केशर, छोटी इलायची और शिवाबूटी आदि मिलाकर बनाया गया है। प्रति तोला चौथाई रत्ती केशर और २ रत्ती शिवाबूटीका अर्क मिलाया जाता है। यह जीवन श्रमहर, मस्तिष्क शामक, निद्राप्रद, मेधावर्द्धक, वातनाड़ियोंके लिए बलवर्द्धक, अग्निप्रदीपक, उदरशोधक, आंतोंको बल देकर संग्रहणीको शमन करने वाला धातुवर्द्धक, नेत्रोंके लिए अति हितकर और मनको प्रसन्न बनाता है। रईसों और अमीरों के लिए अति उपयोगी है। हिस्टीरिया पीड़ित रुग्णाको इसके सेवनसे शांति मिलती है।

मात्रा—३ माशे तक शामको १ समय जलके साथ।

मून्य—५ तोला रु० १-२५, १० तोला २-२५।

मण्डूर भस्म ४० पुटी वारितर (विशेष)
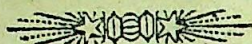
यह भस्म पुराने मण्डूरका विशेष शोधन करके यथा विधि बनायी है। बालक, निर्बल स्त्रियां, प्रसूता सगर्भा और कृश मनुष्योंके लिये तत्काल फलप्रद है। शारीरिक निर्बलता, पाण्डु, शोथ, अस्थिमार्दव, रक्तस्रावसे उत्पन्न निर्बलता, रक्तार्शमें रक्तजाना, चक्कर आना, निद्रानाश, उन्माद, इन को दूर करता है।

मात्रा—१ से ३ रत्ती स्त्रियोंको कुमार्यासवके साथ। बालकोंको माताके दूध या शहद के साथ। सूजन पर मूत्रल क्राथ या त्रिफलासे क्वाथके साथ, पाण्डु और निर्बलतामें शहद-पीपलके साथ। संग्रहणीमें आमका मुरब्बा, कुटजावलेह या दाडिमावलेहके साथ।

मूल्य—१ तोला ४-००, ६ माशा २-१०, ३ माशा १-१०, १॥ माशा ०-६० ।

नागार्जुनाभ्र (विशेष)
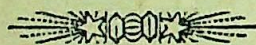
यह नागार्जुनाभ्र सहस्र पुटी अभ्रक भस्मको अर्जुन छालके अष्टमांश क्वाथके साथ एक सप्ताह खरल कराकर गोलियां बनायी गई हैं। श्वास रोगके विषसे उत्पन्न हृद्रोग, हृदयपेशी की निर्बलता, हृदयके दक्षिण कपाटकी विकृति, हृच्छूल वातजशूल, वमन, हृल्लास, अम्लपित्त, रक्तपित्त, क्षय, क्षतविकार, उदररोग, जीर्ण विषमज्वर इन सबपर हितावह है।

मात्रा—½ रत्ती सुबह शाम श्वासकास चिन्तामणि या अन्य विशेष औषधि अथवा शहदसे लेवें।

मूल्य—१ तोला ९०-००, ६ माशा ४५-२०, ३ माशा २२-७०, १॥ माशा ११-४५, ॥। माशा ५-८२ ।

विजय पर्पटी

(पक्षच्छिन्न पारद निर्मित विशेष)

यह पर्पटी रसराजसुंदरके पाठानुसार बनी है। पारद पक्षच्छिन्न बुभुक्षित, षोड्श गुण गंधक जारित लिया है। एवं स्वर्ण, रौप्य, मुक्ता, वैक्रान्त आदि भस्म विशेष प्रकारकी मिलाई हैं।

गुणधर्मः—यह पर्पटी वातज, पित्तज, कफज, आदि सब प्रकारके ग्रहणी रोग, कई वर्षोंकी जीर्ण संग्रहणी, असाध्य संग्रहणी, परिणामशूल, आमशूल, प्लीहावृद्धि, यकृद् विकार, पाण्डु, कामला, अम्लपित्त, प्रमेह और जीर्ण विषम ज्वर आदि रोगोंको दूर करती है।

मूल्यः—१ तोलाका रु० ६०-००, ६ माशेका रु० ३०-२०, ३ माशेका रु० १५-२०, १॥ माशेका रु० ७-६५।

विजय पर्पटी

(स्वर्ण वैक्रान्त प्रधान विशेष)

यह पर्पटी रसराजसुंदरके पाठानुसार ही है। पारद अष्ट संस्कारित और षड्गुण गंधक जारित लिया है। सुवर्ण भस्म, मुक्ताभस्म, रौप्यभस्म, वैक्रान्तभस्म, आदि उत्तम प्रकारके लिए हैं।

गुणधर्मः—पक्षच्छिन्न पारद निर्मित, उपरोक्त पर्पटीके अनुरूप किन्तु न्यून।

मूल्यः—१ तोला रु० ३०-००, ६ माशे रु० १५-२०, ३ माशे रु० ७-६५।

हमारे नये एजेण्टों की सूची

१. गोपाल मेडिकल स्टोर्स	हरदा (म. प्र.)
२. महेन्द्रकुमार सुन्दर लाल जैन	विदिशा (म. प्र.)
३. मथुरादास दामोदरदास संपट	अमरेली (सौराष्ट्र)
४. विजय मेडिकल स्टोर्स	मांगरोल (कोटा)
५. वैद्य राजाराम शर्मा	बेलमपल्ली (आ. प्र.)
६. सोभागमल जोरावरमल	बांरा (कोटा)
७. हरमुखराय रामस्वरूप लावरिया	मु. पो. बघेरा वाया केकड़ी
८. जे. के. एण्ड सन्स	सुदामा चौक, पोरबंदर (सौराष्ट्र)
९. वैद्यरत्न एम. आर. पंड्या	महुवाबंदर (सौराष्ट्र)
१०. श्री धर्मचन्द जी नारंग डाक्टर	मु. पो. भादरा (गंगानगर)
११. श्री किशोरीचन्द्रजी रमेशलालजी	मु. पो. जेतो जि. भटिण्डा
१२. श्री गोविन्दराम वासुदेव राठी	मु. पो. खेर्डा (बुल्डाना)
१३. श्री वैद्य बेणीप्रसादजी शास्त्री	राजकीय आयुर्वेदिक औषधालय मोकलसर
१४. श्रीमान् वैद्य धरीक्षरणसिंहजी C/o वैद्या श्री राजकुमारी देवी	९८६ आर्यनगर, कानपुर
१५. श्री एस. इन्द्रसिंहजी पंजाबी सोपकीपर फेरीरोक बाजार (मनिपुरी)	इम्फाल-आसाम
१६. श्री रतनलालजी कासलीवाल श्री चंदन. धर्मार्थ आ. औषधालय	आलनियावास
१७. श्री पं० कालीचरनजी शर्मा पुतेवाला मन्दिर, २१८ सुभाषरोड़,	गांधीनगर देहली ६
१८. श्री ग्रामीण स्वास्थ्य सुधार केन्द्र	उदयपुर (राज०)
१९. श्री वैद्य कन्हैयालाल अचलवंशी	आसामीरोड, जैसलमेर
२०. श्री गोविंदराम वासुदेव राठी	खेड़ी (बुल्डाना)
२१. श्री वैद्य गोकुलचन्द शर्मा औषधालय सारसोप	वाया सांगानेर (जयपुर राज.)

च्यवनप्राशावलेह (विशेष शिवाबूटी युक्त)

यह अवलेह उत्तम प्रकारके परिपक्वनाजे आंवलोंसे बना है। इसके साथ प्रति तोला २-२ रत्ती शिवाबूटीका अर्क सम्मिलित है। मिश्री मिलाकर विशेष सम्हालपूर्वक बनाया गया है। यह अवलेह कुछ उष्णवीर्य है। धातुओंको बढाता है और सबल बनाता है।

शास्त्रीय च्यवनप्राशावलेहके गुणधर्मका लाभ इससे पूरा पूरा मिलता है। इसके अतिरिक्त क्षय, उरःक्षत, संग्रहणी, अग्निमांद्य, निद्रानाश, हृदय रोग, मस्तिष्क की थकावट इन सबपर विशेषतर लाभ पहुँचाता है।

मात्रा—छोटी आध चम्मच, दिनमें २ बार दूधके साथ।

मूल्य—(बोतलमें) १० तोले २-००, २० तोले ३-७५।

हेमाभ्र रसभस्म

प्रमुख घटक—सुवर्ण-अभ्रक जीर्ण अष्ट संस्कारित पारद भस्म है।

प्रथम पारदके आठ संस्कार करके फिर शुद्ध गंधक-अभ्रकसत्व, सुवर्णमाक्षिक तथा सुवर्ण जारण करके दिव्य रस राजकी सिद्ध अनुभूत विधि पूर्वक भस्म बनाई गई है। इतना परिश्रम व बहुअर्थ साध्य क्रिया अन्यत्र नहीं की जाती। वह हमने हमारे यहां बना कर तैयार की है। उक्त प्रकारकी क्रियासे आप लोगोंको भी विश्वास होगया होगा कि यह रस कितना दिव्य गुणों वाला बन गया है।

जीर्णातिजीर्ण, दुःसाध्य व्याधियों, अकाल वलि पलित युक्त जरावस्था, वीर्यनाश, क्षय, अंत्र विकृति, मंदाग्नि, बल-उत्साहकी कमी, निस्तेजवपुः, रक्तादि धातुओंकी अल्पता आदि विकारोंको बलात्, सत्वर दूर करनेमें उत्तम कार्यकर, आश्चर्योत्पादक रसायन है। **मात्रा**—¼ रत्तीसे ½ रत्ती।

मूल्य—१।। माशेकी शीशीका १२।।) रु. पेकिंग पोस्टेज पृथक्।

प्रकाशक—ठाकुर नाथूसिंह मुद्रक तथा प्रकाशक द्वारा "कृष्णगोपाल मुद्रणालय कालेड़ा" में मुद्रित

स्वास्थ्यदर्शक सचित्र मननीय मासिक पत्र

अङ्क ११] राष्ट्रीय मिति ११ आसाढ़ शक संवत् १८८१ [जुलाई १९६०

स्वामी श्री कृष्णानंदजी महाराज और माननीय श्री मोरारजी भाई देसाई

परिषद् का उद्घाटन करनेके पूर्व माननीय केन्द्रीय वित्त मंत्री श्री मोरारजी भाई देसाई परिषद्के आयोजित सभापति स्वामी श्री कृष्णानन्दजी महाराज कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) से. कालेड़ामें होनेवाले आयुर्वेद उत्थान तथा पारद अनुसन्धान सम्बन्धी बात चीत कर रहे है।

— मूल्य वार्षिक ४) रु० विदेशसे ८ शिलिंग, एक प्रति ४० न. पैसे

प्रकाशक: कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन • कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)

सद्गत ठा० नाथूसिंहजी की अनुपम महिमा का

स्तवन

[रचियता--देवज्ञरत्न विद्याविनोद पं० तुलसीदत्त व्यास कविरत्न, विद्यारत्न, पो० परभनी (औरंगाबाद) सी, आर,]

यजुर्वेद के महा वाक्य* का,
स्वामी जी उपदेश दिया।
ठाकुर साहब शिष्य नत मस्तक,
नित्य निरन्तर ध्यान किया॥
षष्ठ जून सन् साठ ईस्वी,
उगणीसो दिन पावन जान।
योगेश्वर के लोक सिधाये,
कृष्णाचन्द्र का करके ध्यान॥ १॥
भिषक् शिरोमणि नाथूसिंहजी,
ठाकुर साहब केसरे हिन्द।
ध्यान योग अभ्यास अतुल था,
छिपे हुए दूजे अरविन्द॥
एक मास के पूर्व परमपद,
कंवर साहब की माता का।
कारण था सौभाग्यवती पद,
देखा लेख विधाता का॥ २॥

* अहँ ब्रह्मास्मि, मैं ब्रह्म हूँ, (यह भावार्थ है)।

स्वर्गवासी ठाकुर नाथूसिंहजी कालेड़ा-बोगला

जन्म
मार्गशीर्ष शुक्ला १५
सम्वत् १९५२

स्वर्गवास
जेष्ठ कृष्णा १२
सम्वत् २०१७
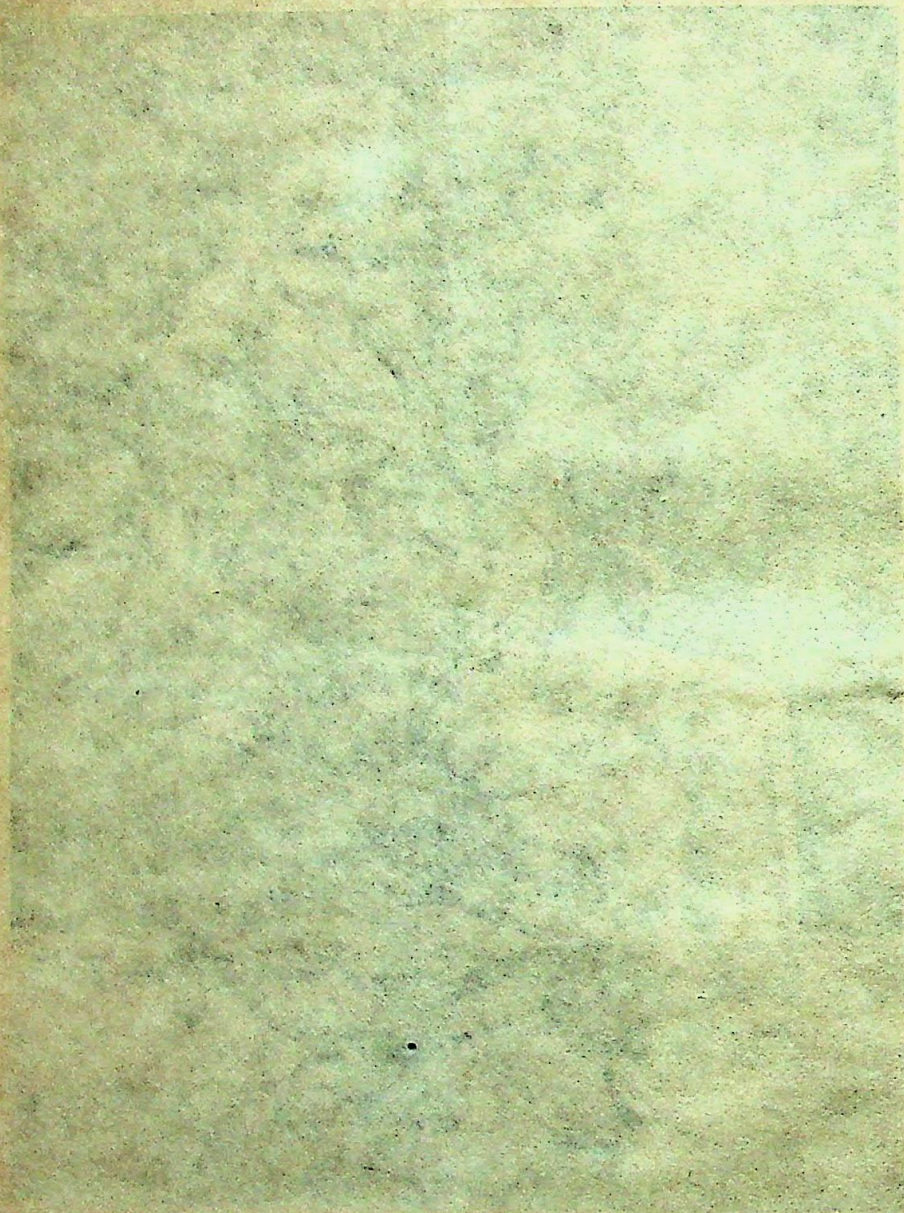
स्वर्गवासी ठाकुरसाहब श्री नाथूसिंहजी (कालेड़ा-बोगला) को

श्रद्धाञ्जलि

ठाकुर साहब श्री नाथूसिंहजी राठौड़ इस्त मरारदार कालेड़ा-बोगला जिला अजमेर का स्वर्गवास सोमवार तारीख ६ जून १९६० सायंकाल को करीब ६ बजे हुआ। उनको श्रद्धाञ्जलि अर्पण करनेके लिए शोक-सभा ७-६-६० को सुबह कृष्ण-गोपाल आतुरालयमें कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन के कर्मचारियों तथा कालेड़ा ग्राम जनता की ओरसे हुई जिसमें राजवैद्य शांतिलालजी जोशी रसायनाचार्य, वैद्य सुदर्शनलालजी तथा श्री शिवनारायणजी पनपालियाने उनके प्रति हार्दिक दुःख प्रकट किया। तथा श्री ठाकुर साहबके आजीवन कार्यकी प्रशंसा की। श्री ठाकुर साहबने अपने जीवनमें पिछले ३० वर्षोंमें जो कृष्ण-गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालयके द्वारा लोक सेवा की है, वह स्तुत्य है। श्री ठाकुर साहबने सन् १९२८ में पूज्य स्वामीजी श्री कृष्णानन्दजीको अपने निवास स्थान गढ़मेंस्थान देकर श्री कृष्णगोपाल आयुर्वेदिकधर्मार्थ औषधालयकी स्थापना करनेमें प्रथम सहायता दी। उनको शुरूसे ही (Homeopathic) तथा आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतिमें अटूट श्रद्धा थी और इससे साथ-साथ लोक सेवाकी प्रगाढ इच्छा भी उत्तरोत्तर इस संस्थाका कार्य आगे बढता गया और पूज्य स्वामीजी महाराज इस संस्थाके प्राण और ठाकुर साहब इस संस्थाकी देह, इस रूपसे कार्यमें लगे रहे। तन-मन-धन से निष्काम भावसे आदर्श कर्मयोगीके तौरपर वे इस संस्थाके द्वारा जनता जनार्दनकी सेवामें लगे रहे। इसी काममें उनकी धर्मपत्नी ठुकराणी साहिबाका भी जो अभी १ माह पूर्व ही परलोकगामी हुई है अपूर्व हाथ था। अपने आखिरी क्षण तक वे लोक-सेवार्थ कार्यमें दृढ रहे। अपने अन्तिम क्षणमें श्री 'अक्षरं ब्रह्म परमं० तथा अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कले- वरम्' (गीता ८।३-४)। इस श्लोकको सुनकर उन्होंने देह त्याग किया। उनकी स्मृति तथा बोल-चाल आखिर तक कायम थी। इच्छानुरूप दानका संकल्प करके गीताके श्लोकको सुनकर उन्होने प्रभु कल्याणराय तथा माता भगवतीकी गोदमें शरण ली।

इस सभा में निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया गयाः—

"हम कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवनके कर्मचारी तथा कालेड़ा ग्रामके निवासी श्री ठाकुर साहब नाथूसिंहजी के स्वर्गवाससे अत्यन्त दुःखी हैं और उन्होंने अपना जीवन सबके साथ अत्यन्त मित्रतापूर्ण व्यवहार रखकर सुहृद्भावसे लोकसेवाका कार्य करते २ बिताया। इसके लिए उनको श्रद्धाञ्जलि अर्पण करते हैं। साथ-साथ प्रभुसे यह प्रार्थना करते हैं कि वे दिवंगत आत्माको तथा कुछ दिन पूर्व उनकी धर्मपत्नी ठकुरानी साहिबाका जो स्वर्गवास हुआ है, उनके भी आत्माको शान्ति प्रदान करें। उनके सुपुत्र कुं० जसवन्तसिंहजी से हम हार्दिक समवेदनाप्रगट करते हैं और प्रभुसे प्रार्थना करते हैं कि वे आप तथा आपके कुटुम्बी जनोंको माता और पिताके स्वर्गवाससे हुए दुःखको सहन करनेमें धैर्य प्रदान करे।

इसके बाद प्रभु प्रार्थनाके उपरान्त सभाका कार्य समाप्त हुआ।

सतीशिरोमणिजीके परमपदका यशोगान

(रचियता--देवज्ञरत्न विद्याविनोद पं० तुलसीदत्त व्यास कविरत्न, विद्यारत्न, पो० परभनी (औरंगाबाद) सी, आर,]

ठकुरानी श्री उदयकुंवरि जी नाम रूपका स्मरण किया।
सामवेद के महावाक्य का, स्वामी जी उपदेश दिया॥
नारायण की अनुकम्पा से, हृदयङ्गमकर ध्यान किया।
माया मोह छोड़ इस जगका, चण भरका न विलम्ब किया॥ १॥
स्वामी कृष्णानन्द कृपा से, में मेरा सब त्याग दिया।
माताजी जसवन्तसिंह के, ठाकुर साहेब की प्राण प्रिया॥
नर देही जीवात्मा तजकर सद्यो मुक्ति प्राप्त किया।
नाथूसिंह जी सहित कुटुम्बी, जन अपने मन धैर्य्य लिया॥ २॥

कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन की औषध पुस्तक बिक्री सम्बन्धी

नई योजना

हमारी ता० १-५-१९६० से जो बिक्री सम्बन्धी नई योजना कार्यान्वित की गई है वह मे के स्वास्थ्य के अंक में प्रकाशित की गई है। उसके उपरान्त कुछ नियमों में वृद्धि हुई है उसका खुलासा निम्न प्रकार है।

(१) एजन्ट की श्रेणियाँ-तीनके बजाय चार की गई है। चतुर्थ श्रेणी प्रादेशिक एजन्ट नामसे है। प्रादेशिक एजन्टको एक विशिष्ट प्रदेशकी एजन्सी दी जावेगी।

उस प्रदेशमें होने वाली बिक्री पर उसको बोनस प्राप्त होगा तथा उस प्रदेशके तमाम बिक्री केन्द्र एजन्ट सामान्य एजन्ट, चिकित्सक एजन्ट उसके अन्तर्गत होंगे। तथा उस विभागमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे होने वाली तमाम बिक्री प्रादेशिक एजन्टकी बिक्री मानकर उनको बोनस तथा पुरस्कारके योग्य होनेपर पुरस्कार दिया जावेगा।

प्रादेशिक एजन्टको डिपाजिट रु. १०००) देना होगा। प्रदेशके अनुरूप बिक्रीकी सालाना कमसे कम गैरेन्टी करनी होगी कि इतनी कमसे कम बिक्री हम करेंगे ही वरना भवनको यह हक होगा कि वर्षान्तमें उनको प्रादेशिक श्रेणिसे सिमित बिक्रीकेन्द्र श्रेणिमें ले आवे।

(२) प्रादेशिक एजन्टके अन्तर्गत बिक्री केन्द्र एजन्ट, सामान्य या चिकित्सक एजन्ट माल खरीद करनेके लिए अपना सम्बन्ध सीधा भवनसे रख सकते हैं या प्रादेशिक एजन्टके केन्द्रसे।

एजन्टको भवनसे सम्बन्ध रखनेपर नियमानुसार थोक भावसे माल मिलेगा तथा वर्षान्तमें नियमानुसार बोनस भी। यह बोनस प्रादेशिक एजन्टके बोनसमेंसे कम करके इनको दिया जावेगा। यह बिक्री प्रादेशिक एजन्टकी मान्य करनेसे उनकी कुल बिक्री बढ कर उस पर बोनस प्राप्त होगा।

(३) बिक्री केन्द्र एजन्टको कोई प्रदेश नहीं है न बिक्रीकी गैरन्टी भी। प्रदेशके साथ गैरन्टी है। इस लिये प्रादेशिक एजन्टको उसके प्रदेशमें होने वाली बिक्री पर बोनसका लाभ होगा। जो एजन्ट या ग्राहक अपना सम्बन्ध प्रादेशिक या बिक्री केन्द्र एजन्टसे रखे उसको अपनी भाव आदिकी शर्तें उनसे तय कर लेनी चाहिये। भवन इन एजेन्टोंके बीचमें नहीं पड़ेगा। मात्र भवनसे सम्बन्ध रखने पर नियमानुसार पूरा लाभ होगा।

(४) हमारे बाहरके केन्द्रोंसे जो सामान्य या चिकित्सक एजन्ट सम्बन्ध रखते हैं उनको एक डजन पर एक बॉटल फ्री मिलने का जो नियम हैं उसके अनुसार बॉटल फ्री नहीं मिलेगी। वह मुफ्त बॉटल सिर्फ भवनसे माल लेने पर ही मिल सकेगी। तथा भाव और बोनस देनेके बारेमें भी हमारे बिक्री केन्द्र एजन्टों ने एतराज किया है कि हम सामान्य या चिकित्सक एजन्टोंको इतना सुभीता नहीं दे सकेंगे इसलिये यह सूचना दी जाती है कोई भी एजन्ट या ग्राहक जो बिक्री केन्द्रसे सम्बन्ध रखना चाहता हो वह अपनी शर्तें उनके साथ करले। भवनसे माल मंगाने पर हम थोक भाव तथा बोनस आदि लाभ दे सकेंगे।

(५) ५००) से उपर माल किमती औषधीयोंका अगर पोस्टसे मंगाया जावेगा तो भवन उसका पोस्टेज खर्च देवेगा। अन्य नियम पूर्ववत् ही हैं।

❀ परामर्श-मंडल ❀

(सम्पादक और प्रबंध सम्पादक के अतिरिक्त)

विषय-सूची

श्रीधन्वन्तरये नमः

(स्वास्थ्य, सुमति और सुख शान्ति का मार्ग दर्शक पत्र)

धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं यतः ।
सर्वकार्येष्वन्तरङ्गं शरीरस्य हि रक्षणम् ॥

संपादकः—
आचार्य नित्यानन्द
भू० पू० उपाध्यक्ष, निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ,
अध्यक्ष, राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन,
भू० पू० सहमन्त्री, नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन,
अध्यक्ष, बिरला आयुर्वेद संग्रहालय, पिलानी (राजस्थान)

सहायक संपादकः—
राजवैद्य पं० शांतिलाल प्रा० जोशी
रसायनाचार्य.

वर्ष ७. अङ्क ११] कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) [जुलाई १९६०

आत्रेय वचन
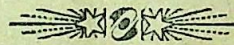
ये नोजसा वर्तयन्ति प्रीणिताः सर्वजन्तवः
यदृते सर्व भूतानां जीवितं नाव तिष्ठति

— हिन्दी पद्य व्याख्या —

जब तक तन में विद्यमान है ओज हमारे ।
तब तक हम हैं हृष्ट पुष्ट औ जीवन धारे ॥
जब शरीर में ओज हमारे शेष कि होता ।
विवश हमारा काल-गाल में तन यह खोता ॥

—रजिस्टर्ड वैद्य सरयूप्रसाद भट्ट 'मधुमय' विशारद
मु० पो० भुवा बिछिया जिला-मण्डला (म. प्र.)

नई औषधि की खोज—

मलेरिया पर अनुभूत

[रचियता—बृजमोहन शर्मा "मोहन" मेहस्वा आयुर्वेद विश्व भारती सरदार शहद चूरू (राज०)]

— १ —

अखिलेस असीम अनुकम्पाने हमें यह,
शुभ दिन दिखलाया आयुर्वेद सागर में।
औषधि जागृत करने यह पद्य बनाया,
है वह बूंटी जिसे पाया जल समीप में॥

— २ —

साहित्य नाम मिला नहीं जो यहाँ दिखलाऊं,
ग्रामीणों से प्राप्त मुझे जिसे यहाँ दर्शाता।
नाम सुना गया था 'जलजीवी' जल पोतिका,
पंकमें पनपता फुट भर ऊंचा होता॥

— ३ —

परिचय शेष और तुम इसका लेलो,
मिलता लगभग तालाबों के समीप में।
पत्र होते नोकाकार चिकने चमकदार,
पुष्प लगते पत्र मूल तने की संधि में॥

— ४ —

पुष्पसे बीज हो जाते निर्मित गुल्फा वत्
वर्षामें उगते शिशिर में पक जाते हैं।
रस कटु पिप्पल वचादि वत है लगता,
गुण अछा हमें यहाँ इस में मिलते हैं॥

— ५ —

गया था जब गऊ एक को जल पिलाने,
मिला वहाँ वह क्षुप जो था कुछ पानी में।
चखा गुण अनुमान कीये मनसे
ज्वरमें करूं प्रयोग हुआ अनुमान में॥

— ६ —

पुनः जाकर सर्वाङ्ग उसके ग्रहण किये,
पुट पाक विधिसे स्वरस प्राप्त कीया।
दीया विषम ज्वर रोगी को यहाँ,
प्रथम दिन था व्याकुल पुनः मुक्त किया॥

— ७ —

किये ताप नष्ट सब अनुभूत योग बना,
भय युक्त प्रयोग जब सूची से कीया।
हार गये क्यूनाइन क्यूनार सोल यहाँ
निज प्रभाव से तब ज्वर नष्ट कीया॥

— ८ —

पढ़नेमें जी नहीं यही विचारा करता
छोटी मोटी औषधिको ले उन्हें पूछता हूँ।
कहो तुम किसके जीवनको अमृत हो
किस रोग की शत्रु हो तुम्हें पूछता हूँ॥

— ९ —

हंसती हैं खिलती प्रसन्न भी जान पड़ती,
पर कौमुदी मुखको छिपाये रहती हैं।
हुआ कुछ ज्ञान बाह्य आक्रमणोंसे डरती,
कहती आंग्ल में हम पहुँचाई जाती हैं॥

— १० —

है धर्म हमारा भारत रजमें मिल जायें,
गुण हैं वे हम में अमृत भी छोटा जहां।
भारतवासी प्रेम से जो ग्रहण करे,
करे सर्व कार्य सिद्ध काल भी डरे यहां॥

— ११ —

कहती हैं आज वनौषधि भारत की,
हमें बेचना छोडो मातृ भूमिकी रक्षा में।
फिर तो हम तुम्हें सर्व सम्पदा सौपें,
देखो फिर भारत चमकेगा भूत तमें॥

— १२ —

प्रिय वैद्य बन्धुओंसे विनय यह करता,
पहचान पूर्ण प्रयोग तब करे।
पिलावें स्वरस पल उचित यह मात्रा,
'मोहन' यह द्वितीय योग भेट करें॥
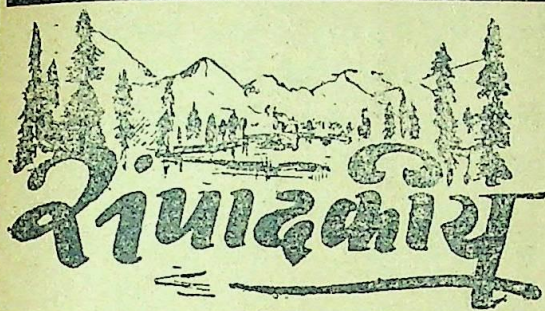
कालेड़ा-बोगलाके इस्तमरारदार और कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवनके प्रमुख स्तम्भ श्री ठाकुर नाथूसिंहजी आयुर्वेद मनीषी विगत तीन वर्षोंसे रुग्ण थे। पिछले दिनों उनके दामादका असामयिक देहावसान हो गया इस भीषण दुर्घटनाको सुनकर श्री ठाकुर साहिबकी धर्मपत्नीका भी हृदयगति रुक जानेसे स्वर्गवास हो गया। आपकी धर्मपत्नी कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवन परिवारके लिए अन्नपूर्णा थीं। आप अत्यन्त पति परायणा थीं और सभीकी देख-रेखमें व्यस्त रहती थीं। हम ये पंक्तियां लिख ही रहे थे कि स्वनामधन्य ठाकुर नाथूसिंहजी साहिबके स्वर्गवासका समाचार मिला। हमारी समझमें नहीं आया कि कंवर साहिब श्री जसवन्तसिंहजी और उनके परिवारको किन शब्दोंसे धैर्य धारण करायें।

श्री ठाकुर नाथूसिंहजी जैसा आदर्श जीवन कोई बिरला ही बिता सका होगा। अपने-अपने जीवनके अन्तिम क्षण तक जनता जनार्दन और आयुर्वेदकी जो सेवा की है, वह आयुर्वेदके इतिहासमें स्वर्णाक्षरों में लिखी जायेगी। उनके सजाये और संवारे हुए मार्ग पर चलकर हम भी अपना जीवन सफल बना सकते हैं।

हमारी "स्वास्थ्य" परिवारकी ओरसे परमपिता परमात्मासे प्रार्थना है कि वह उक्त दम्पतिकी दिवंगत आत्माओंको अक्षय शान्ति देवे और उनके समस्त परिवारको यह शोक सहन करनेकी सामर्थ्य प्रदान करे।

सम्पादकीय टिप्पणियां—

राजस्थानमें वैद्योंका पंजीकरण

सरकारने आयुर्वेदकी उन्नतिके लिए यह जरूरी समझा था कि वैद्योंका रजिस्ट्रेशन किया जाय। इसी विचारधाराके अनुसार विभिन्न प्रान्तोंमें इण्डियन मैडिसन बोर्डोंने वैद्योंके रजिस्ट्रेशनका कार्य हाथमें लिया। राजस्थानमें भी विधानके अनुसार इण्डियन मेडिसन बोर्ड बना। बोर्डने भारतकी सर्वमान्य परीक्षाएं उत्तीर्ण वैद्योंको रजिस्टर्ड करना प्रारम्भ किया। किन्तु अनेक वैद्य और हकीम परीक्षा उत्तीर्ण न होने पर भी सफल चिकित्सक थे, उनका रजिस्ट्रेशन (पंजीकरण) अनुभवके आधारपर किया जाने लगा। अनुभवके आधार पर पंजीकरणका कार्य बन्द हो गया था, किन्तु बोर्डने आवश्यकता समझकर ३१ जुलाई १९६० तकके लिए पंजीकरण फिर खोल दिया है।

राजस्थानमें पंजीकरणकी दो श्रेणियां हैं। और तीसरी श्रेणी उन वैद्योंकी समझनी चाहिए, जिन्हें कि चिकित्साधिकार प्रमाण-पत्र दिया जाता है। इस प्रकार सामान्य ज्ञानके लिए हम राजस्थानके पंजीकरणको तीन भागोंमें बांट सकते हैं।

१. "अ" श्रेणी।
२. "ब" श्रेणी।
३. चिकित्साधिकार (नामांकन)।

इनमें वैद्य, हकीम और धात्रियोंका रजिस्ट्रेशन

तथा नामांकन हो सकता है। यह आवश्यक नहीं है कि राजस्थानमें रजिस्टर्ड होने वाला वैद्य राजस्थानका निवासी भी हो, किन्तु यह जरूरी है कि वह राजस्थानमें समभ्यास करनेका इच्छुक हो। इसके अनुसार राजस्थानसे बाहरके वैद्य और हकीम भी यहां रजिस्टर्ड हो सकते हैं। बोर्डने यह भी निश्चय किया है कि वह अनुभवके आधारपर आवेदन कर्ताओंका पंजीकरण साक्षात्कारके बाद ही करेगा। आवेदन-कर्ताको साक्षात्कार (इन्टरव्यू) का स्थान और समय सूचित किया जाएगा। वे अपने व्ययसे साक्षात्कार के लिए आवेंगे।

जो वैद्य पंजीकरणके इच्छुक हों उन्हें सर्व प्रथम छपा हुआ आवेदन पत्र और मजिस्ट्रेट प्रमाणपत्र प्राप्त करना चाहिए। इन्हें प्राप्त करनेके लिए रजिस्ट्रारको लिखना चाहिए और साथमें अपना पता किया हुआ १५ नये पैसेका लिफाफा भेजना चाहिए। अवेदन पत्र हिन्दीमें है, उसे भली प्रकार भरना चाहिए, क्योंकि आवश्यक पूर्तिके अभावमें आवेदन पत्र अस्वीकार कर दिया जाता है। आवेदन पत्रके पिछली ओर अपना अध्ययन आदिका पूरा विवरण देना चाहिए और अन्तमें अपने यहां की जिला वैद्य सभाके प्रधानमंत्री के हस्ताक्षर कराने चाहिए। इसके बाद अपने यहांके मजिस्ट्रेटसे प्रमाणित कराना चाहिए कि प्रार्थी इतने वर्षोंसे चिकित्साकर रहा है। अब १० रुपयेका पोस्टल आर्डर पोस्ट आफिससे लेकर 'रजिस्ट्रार' राजस्थान इण्डियन मेडिसन बोर्ड, जयपुरके पतेपर भेज देवें। आवेदन पत्र, मजिस्ट्रेटका प्रमाणपत्र, जिला सभाकी प्रामाणिकता एवं दस रुपयेका पोस्टल आर्डर एक साथ भेजना चाहिए। आवेदनपत्र आदि इस प्रकार भेजें कि ३१ जुलाई १९६० तक कार्यालयमें पहुँच जायें, क्योंकि इस अवधिके बादमें प्राप्त आवेदनपत्रों पर कोई विचार नहीं किया जा सकेगा।

जो वैद्य केवल चिकित्साधिकार प्रमाणपत्र नामांकन चाहें उनके लिए मजिस्ट्रेट प्रमाणपत्र भेजना जरूरी नहीं है। उनके आवेदन पत्रपर जिला वैद्य सभा या राजस्थान इण्डियन मेडिसन बोर्डके सदस्यकी प्रामाणिकता आवश्यक होगी। विस्तृत जानकारीके लिए राजस्थान देशीय चिकित्सा अधिनियम सन् १९५३ एवं नियम प्रत्येक २५ नये पैसे एवं आवश्यक पोस्टेज रजिस्ट्रारको मनिआर्डर द्वारा भेजकर प्राप्त कर सकते हैं।

प्रार्थीको अपनी योजनाका निर्णय स्वयं करना होगा कि वह किस श्रेणीमें रजिस्ट्रेशनका अधिकारी है। यदि प्रार्थीको यह प्रतीत हो कि साक्षात्कारमें उसके साथ न्याय नहीं किया गया है, तो वह ३ मास के अन्दर अपनी अपील कर सकता है। अपीलोंको सुननेके लिए 'परामर्शदात्री समिति' बनी हुई है।

हमें ज्ञात हुआ है कि राजस्थानमें अनुभवके आधारपर पंजी करण तथा नामांकनकी यह अवधि अन्तिम है। अतः योग्य वैद्योंको निर्धारित नियमोंके अनुसार अपना पंजीकरण करा लेना चाहिए।

पारद अनुसंधान कार्य

कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनने पारदपर अनुसंधान कार्य प्रारम्भ किया था। आयुर्वेद संसारको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि संस्था इस कार्यमें तल्लीन है और सफलता भी मिलती जा रही है। पारद सम्बन्धी कुछ प्रयोगोंका दिग्दर्शन बम्बईमें आयुर्वेद संशोधन परिषद्के प्रथम अधिवेशनपर किया गया था। केन्द्रीय वित्तमन्त्री श्री मोरारजी भाई देसाईने इस अवसरपर इस क्रियाकलापकी जानकारीमें बड़ी दिलचस्पी ली। निर्बीजवेध तककी क्रिया करली गई है। इस सफलतामें राजवैद्य पं० शान्तिलाल प्राणजीवन जोशी रसायनाचार्यका अथक परिश्रम निहित है। आयुर्वेद जगत् संस्थामें हो रहे इस ऐतिहासिक कार्यके अन्तिम परिणामोंकी प्रतीक्षामें है।

'दाता' के जीवन की झलक और उनका स्वर्गवास

[ठाकुर रघुवीरसिंह राठौड़, कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)]

ग्रीष्म ऋतु और ज्येष्ठ मासकी द्वादशी को जब कि भगवान् भुवन भास्कर समस्त प्राणियोंको अपनी प्रचण्ड किरणोंसे झुलसकर मध्याह्नोपरान्त अस्ताचल की ओर प्रस्थान कर रहे थे। मृगतृष्णा रूपमें बहता हुआ पवन भी मन्द-मन्द समीर रूप बन कर चल रहा था। घड़ी ने टन-टन करके ६ बजा दिये और कृष्ण गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालयके संचालक ठाकुर नाथूसिंहजी राठौड़ (दाता) अपने जीवनकी अन्तिम घड़ियोंकी प्रतीक्षा करते हुए अपने उदार करमें पवित्र सुरसरीका जल लेकर तुलसीदल सहित गौ, भूमि और अन्नका दान कर रहे थे। समस्त परिवार समूह उनको अपने पुत्रों, सुहृदों, और भृत्यों सहित चारों ओर घेर कर बैठे था। किसी ओर उनके द्वारा ही रचित कल्याणके भजनोंका गायन हो रहा था तो दूसरी ओर गीताका पाठ। समस्त पाप विमोचक भगवान् कल्याण राय (डिग्गी जयपुर) का चित्र जो कि उनकी इच्छासे बृहदाकार बनाया हुआ था सम्मुख दर्शन दे रहा था कि एकाएक गीताका रहस्यमय पावन श्लोक सुनते सुनते ही उन्होंने इस अक्षयशरीरको सदाके लिए त्यागकर अपने परिवारको आंसू बहाते हुए छोड़ दिया। शीघ्र ही यह समाचार विद्युत्वत् कालेड़ा और बोगला में प्रसारित हो गया। सत्वर दाह-संस्कारकी सम्पूर्ण सामग्री जुटा दी गई और उनके अचैतन्य शरीरको स्नान करवा कर उत्तम वस्त्राभूषणोंसे सुशोभित कर अपने परिवारको (स्त्री समाजको) परिपाटीअनुसार अन्तिम दर्शन करवाया गया और शोक विलाप करती हुई बहिन, पुत्रों, पुत्रवधुओं और पौत्रादिकोंका वह करुण रुदन तब और भी बढ़ गया। सायं ६॥ बजनेके पश्चात् शीघ्र ही अरथी बनाई गई और शवयात्रा आरम्भ हुई। अबीर गुलाल व रुपयोंकी उछाल करते हुए पवित्र रामनाम के उच्चारणसह अपने पुत्र, भाञ्जे और पौत्रादिकोंके कन्धोंपर यात्रा करता हुआ शव श्मशान भूमि में पहुँचा। नारियल, चन्दन, पीपल, तुलसी, काष्ठादिसे सुसज्जित चिताका शीघ्र ही निर्माण किया गया और विकम्पित हाथोंसे शवको चितापर रखकर उनके वरिष्ठ पुत्र श्री जसवन्तसिंहजी ने चिताकी परिक्रमा करके दाह संस्कार सम्पन्न किया और फिर अन्तमें अपने पिताको दिव्य लोकमें पहुँचा देनेके लिए घृत द्वारा मंत्रानुसार होम किया। तत्पश्चात् संतप्त जनसमूह शोक करता हुआ सूर्यास्तके पश्चात् वापस लौट आया।

वंश परिचय

आपका जन्म राठौड़ वंशमें हुआ। आपके दादा का नाम श्री महताबसिंहजी था और पिताका नाम श्री गोपालसिंह जी। अपने पिताके तीन पुत्ररत्नोंमेंसे आप तीसरे पुत्र थे। आपके दो बहिनें थीं।

जन्म

आपका जन्म मार्गशीर्ष शुक्ला १५ सम्वत् १९५२ को हुआ। जन्मके ४॥ वर्ष पश्चात् ही पिता श्री गोपाल सिंहजीका स्वर्गवास हो गया। आपका पालन पोषण अपनी माता द्वारा ही हुआ।

बाल्यकाल और शिक्षा

नाबालिग होनेसे ठिकाने की व्यवस्था कोर्ट ऑफ वार्डस द्वारा होने लगी। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा एक वर्ष तक केकड़ीमें सन् १९०२ में हुई। बादमें मेयो कालेज अजमेरमें सन् १९०३ में प्रवेश कराया गया जहां आपको ८ वीं कक्षामें भरती किया गया। संस्कृतमें आपकी रुचि रहनेसे तथा खेल-कूदमें विशेष अभिरुचि होनेके कारण सन् १९१५ और १९१६ में लगातार २ वर्ष तक चांदीके प्याले इनाममें प्राप्त किए। सन् १९१७ में आपने डिप्लोमा उत्तीर्ण किया जिसमें संस्कृतमें प्रथम श्रेणीमें विशिष्टता प्राप्त की तथा हिन्दीमें द्वितीय श्रेणीमें रहे। इस तरह आपकी शिक्षा पूर्ण हुई।

युवावस्था

मेओकॉलेजसे लौटकर आपने २ मास तक कोर्ट ऑफ वोर्डसके कामदारके पास कार्य सीखा और फिर दो मास बाद ठिकानेके संचालनके पूर्ण अधिकार प्राप्त किये। रियासत बूंदीसे यहांका सम्बन्ध अपने दादा श्री महताबसिंहजीके समयसे ही बना रहा है अतः आप की इच्छा भी बूंदी दरबारसे मिलनेकी हुई। बूंदी दरबार श्री रघुबीरसिंहजीने आपको फाल्गुन शुक्ला १० को ताजीम और सोना प्रदानकर सम्मानित किया। इसके उपलक्षमें कालेड़ा आकर उत्सव किया गया और जनतामें विशेष छूट दी गई।

आपका प्रथम विवाह लदाना (जयपुर) के ठाकुर श्री कल्याणसिंहजीकी बहिनके साथ सम्वत् १९६९ में हुआ। प्रथम शादीसे ३ पुत्र व ४ कन्याएं (जिनमें से एक पुत्र और एक पुत्री तो मेओकॉलिजमें विद्याध्ययन के समय ही हो गए थे) हुई।

इसी समय आपको शनिकी सढसती लगी और जब छोटे पुत्र ६ दिनके ही हुए तब ही प्रथम पत्नीका स्वर्गवास हो गया। अगले वर्ष आप और आपके प्रथम पुत्र दोनों बीमार पड़े और प्रथम पुत्रका १२ वर्षकी अवस्थामें स्वर्गवास हो गया। और भी कई विपत्तियाँ उस समय आपके सम्मुख आई। केकड़ीके तत्कालीन डाक्टरने आपको दूसरी शादी करनेकी सलाह दी और शादी होनेके करीब १॥ माह बाद ही दूसरी पत्नीका भी स्वर्गवास हो गया। एक वर्ष पश्चात् आपने तीसरा विवाह मालवा प्रान्तमें लागथली ठिकानेमें किया परन्तु सन्तति कुछ भी नहीं हुई।

प्रारम्भमें गरीबोंकी सेवा

मेओ कॉलेजमें पढते समय ही आपने First aid की शिक्षा प्राप्त की और सन् १९१७ से दवाईयाँ वितरण करनेकी शौक लग गई। जनताके अशिक्षित व धनहीन होनेके कारण रोगग्रस्त हो जानेपर अधिक दुखी होकर असमयपर ही कालके गालमें चले जाना देख आपका दिल पसीज उठा और ईश्वरकी प्रेरणासे एक पेटी होमियोपैथिक दवाइयोंकी मंगवा ली और उस विषयकी एक पुस्तक भी। इसमें भी अनेकोंको धार्मिक आपत्तियाँ आती थी जिससे आपको दुःख होता था। इस तरह १२ वर्ष तक आपने गरीबोंकी सेवा की।

स्वामी श्री कृष्णानन्दजी से परिचय

सन् १९३० में ठाकुर श्री शिवसिंहजी देवली (अजमेर) द्वारा हुआ। आपने कालेड़ामें पदार्पण कर आयुर्वेदिक दवाइयाँ बनाना सिखाया और एक सरल पुस्तक अपने हाथोंसे ही लिखकर रास्ता सुगम बना दिया। शुरू शुरूमें औषधि बनाना, निदान करना, औषधि देना, सामान्य फोड़े का आपरेशन करना स्वयं ही करते रहे।

सन् १९३९–४० अर्थात् सम्वत् १९९६ के अकाल में आपके मनमें जन सेवा करनेके लिए एक विशिष्ट इच्छा जाग्रत हुई और कालेड़ाका कार्य अपने कर्मचारियोंपर छोड़कर, घरके वैभवसे दूर रहते हुए झोंपड़ियोंमें रहकर फैमिनका चार्ज आफिसर पद धारण कर तल्लीनतासे निर्धन व भूखी जनताकी सेवा की। आपकी इस सेवासे सन्तुष्ट होकर सरकारने

'कैसरेहिन्द' पद प्रदान किया।

साहित्य सृजनका कार्य

आपको धार्मिक विषयमें अत्यन्त श्रद्धा थी। कविता दोहे चौपाइयोंकी रचनाका भी अधिक शौक था। इसका परिणाम यह हुआ कि आपने सर्व प्रथम कल्याण बिड़द बत्तीसीको भजनोंमें लिखा। तत्पश्चात् रामचरितमानसका मारवाड़ी खेलके रूपमें दोहों और चौपाइयोंके रूप संपादन किया। कल्याण चरित-का लावणीरूपमें संपादन किया। अपने बड़े उत्तरा-धिकारी वरिष्ठ पुत्र श्री जसवन्तसिंहजी को जब मृगीका रोग उत्पन्न हुआ तो आप बहुत ही दुःखी हो गए और महामाया दुर्गादेवी को प्रसन्न करनेके लिए दुर्गाभजना-वलीका संपादन किया। और देवीने भी अपने भक्तकी अन्तरात्माकी करुण पुकार सुनकर कष्ट निवारण किया। अन्तिम पुस्तक आपने विविधसंग्रहका संकलन अपनी अस्वस्थावस्थामें बड़ी तत्परतासे किया।

सम्वत २०१३ में आपको संथरज्वरसे कठरोहिणी हो गई और अजमेरसे लगभग १ मासतक इलाज होता रहा। इसी समय तीर्थस्वरूपा आपकी माताका स्वर्गवास हृदयगति बन्द होकर हो गया। दाहसंस्कार व द्वादशाह आपकी बिना जानकारीमें ही सम्पन्न किए गए। बादमें आपको अपनी माताके स्वर्गवाससे बड़ा दुःख हुआ और उसको जलांजली दी।

महान् व्याधि

नवम्बर १९५७ की रात्रिमें आपके पेटमें एकाएक बड़ा तीव्र दर्द उत्पन्न हुआ। विक्टोरिया अस्पतालके २ बड़े डाक्टरोंकी रायसे आपकी बृहदन्त्रमें चीरा लगाया गया और रुकावट (Obstruction) मानकर आँत काट दी गई। कृत्रिम गुदमार्ग पेटमें बनाया गया। डाक्टरोंको सन्तोष न होनेसे जब दुबारा ऑपरेशन किया तो जाना गया कि Obstruction के स्थान पर कैंसर था, अतः इस तरह आपका जीवन कष्टमय बन गया।

पति-पत्नीका जन-सेवामें रत रहना

आपकी तीसरी पत्नी अत्यन्त साध्वी थी। प्रत्येक दुःखीके साथ उनकी सहानुभूति रही। संस्थामें आने वाले गरीब प्रतिष्ठित और सम्मानित व्यक्तियोंकी भोजन सम्बन्धी व्यवस्था मध्य रात्रिको भी कर देना उनका सहज काम था। अपने पतिके आपरेशनके समयसे ही विशेष रूपसे भगवद् आराधना व कठिन व्रतादि करने लगी। पतिकी सेवा करना उनका प्रधान काम बन गया और सन् १९५७ से बिस्तर पर शयन करना सर्वथा छोड़ दिया। पतिके पलंगके पास बैठे रहकर सेवा करना ही उनके जीवनका प्रधान काम था। नींद आती तो भला नहीं तो कुछ परवाह नहीं। अन्तमें आपको अपने जामाताके निधनका दुःखद समाचार सुनकर महान् शोक होनेके कारण बड़ा धक्का पहुँचा और दूसरे दिन इस नश्वर देहका परित्याग कर दिया।

अन्तिम जीवन

आपका अन्तिम जीवन आपरेशनके कारण १९५७ से कष्टप्रद रहा। और इसी अवस्थामें विविध संग्रहका संपादन किया। अपनी जीवनी लिखी परन्तु कागजके अभावके कारण उसका प्रकाशन नहीं हो सका। जबसे आपकी अन्तिम पत्निका स्वर्ग-वास हुआ आपने अपने नियमित आहारका भी त्याग कर दिया। केवल कुछ मात्रामें चाय व फल-रस लेकर ही जीवनको सुरक्षित बनाए रखा। लगभग एक माह भी समाप्त नहीं हुआ कि आपकी यह जिज्ञासा तीव्र होने लगी कि एकादशी कब है? जब एकादशीका पावन दिन आ पहुँचा और पुण्यमय वेला द्वादसीमें आई तो आपने अपने इष्टदेव श्री कल्याणरायजी की मनोहर छबिको निहारते निहारते गीताके पावन मंत्रोंको सुनते-हुए इस असार संसारसे अपने परिवारके मध्यमें ६५ वर्षकी अवस्थामें सदाके लिए बिदा लेली।

ॐ शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!

श्री ठाकुर नाथूसिंहजी का आजीवन वृत्त

लेखक—राजवैद्य शान्तिलाल प्राणजीवन जोशी

"दानं वित्तादतं वाचः कीर्ति धर्मौ तथायुषः।
परोपकरणं कायादसारात्सार माहरेत् ॥"

अर्थात्:—इस असार संसारमें शरीरसे दान, धन, आदर, वाणी, कीर्ति, धर्म, जीवनमें परोपकार जैसे कर्म करना यह ही साररूप माना जा रहा है।

चिलचिलाती धूपसे सन्तप्त भूमिपर जब वर्षाकी झड़ी लगती है, तब वायु मण्डल अकस्मात ही परिवर्तित हो जाता है, साथमें पृथ्वीके पटलपर छाये हुए सुषुप्त बीजोंमेंसे अंकुर फूटकर हरियाली भूमि बनाकर वायुमण्डलको मिट्टीके ईत्तरसे सुवासित बना देता है। ऐसे कालेड़ा ग्राम नरेश श्री ठाकुर नाथूसिंहजी रोगोंसे पीड़ित जनताको देखकर आप सन्तप्त थे, तब आकस्मिक गुर्जर देशवासी विद्वद् यतिवर श्रीमान् माननीय कृष्णानन्द स्वामीजीने कालेड़ा पधारकर आयुर्वेदके ज्ञानकी वर्षा करके ठाकुर साहबके सन्तप्त हृदयको शीत करते हुए, जन कल्याणके बीजांकुरोंको उद्भवाकर स्वास्थ्य रक्षाके यज्ञका प्रादुर्भाव किया।

यह यज्ञ आजीवन पर्याप्त होने वाला नहीं था, यज्ञके आजीवन ब्रह्मा है श्रीमान् स्वामीजी कृष्णानन्द जी महाराज और आजीवन यजमान थे ठाकुर नाथूसिंहजी! एक है त्यागी उच्चकोटिके सन्त, और दूसरे थे गृहस्थी राजवी।

गृहस्थाश्रमके पथपर चलते हुए सेवा यज्ञमें लगन लगाकर अपने गृहस्थाश्रमको सेवामय बनाकर, आप, सुपत्नी तथा सुकुमारोंसह पथदर्शी श्री श्री. स्वामीजीकी आज्ञानुसार तन, मन, धन, देकर अचल, अटल, यजमान आखिरके श्वास तक रहे।

आपको इस यज्ञ कार्यमें न था कोई स्वार्थ, और न थी किसी प्रकारकी एषणा। श्री ठाकुर साहेबने सुसंस्कृतिकी रक्षाके लिए शुद्ध भावनासे जनकल्याण हेतवः आयुर्वेदको अपनाकर सेवाकार्य शुरू किया था। रोगियोंकी सेवाके साथ-साथ आये हुए अपरिचित अतिथियोंकी सेवा, सुश्रुषा, भोजन प्रबन्ध आदिसे नीज आप्त जन मानकर बहुत प्रेमसे आप उनका आदर करते थे।

धर्मवृत्तिको ग्रामीणोंमें जीवित रखनेके हेतु आपने संगीतमें रामचरितका वर्णन करके व्यवहार, नीति, सेवा, धर्म, कर्तव्यका पालन आदिका पाठ अशिक्षित ग्रामीण जनताको सिखानेका प्रयत्न किया था, आपकी कवित्व शक्तिका ख्याल जनहृदयमें प्रेमलक्षणा भक्तिको गाते हुए सुमधुर सरल भाषामें भगवान डिग्गीपतीके अनुरागी आजीवन भक्त बने रहे थे।

"कराल कालके गालमें कौन नहीं समाये? सब समाये", किन्तु जिसने किसी प्रकारकी एषणा बिना अपना जीवन जन सेवार्पण किया, इसीमें ही लगन लगाकर जनकल्याणके लिये जीवन न्योछावर किया, उनकी सेवाका सुफल, यशकीर्ति द्वारा आज चारों ओर वायुमण्डलमें सुवासित होकर फैल रहा है, यही "अमरत्व" है। आप सुकीर्ति पाकर "अमर" हो गये धन्य है आपको।

जनहृदयमें आपका औदार्य, मृदुभाषिता, विनयशीलता, सत्कारकी उदात्तभावना, आतिथ्यपरायणता, ममता और निःस्वार्थताका अखंड स्रोत, इससे ही सब विभूसे नम्र भावसे प्रार्थना करते हैं, कि आपकी आत्माको प्रभु पूर्ण शांति प्रदान करें। इतिशम्

ठाकुर साहब की स्मृति

लेखक—शिवनारायणजी पनपालिया, आकोला

दैवी सम्पत्के पुरुष इस भूगर्भ पर कुछ विरले ही अवतीर्ण होते हैं।

अभयं सत्त्वं संशुद्धिर्ज्ञान योग व्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दयाभूतेष्व लोलुप्तं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥
तेजः क्षमा धृतिः शौच मद्रोहो नातिमानिता।
भवन्ति संपदं दैवीमभिजातस्य भारत॥
॥ गीता० १६-१।२।३॥

वे धर्मवृत्तिको धारण करते हैं। उनमें निर्भयता, अंतःकरणकी शुद्धि, ज्ञान, समता, भूतमात्रके प्रतिदया, दान, तप, सरलता, सत्य, त्याग आदि सद्गुण प्रधानतासे रहते हैं। वे स्वयं सद्गुणोंको धारण करके अपने जीवनको तो कृतार्थ करते ही हैं। किन्तु अन्य भूतमात्र जो उनके सम्पर्कमें आते हैं उनके लिये भी आदर्श हो जाते हैं। ऐसे ही कालेड़ा नामक छोटेसे ग्राममें ठाकुर साहेब नाथूसिंह जी का जन्म ६४ वर्ष पूर्व हुआ। उन्होंने राजपूत घरानेमें जन्म होनेके कारण तथा इस्तमरारदारीका कार्य होनेसे ठिकानेका काम करते हुए लोगोंके साथ दयाका सद्व्यवहार रखा।

गृहस्थाश्रम सादगीसे व्यतीत करते हुए जनतामें जनार्दनकी भावना रखकर जन स्वास्थ्य रक्षणार्थ आयुर्वेदको अपनाकर लोक कल्याणार्थ कार्य करते रहे। वे कृष्णगोपाल धर्मार्थ औषधालयके मूलभूत स्तम्भ थे। उनके बाद उनका कार्य उनके सद्पुत्र जसवन्त सिंहजीने अपने सिरपर लिया है तथा पिताके सदृश सेवाभावसे आगे बढ़नेका निश्चय किया है।

उनके अनुरूप उनकी धर्मपत्नि उदयकुंवर साहिबा भी थी। पतिके कार्यमें योग्य सहयोग देकर सेवाभाव से कार्यमें संलग्न थी। पतिकी तीन वर्षसे अस्वस्थता के कारण उनको अति दुःख था। तथा यह प्रबल इच्छा थी कि मैं पतिके हाथ इनके पूर्व ही परलोक सिधारूं। सती साध्वीकी इच्छाकी पूर्ति होती है। पतिसे पूर्व ही एक मास वे परलोकगामी हुई। आजन्म पति तथा गुरुरूप स्वामी श्री महाराजकी सेवामें लगी रही—उनकी सेवासे ही स्वामी श्री यहाँ सन्तुष्ट रहे तथा यहाँका कार्य व्यापक हो गया।

ठाकुर साहेबका स्वप्न अपने ग्रामको आदर्श तथा अग्रसर करनेका था। स्वामी श्री महाराजकी कृपासे और उनकी सेवासे आज कालेड़ा भारत भरमें अपने आयुर्वेदिक कार्यके लिये विख्यात हो गया है।

गत तीस वर्षसे लगातार सेवा कार्यमें लगे हुवे वे कर्मवीर आदर्श कर्मयोगीकी तरह जीवन व्यतीत करते रहे। प्रारब्ध भोग भोगना ही पड़ता है। पेटका आपरेशन, चिकित्सामें भूल इससे उनको शारीरिक कष्ट प्राप्त हुआ। किन्तु वे निर्भयतासे सहन करते हुये कालयापन करते रहें।

सुख दुःखे समे कृत्वा लाभा लाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि॥
॥ गीता २।३८॥

जीवन संग्राममें डटे रहे। पत्निके बिछुड़नेके बाद उन्होंने देह त्यागका निश्चय कर लिया। समय आया, ६ जून १९६० को परलोककी तैयारी हुई। दोपहरको तीन बजे हाथ पैर ठंडे होने लगे। नाड़ीने जगह छोड़

दी। वैद्य शान्तिलालजी आये। पारद युक्त हेमगर्भ पोटलीकी मात्रा दी। पुनः उसी अवस्थामें आये। वैद्य श्री ने तीन घण्टेका समय है कहके कुटुम्बको सूचना दी। उनसे संकल्प आदि कराके बातचीत करते हुए छः बजे पुनः कमजोर होने लगे। गीताके अष्टम अध्याय का मैंने पाठ शुरु किया।

ज्योंही अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं यातिनास्त्यत्र संशयः॥
॥ गीता ८। ५॥

इसका पाठ पुरा हुआ अपने अंतिम सास लिया। अनन्तकी गोदमें विलीन हुए।

आपकी स्मृति यहां की जनताके हृदयमें गढी हुई है। कालेड़ा तथा बोगला ग्रामकी अधिकांश जनताने उनको बाल दिये, सफेद पगड़ी बांधी। यह आपके सद्भावका ही प्रतीक है। आपकी स्मृति उनके जानने वालोंके दिलमें हर हमेश बनी ही रहेगी। आपके सद्-पुत्र श्री जसवन्तसिंहने भी माता तथा पिताके उपलक्ष में [illegible] फैमिली वार्ड औषधालयमें उनके स्मृतिमें बनानेका निश्चय किया है। यूं तो यह औषधालय जबतक रहेगा तबतक ठाकुर साहेबकी स्मृति चिरंजीवी बनी ही रहेगी। देह का अन्त होनेपर भी आप अपने कीर्ति तथा सेवा कार्यके द्वारा अमर ही हैं। इति।

सती शिरोमणि अखंड सौभाग्यवती ठकुरानी साहिबा श्री उदयकवर जी कानावत की

स्मृति में दो शब्द भेंट

भजन नं० १

(राग आसावरी ठेका दीपचन्दी)

सती जी थांकी कैसे याद भुलांवा। थांका अब कब दर्शन पावां॥टेर॥
धर्म धारिणी सदा चारिणी, कहां तक महिमा गावां।
सतकी सागर सब गुण आगर, सतीत्व पर बलि जावां॥ सती जी ॥१॥
पतिव्रत धर्म निभायो पूरो, जगमें तब जश गावां।
कुल तारण श्री उदयकुंवर का, गुण फजरां में गावां॥ सती जी ॥२॥
सती शिरोमणि शीलवती का, कर दर्शन हर्षावां।
तारा अहिल्या कुन्ती द्रोपदी, जिन समान शिर नावां॥ सती जी ॥३॥
कौन पुकार सुनै दुःखिया की, विनती जाय सुनावां।
गुण की गाहक कान्हावत का, नित प्रति मंगल गावां॥ सती जी ॥४॥
स्वर्ग लोक में आप सिधारी, हर दम ध्यान लगावां।
अब की बेर आ दर्शन देवो, तो मोती अभय पद पावां॥ सती जी ॥५॥

—बारहट मोतीलाल ऊन्हड़का मु० बोगला पो० कालेड़ा-कृष्णगोपाल

नव युवकों का रोग—

स्वप्न दोष (Night Fall.)

लेखक--कविराज डा० नरेशचन्द्र गुप्ता बी० डी० डी० आई० एम० एस०
(वेद भवन) गणेशपुरा दिल्ली ६

भारतकी बढ़ती हुई सभ्यताके साथ साथ तामसिक आहारका सेवन भी दिन प्रति दिन बढ़ रहा है और उसके साथ-साथ स्वप्नदोष भी प्रगतिकर रहा है। क्यों कि इसका मूलकारण तामसिक आहार और आज-कलका बढ़ता हुआ फैशन है। 'स्वप्न दोष' का शब्दार्थ निद्राके समय किसी प्रकारकी विकृतिका उत्पन्न होना है। यह विकृति अधिकतर अर्ध निद्रावस्थामें उत्पन्न होती है। जबकि मनुष्य पूरी तरहसे जागा नहीं होता और गन्दे विचारोंमें लीन रहता है। गन्दे विचारोंकी उत्पत्ति मनसे होती है और चंचल मन ही मनुष्यको इस कार्यके उत्पन्न करने वाले विचारोंमें फंसाता है। प्रथम तो मनुष्य इसको भ्रम मात्र ही समझता है परन्तु नींदके खुल जाने पर अर्थात् पूर्ण जाग्रतावस्थामें मनुष्य रातमें हुई वीर्य च्युतिको देखता है जिससे उसका मन चिन्ताकी ओर अग्रसर होता है और यही चिन्ता इस रोगको अन्तमें ज्यादा फैलानेमें सहायता देती है।

आधुनिक युगमें इसको "Night Discharge" के नामसे पुकारते हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि यह रोग रातको ही होता है परन्तु किसी भी समय हो सकता है। एक बार नींदके खुल जाने पर जब मनुष्य दोबारा सोनेका प्रयत्न करता है तो उसका मन दूषित हो जाता है और सम्भोग जैसी अवस्था उत्पन्न होकर वीर्य च्युति हो जाती है। कई रोगी कहते हैं कि रात को सम्भोग आदि का स्वप्न न आने पर भी यह रोग हो जाता है परन्तु ऐसी अवस्था रोगीके चिकित्सा न करवाने पर और वीर्यके पतले पड़ जाने पर होती है।

आजकल ९० प्रतिशत लोगोंमें यह रोग होता है। परन्तु फिर भी प्राणी मात्र इस रोगकी ओर विशेष ध्यान नहीं देता, क्योंकि वह शर्मके मारे इस रोगका किसीसे उल्लेख नहीं करता और अपेक्षासे यह रोग बढ़ता रहता है। अन्तमें जब इसकी अवस्था अन्तिम आ जाती है तो चिकित्सासे भी कोई लाभ नहीं होता। यह रोग उष्ण देशोंमें विशेष तौर पर मिलता है। अतः भारतकी जनता इस रोगसे विशेष रूपसे पीड़ित रहती है। यह नवयुवकों अर्थात् १७ से ३० वर्षकी आयु और अविवाहितोंमें अधिक होता है।

कारण—असंयमी पुरुष गन्दे आचार विचार वाले गन्दे और सम्भोग आदिके वर्णन वाले उपन्यास पढ़ने, सिनेमा, नाटक, सांग आदि देखनेके शौकीन एवं दुषित वातावरणमें रहने वाले नवयुवकोंमें यह रोग अधिक मिलता है। जो मनुष्य जिह्वाका स्वाद ही अपना भोजन समझते हैं और खट्टे, मीठे, तीक्ष्ण अर्थात् गर्म मसाले आदि वीर्यको पतला करने वाले पदार्थोंका अत्याधिक सेवन करते हैं वही इस रोगसे ग्रसित होते हैं।

शुद्ध आचार विचार वाले सादा भोजनके सेवक मनुष्यको यह रोग नहीं होता है।

विशेष तया यह रोग कब्ज (Canstipation) होनेपर अधिक होता है। क्योंकि शरीरमें पड़ाहुआ मल, मन और शरीर दोनोंको दुषित करनेका कारण बनता है।

लक्षण—अर्ध निद्रावस्थामें वीर्य च्युति होना ही इस रोगका विशेष लक्षण है। इसके साथ-साथ कब्ज का भी इतिहास मिलता है।

निषेध:—स्वप्नदोषसे पीड़ित रोगी संक्षेपमें यदि निम्न चीजोंका त्याग करें तो वह शीघ्र निरोग हो सकते हैं।

(१) भारी एवं देरसे पचने वाले पदार्थोंका सेवन

(२) मल मूत्र आदिके वेगोंका रोकना।

(३) गर्म एवं तले हुए पदार्थोंका सेवन।

(४) भोजनकी इच्छा न होते हुए भोजन करना या अजीर्णावस्थामें भोजन करना।

(५) कामोत्पादक पदार्थ, गन्दे विचार, स्त्री सम्बन्धी विलासी पुस्तकों एवं उपन्यासका अध्ययन।

(६) सुगंधित तैल, साबुन, क्रीम, पाऊडर आदि फैशनेबल चीजोंका निरन्तर सेवन।

(७) सवारी एवं अधिक परिश्रम जैसे घोड़ा, साइकल आदिकी सवारी।

पथ्यः-अर्थात् निम्न चीजोंका सेवन हितकारी हैः-

(१) रोगीको कब्ज न होने देवें।

(२) सदैव लघु एवं सुपाच्य भोजनका सेवन करें।

(३) मात्रासे ज्यादा या कम न खाएं अर्थात् मात्रा में भोजन करें।

(४) सूर्यके छिप जानेके बाद दूध सर्वथा न पीयें और जल बहुत कम।

(५) नित्य ताजे जलसे स्नान करें और पुरुष अपने गुप्तांगोंको प्रतिदिन साफ करें।

(६) रात्रिको सोते समय घुटनों तक पैरोंको तथा कोहनी तक हाथोंको शीतल जलसे धोकर सोवें।

(७) सदैव पीठके बल न सोकर करवटके बल सोया करें।

(८) बिस्तर बहुत नर्म एवं गुदगुदा नहीं होना चाहिए।

(९) गन्दे नावलका अध्ययन और सिनेमा आदि का न देखना।

(१०) पुरुष ब्रह्मचर्यका पालन करे।

तीन उपस्तम्भ अर्थात् आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य का पालन यथा विधि करना चाहिए।

सफल चिकित्सा

योगः—(१) इलायची बीज चूर्ण व इसबगोलकी भूसी समभाग आमलेके रसमें खरल कर बैर जैसी गोलियां बनावें। एक एक गोली प्रातः सायं गायके दूधके साथ सेवन करनेसे यह रोग जल्द ही शान्त हो जाता है।

योग—(२) मूंगा (प्रवाल) १ रत्ति, पोस्त छिलका इसबगोल ४ माशे, वर्क चांदी एक कुचला भूना आधी रत्ती, मिलाकर बना लें। १ माशा १ मात्रा

भोजन से डेढ़ दो घण्टे पूर्व एक पाव दूधसे तथा शामको ५-६ बजे पानीके साथ सेवन करनेसे लाभ होता है।

योग—(३) बीदाना ३ माशा, सफेद मूसली ३ माशा, इसबगोलका छिलका १ तोला, सालब मिश्री ३ माशा गर्म दूध डेढ़ पाव खांड उचित मात्रामें।

इसकी खीर बनाकर ठण्डी होने पर दिनमें दोबार चांदीकी भस्म आधी रत्ती तथा लोह भस्म १ रत्ती इस में मिलाकर ४० दिन तक लगातार सेवन करें।

इसके सेवनसे वीर्य गाढ़ा तथा शीघ्र पतन और स्वप्नदोष रोगका जड़से नाश हो जाता है।

(४) भांग १ तोला, दालचीनी आधा तोला, जिमिकन्द एक तोला, ३-३ माशेकी मात्रामें प्रातः एवं सायं सेवन करें।

(५) चूनेका पानी अकेला भी इसके लिए उत्तम प्रयोग है।

(६) शंख पुष्पी १० तोला, ब्रह्मी ५ तोला, गुलाब १० तोला, गुलशनफ़सा १ तोला, इलायची आधा तोला, शुद्ध मधु गुलकन्द मिलित डेढ़ पाव।

इस योगका आधा तोला प्रातः एवं आधा तोला रात्रिके समय सेवन करना अति उत्तम है।

(७) त्रिफला चूर्ण डेढ़ तोलाकी मात्रामें दें।

(८) वंग भस्म २ रत्तिकी मात्रामें मक्खनसे दें।

(९) सूर्यतापी शिलाजीत प्रातः सायं दूधसे देवें।

(१०) बबूलका गोंद १० तोला, सफेद मूसली १० तोला, बीदाना १० तोला, ताल मखाना ६ तोला, इलायची २ तोला, मिश्री २० तोला इनके चूर्णकी मात्रा डेढ़ तोला प्रातः एवं डेढ़ तोला सायं लें।

इन योगोंमेंसे कोई भी योग प्रयोग किया जावे। सब योगोंका उद्देश्य एक ही है कि उत्पन्न हुए विकार को रोका जावे।

नोट—चिकित्सामें विशेष ध्यान कब्जका रखें और रोगीको कब्ज न होने देवें।

विशेष सूचना—वंग भस्ममें त्रिवंग, स्वर्ण वंगका विचार भी करलें। क्योंकि इनमें वंग मिलनेसे सबको चिकित्सामें वंग भस्मके नामसे कह दिया है।

आयुर्वेद संशोधन प्रथम परिषद् बम्बई

आयुर्वेद संशोधन परिषदका प्रथम अधिवेशन ६ व ७ मईको बम्बईमें भारतीय विद्या भवनके गीता-मन्दिरमें सम्पन्न हुआ।

भारत गणराज्यके **वित्तमन्त्री माननीय श्री मोरारजी भाई देसाई** ने इस अधिवेशनका उद्घाटन किया।

इस अधिवेशनकी **अध्यक्षता स्वामी श्री कृष्णानन्दजी महाराज,** कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर) ने की।

इस अवसर पर देशके विभिन्न भागोंसे आये, आयुर्वेद अनुसंधानकर्ता उपस्थित थे।

वैद्य दत्तात्रय शास्त्री जल्कूर (नसीराबाद) के द्वारा मंगलाचरण सम्पन्न होनेके बाद वैद्य वामनराव दीनानाथजी ने इस परिषदकी रिपोर्ट पढ़कर सुनाई, उन्होंने अपनी रिपोर्टमें इस बात पर प्रकाश डाला कि इस प्रकारके परिषदकी स्थापनाकी आवश्यकता क्यों हुई आयुर्वेदके विभिन्न अंगोंपर जो संशोधनात्मक कार्य अपने अपने ढंग पर चल रहे हैं उनको एक व्यवस्थित स्वरूप देने तथा उसमें साम्यता लानेके उद्देश्यसे ही इस परिषदका आयोजन हुआ। अनुसन्धानकर्ताओंको एकत्र होने तथा चर्चा-विचार-विमर्श करनेका सुअवसर प्रदान करनेकी दृष्टिसे एक अधिवेशन आयोजित करने का निश्चय किया गया।

उस समय यह निश्चित हुआ कि जो वैद्य महानुभाव आयुर्वेदिक अनुसन्धान कार्यमें संलग्न हैं, वे अपने अनुसन्धानका विवरण देते हुए निबन्ध परिषद के पास भेजें। परिषद उनकी विद्वान वैद्योंसे जांच करवाकर संस्थाकी ओरसे योग्य निबन्ध लिखने वालों को पारितोषिकमें "सुवर्ण पदक" देगी।

इसी निश्चयानुसार—

१. वैद्य गोपीनाथ व्यास उज्जैन,

२. वैद्य वी. ए. बेडेकर पूना,

३. वैद्य रविशंकर जे. पंड्या बम्बई,

इनाम प्राप्त करनेमें सफल हुए थे। उनको सभामें उपस्थित रहनेकी आज्ञा दी गई थी।

उन्हीं को श्री माननीय वित्तमंत्री श्री मोरारजी भाईके हाथसे सुवर्णपदक प्रदान किया गया था।

इसके उपरान्त वैद्य वामनरावजी ने माननीय अतिथि श्री मोरारजी भाई देसाई से अधिवेशनका उद्घाटन करनेका अनुरोध किया। पारदके शिव-लिंग पर पुष्प चढ़ा कर व बुभुक्षित पारदमें स्वर्ण-पत्रका नैवेद्य देकर उद्घाटन क्रिया सम्पन्न हुई। १० मिनट में ही वे स्वर्णपत्र पूरेके पूरे नष्ट हो गये। यह क्रिया राजवैद्य शान्तीलाल प्रा० जोशी रसायनाचार्य जो अभी कालेड़ा कृष्णगोपालमें पारद अनुसन्धानका कार्य कर रहे है उनके द्वारा सम्पन्न हुई।

माननीय श्री मोरारजी भाई देसाई ने अपने उद्घाटन भाषणमें कहा:—

प्राचीन कालमें ऋषि-मुनियों ने तपस्याके द्वारा आयुर्वेदका साक्षात्कार किया था। उसके लिये उन्हें कोई अनुसन्धान नहीं करना पड़ा। वे जगतके मंगल की कामनासे युक्त थे अतः सब सिद्धियां उन्हें स्वतः अनायास प्राप्त हुई।

आधुनिक समयमें वैद्य उतने ही साधु-स्वभावके तथा परमार्थी हों यह सम्भव नहीं है। इसका यह अर्थ नहीं कि आजकल सन्त-पुरुष नहीं रह गये। भारत देश तो सन्तोंकी निधिसे ही धनी है। भारतकी संस्कृति इन्हींसे बनी है। आयुर्वेद उसी संस्कृतिका एक प्रधान अंग है।

आयुर्वेदका जब तक सम्पूर्ण ज्ञान न हो, यह कैसे कहा जा सकता है कि उसमें अनुसन्धानकी आवश्यकता नहीं है? और किसी ने यह दावा तो किया नहीं कि उसे सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त है। अतः ज्ञानकी आकांक्षा

से सदैव अनुसन्धानमें जुटे रहना चाहिये। जो सत्य है उसे ढूंढनेका सतत प्रयास करना चाहिये। साधना से संशोधन प्राप्त होगा। संशोधन बिना ज्ञान नहीं प्राप्त होगा और ज्ञान स्वयं वेदका स्वरूप है। ज्ञान प्रयोगसे नहीं हासिल होगा। वह तो दृष्टिसे मिलता है और दृष्टि सिद्ध अवस्थामें ही मिल सकती है। आयुर्वेदका नाड़ी विज्ञान इसका एक ज्वलन्त उदाहरण है। नाड़ी-परीक्षण आपको गुरू-परम्परासे ही मिलना चाहिये। गणित एवं विज्ञानके आँकड़ोंसे उसे नहीं जाना जा सकता। पुस्तकोंसे भी उसे नहीं प्राप्त किया जा सकता।

आजके वैज्ञानिक आयुर्वेद शास्त्रको शास्त्र मानने के लिये तैयार नहीं। जो वैज्ञानिक कहते हैं कि यह शास्त्र नहीं—विज्ञान नहीं है वे स्वयं वैज्ञानिक नहीं हैं। क्योंकि वे आयुर्वेदको बिना समझे ऐसा कहते हैं। जिन्होंने उसका अध्ययन नहीं किया वे उस पर कुछ कहनेके अधिकारी कैसे हो सकते हैं ?

मुझे खुशी है कि आप संशोधनकी व्यवस्था कर रहे हैं। संशोधन सत्यकी खोज है। सत्यकी खोजमें असहिष्णुता नहीं हो सकती। आप सहिष्णु बनें। अपने प्रयत्नमें आत्मविश्वासके साथ लगे रहें हैं।

उन्होंने कहा कि आयुर्वेद दुनियांकी एक पुरानी विद्या है। वह खतम नहीं की जा सकती। उसे कौन खत्म कर सकता है ? दुनियांमें सबके लिये स्थान है फिर आयुर्वेद तो इस देशकी संस्कृतिका प्रतीक है, इस आत्मविश्वाससे आपको अपने काममें जुटना चाहिये।

इसके उपरान्त राजवैद्य शान्तिलाल प्राणजीवन जोशीसे प्रार्थना की गई कि वे वित्तमन्त्रीजी के समक्ष अपने पारदके प्रयोग दिखलायें।

उन्होंने तीन दिन पूर्व बम्बईके युनिवर्सल हेल्थ इन्स्टीट्यूटके पंचकर्म विभागमें वैद्य वेणीमाधव शास्त्री जोशी, वैद्य जी० वी० ऊर्फ नाना साहेब पुराणिक, वैद्य रामशिरोमणि द्विवेदी, वैद्य नारायण हरि जोशी, वैद्य एम० वाय० लेले, वैद्य डी० एस० अन्तरकर, वैद्य सोमेश्वर भट्ट, वैद्य नवनीतलाल पण्डया, वैद्य महाशंकर जी, वैद्य वामनरावजी, वैद्य हरिलाल प्राणजीवन जोशी, वैद्य वासुदेव मूलशंकर द्विवेदी एवं युनिवर्सल हेल्थ इन्स्टीट्यूटके मन्त्री, सेठ श्री ईश्वरलाल जी पारेखके समक्ष चार सम्पुटोंमें निम्न प्रकारसे द्रव्य रखे।

(१) एक सम्पुटमें ताम्रका मोटा टुकड़ा (सिक्का) पारद भस्मके ऊपर रखा और उसके ऊपर फिरसे पारद भस्म रखी गई।

(२) दूसरे सम्पुटमें भी प्रथम सम्पुटकी तरह ही पदार्थ रखे गये।

(३) तीसरे सम्पुटमें १० तोला वंग पारद भस्मके बीच रखी गयी। ऊपर नीचे पारद योगकी भस्म रही।

(४) चौथे सम्पुटमें भी तीसरे सम्पुटके अनुसार ही द्रव्य रखे गये।

इन चारों सम्पुटोंको कपड़मिट्टीसे बन्द कर दिया गया। भट्टीमें चारों सम्पुट रखकर ३०-३० कण्डोंकी आंच दी गई। उपर्युक्त सभी महानुभावोंको साक्षी रख कर भट्टी जलाई गई। फिर कमरेको ताला बन्द कर दिया गया। उसकी ताली वैद्य सोमेश्वर भट्टको सौंपी गई।

दूसरे दिन एक ताम्रका तथा एक वंग भस्मका इस प्रकार दो सम्पुट निकाल लिया।

शेष दो सम्पुटोंको ३०-३० कण्डोंकी आंच फिर दी गई। ताला पुनः बन्द कर दिया गया। बादमें दूसरे दिन ता० ६ मईको वे सम्पुट वैसे ही निकाल कर अधिवेशन स्थल पर लाये गये। माननीय श्री मोरारजी भाई देसाईके समक्ष खोलने पर परिणाम इस प्रकार निकले :—

(१) ताम्बेका एक टुकड़ा काटने पर उसमें पीला रञ्जन हो गया था।

(२) दूसरा ताम्बेका टुकड़ा काटने पर सफेद पाया गया।

(३) तीसरे सम्पुटमें वंग का रंग बदल कर श्वेत हो गया था।

(४) चौथे सम्पुटमें वंगका रंग सफेद हुआ पर

उसमें काठिन्य पाया गया।

इसके अतिरिक्त एक अन्य प्रयोग सभाके समक्ष किया गया। दालचिकना और शीशेके पतले पत्रोंका संयोग कर एक कटोरेमें डाला गया। उसीमें जल भर कर धुँआ पैदा किया गया। उपर्युक्त पदार्थोंके मिश्रण के कारण उष्णता पैदा हुई जिससे शीशेके पत्रोंकी भस्म हो गई और दाल चिकनामेंसे पारद अलग हो गया।

वैद्य शान्तिलाल जोशी जी ने अपने वर्षोंके अनुभव एवं परीक्षणको सबके समक्ष वर्णित किया। उन्होंने पारद संशोधन कार्यमें आने वाली बाधाओंसे सबको परिचित कराया। किन किन परिस्थितियोंमें अच्छे परिणाम प्राप्त हो सकते हैं इसकी भी जानकारी दी। उन्होंने प्रयोगोंमें प्रयुक्त द्रव्योंके गुण-दोषकी विवेचना की। उनके पाण्डित्य पूर्ण एवं गाम्भीर्य पूर्ण विवेचनको उपस्थित सभी वैद्य महानुभावों ने बड़े मनोयोगसे सुना इसके उपरान्त प्रश्नोत्तर रूपमें उपस्थित सभी जिज्ञासु वैद्य महानुभावोंकी शंकाओंका उन्होंने निराकरण किया। उनके द्वारा प्रयोग-सिद्ध अनेक द्रव्योंको भी इस अवसर पर वैद्य समाजके अवलोकनार्थ प्रदर्शित किया गया।

तदनन्तर अध्यक्ष महोदय स्वामी श्री कृष्णानन्दजी महाराजका अध्यक्षीय भाषण उनके अस्वस्थ होनेके कारण कृष्णगोपाल आयुर्वेद भवनके ट्रस्टी श्री० पनपालियाजी ने पढ़कर सुनाया। बादमें अध्यक्ष महोदय के प्रति आभार प्रदर्शनके उपरान्त उस दिनकी कार्यवाही पूर्ण हुई। (भाषण स्वास्थ्य मईके अङ्कमें छपा है)

दिनांक ७ मई को प्रातः ८ बजेसे पुनर्वसु आयुर्वेद महाविद्यालय, में वैद्य दत्तात्रय शास्त्री जलूकरजी की अध्यक्षतामें निबन्ध-वाचन हुआ।

सायं ३ बजेसे अधिवेशनकी कार्यवाही स्वामी श्री कृष्णानन्दजी महाराजकी अध्यक्षतामें पुनः प्रारम्भ हुई।

उस समय वैद्य वामनरावजी ने उपस्थित वैद्य समाज से अनुरोध किया कि सर्व प्रथम तो यह निश्चय कर लीजिये कि इस परिषदका नाम संशोधन परिषद, अनुसंधान परिषद, गवेषणा परिषद या अन्य कोई नामाभिधान करना, इसके अतिरिक्त संशोधनकी आवश्यकता, सम्प्रति चल रहे अनुसन्धानके औचित्यानौचित्य पर विचार तथा यदि मार्गदर्शनकी आवश्यकता हो तो उसके स्वरूप आदिका निर्णय कर लेना है। इसके अतिरिक्त जहाँ जहाँ संशोधन कार्य हो रहा है, वहां वहांसे सहयोग प्राप्त कर संशोधन कार्यको एक व्यवस्थित स्वरूप देने तथा शक्ति और धनका अपव्यय संशोधनके क्षेत्रमें न होने देनेके लिये उचित व्यवस्था करनेकी अपील की।

इसके पश्चात् वैद्य वेणीमाधव शास्त्री जी ने पारद संशोधन पर पुनः प्रकाश डाला। पण्डित हरिदत्त शास्त्री जी ने अपने भाषण में कहा:—

उन्होंने रिसर्च शास्त्रके मूलमें तर्क शास्त्रको बतलाया। उन्होंने कहा कि यथार्थको सिद्ध करनेके लिये तर्क शास्त्रकी रचना हुई। तर्ककी अप्रतिष्ठाकी जो बात शास्त्रोंमें कही गई है वह आत्मा के लिये है। वह ब्रह्म का ही स्वरूप है अतः उसकी अप्रतिष्ठा नहीं। उन्होंने युक्तिको त्रिकाल सिद्ध बताया। उन्होंने तर्कको शंका प्रवर्तक और शंका निवर्तक बतलाया।

उन्होंने शास्त्र चर्चाको परमावश्यक बताया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि प्रकरणके अनुसार शब्दार्थ को ज्ञात करनेमें जुट जाना चाहिये। उसके बिना किसी भी निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सकता।

पण्डित हरिदत्त शास्त्री जी के भाषणके उपरान्त वैद्यरत्न पण्डित शिवशर्माजी ने अपने भाषणमें कहा:—

आयुर्वेदमें स्वतन्त्र अनुसन्धानकी आवश्यकताको अस्वीकार नहीं किया जा सकता। किन्तु सबको एक ही दिशामें अनुसन्धान करनेके लिये बाध्य नहीं किया जा सकता। विज्ञानमें किसी प्रकारका बन्धन नहीं हो सकता। लोग अपनी-अपनी रुचि और प्रवृत्तिके अनुसार अनुसन्धानकी दिशा छाँटनेके लिये स्वतन्त्र हैं।

गुप्त प्रयोगोंके सम्बन्धमें बोलते हुए उन्होंने कहा कि हमारे यहाँके कुछ विद्वान् कोई कोई प्रयोग किसी को बतलानेके पक्षमें नहीं थे। प्रयोगोंकी गोपनीयता को बड़ा महत्व दिया जाता था। ऐसे विद्वान् कुछ

प्रयोग इस आधार पर बता दिया करते थे कि उन्हें अर्थोपार्जनका साधन न बनाया जाय।

उन्होंने कहा कि जो प्रयोग ग्रन्थोंमें नहीं मिलते केवल अधिकारी विद्वानोंको ही ज्ञात हैं ऐसे गतिशील प्रयोगोंके नष्ट हो जानेकी पूरी आशंका रहती है, क्यों कि यदि योग्य अधिकारी नहीं प्राप्त हो सकता तो वे गूढ़ प्रयोग उसी विद्वान्के साथ चले जाते हैं।

उन्होंने वैद्योंको आयुर्वेदीय दृष्टिसे ही विचार करने की सलाह दी। उन्होंने कहा कि आयुर्वेदमें वत्सनाभ को गोमूत्रमें शोधित करनेका विधान वर्णित है। यदि आप उसके स्थानपर रासायनिक क्रियासे स्पिरिट द्वारा शुद्ध वत्सनाभका प्रयोग करेंगे तो दोनोंका गुण-धर्म अलग होगा। गोमूत्रसे शुद्ध वत्सनाभ हृदयको बल देता है जब कि स्पिरीटसे शुद्ध वत्सनाभ हृदयको उतना बल नहीं देता। उन्होंने कहा कि रासायनिक शुद्धीकरण (केमिकल प्यूरीफिकेशन) हमारे यहाँ नहीं है। उन्होंने वैद्योंको सलाह दी कि वे पाश्चात्य चिकित्सा प्रणालीके सिद्धान्तोंके अनुकूल आयुर्वेदीय सिद्धान्त ढूंढनेकी मनोवृत्तिका परित्याग कर दें। पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति अपने सिद्धान्त स्थिर नहीं कर पायी और उसके अनुकरणमें प्रवृत्त होकर अपने शास्त्रीय सिद्धान्तोंकी अवहेलना नहीं करनी चाहिये। बहुत सम्भव है कि हमें घूम फिर कर बादमें इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़े कि हमारा पुराना सिद्धान्त ही ठीक था। उन्होंने कहा कि पाश्चात्य चिकित्सा पद्धतिके जो भी नूतन सिद्धान्त स्थापित हों उनकी जोड़के सिद्धान्त आयुर्वेदमें ढूंढना उचित नहीं। वास्तवमें हमें यह मनोवृति ही नहीं रखनी चाहिये कि जो कुछ भी पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली प्रतिपादित करे वह सब हमारे शास्त्रोंमें है और हमें उसकी पहलेसे ही जानकारी है। उन्होंने कहा कि यह स्वयं इस बातका परिचायक है कि हमें अपने आपमें कुछ कमी अनुभव होती है। हमें इस मनोवृत्तिका परित्याग कर देना चाहिये।

वैद्य वामनरावजी ने घोषित किया कि सबकी अनुमतिसे सम्प्रति "अनुसन्धान" शब्द ही रखा जा रहा है।

वैद्य वेणीमाधवशास्त्री जोशीने कहा कि ग्रन्थ लेखकके हर एक वचनमें अनुसन्धानकी दृष्टिसे जो जो मुद्दे दीखें वे अलग कर उन पर संशोधनात्मक विचार और प्रयोग करने चाहिये।

शारीर, क्रिया-शारीर, वनस्पति इन सबपर पहले वैचारिक प्रकाश डालकर पश्चात् उसके अनुसार उसका प्रत्यन्तर (वेरीफिकेशन) देखना चाहिये। संशोधन कुल ३ प्रकारके होते हैं:-(१) शास्त्रमें जो सिद्ध हैं पर लुप्त हो गये हैं उनका प्रत्यन्तर करना। (२) संशोधनात्मक विचार या प्रयोग चालू हो और उसमें कोई नई बात स्पष्ट हो तो उसको भी संशोधन कहते हैं। (३) क्या शोधन करना है यह निश्चित करके उसके अनुसार शोध निकालना यह तीसरे प्रकारका संशोधन है। पहले संशोधनमें प्रत्यन्तर देखना रहता है। शेष दोनों में बहुधा प्रयोग (एक्सपेरिमेण्ट) किये जाते हैं।

संशोधनके लिये उचित मार्गदर्शनके सम्बन्धमें यह निश्चय किया गया कि कुछ विद्वान् वैद्य महानुभावोंका सहयोग प्राप्त कर यदि यह कार्य सुचारू रूपसे वैद्य-समाजके समक्ष रखा गया तो उसका परिणाम अच्छा निकलेगा। वैद्य वामनरावजीसे यह कार्य करनेकी प्रार्थना की गई।

इसके पश्चात् भारतके समस्त प्रान्तोंसे प्राप्त इस अवसरके शुभ-सन्देश पढ़ कर सुनाये गये।

इसके उपरान्त स्वामी श्री कृष्णानन्दजी महाराज को पुष्पहार किये, और उनकी ओर से वैद्य शान्तिलाल जोशीने आशीर्वचन कहे।

आगामी वर्ष परिषदका आयोजन करनेके लिये वैद्य दामोदर अनन्त हलशीकर (हुबली) से प्राप्त निमन्त्रण सहर्ष स्वीकार किया गया। इसके लिये उनको धन्यवाद देना भी निश्चित हुआ।

इसके उपरान्त वैद्य वामनरावजीने उपस्थित सभी वैद्य महानुभावों तथा जिनके सन्देश प्राप्त हुए थे उन सबका आभार माना।

भगवान् धन्वन्तरिकी प्रार्थनाके उपरान्त अधिवेशन विसर्जित हुआ।

राष्ट्रीय विकास और आयुर्वेद

लेखक—धर्मकवि पं० ईश्वरदासात्मज यमुनाप्रसादशर्मा पालीवाल वाशिष्ठ वैद्यशास्त्री,
वैद्यभूषण विदर्भ आयुर्वेद रजिस्टर्ड चिकित्सक

स्वतन्त्रता और शान्ति मनुष्यका जन्मसिद्ध अधिकार है। अपने इस मूल अधिकारकी प्राप्तिके लिए वह सदासे प्रयत्न और संघर्ष करता चला आया है। किन्तु मानव सभ्यताके विकासकी यह सबसे बड़ी विडम्बना हो रही है कि मनुष्य अपनी स्वतन्त्रता और शान्तिको प्राप्त करनेके लिये, प्राप्त करके उन्हें सुरक्षित रखनेके लिये और सुरक्षित रखनेकी आकांक्षा से उन्हें समृद्ध बनानेके लिये दूसरोंको कुचलता रहा है। विश्वका अधिकांश इतिहास समृद्ध और शक्तिवान राष्ट्रोंकी इन्हीं अनधिकार चेष्टाओंका लेखा है। विश्व के अनेक राष्ट्रोंकी अतीत अथवा वर्तमान पराधीनता का कारण भी यही रहा है।

राष्ट्रका निर्माण बड़े-बड़े गगन चुम्बी प्रसादों भवनों या राज्य कार्यालयों आदिसे नहीं होता। राष्ट्रका निर्माण होता है उसके चरित्रके उच्च स्तरसे, स्वास्थ्यसे जिस देशके निवासियोंका चरित्र बल स्वास्थ्य बल जितना ऊंचा होता है; वही देश वास्तवमें समुन्नत कहलानेका अधिकारी है।

भारत राष्ट्रके निर्माणके लिये आज हमारे सामने पाश्चात्य देशोंका आदर्श है। हम उसी आदर्शको सामने रखकर अपनी प्रवृत्तियां कर रहे हैं। प्रत्येक बातमें उन्हींकी नकल हम करते हैं। खान-पान वेष-भूषा रहन-सहन आचार विचार आदि सभीमें हम पाश्चात्य देशोंको समुन्नत मानकर उन्हींका अनुकरण करते चले जा रहे हैं और हम मान रहे हैं कि हमारे राष्ट्रका निर्माण हो रहा है और हम उन्नतिकी पराकाष्ठापर पहुँच रहे हैं।

राजृदीप्तौधातुसे "सर्वधातुभ्यःष्ट्रन" इन औणादिक सूत्रसे ष्ट्रन प्रत्यय करने तथा 'व्रश्च' इस सूत्रसे षत्व करनेपर 'राष्ट्र' शब्द बनता है। मुख्यतः इसका अर्थ जनपद होता है। भारतीय राजनीति शास्त्रके अनुसार राज्यके सात अङ्ग हैं—(१) स्वामी, (२) अमात्य, (३) राष्ट्र, (४) दुर्ग, (५) कोष, (६) सेना, (७) मित्र आदि हैं।

आज जिधर दृष्टि जाती है पीले चेहरे झुर्रियां पड़ी हुई आखोंके नीचे गड्ढे, कमर टूटी हुई चलनेमें हाँफी आजावे, ऐसी सूरतें आज बहुधा भारत निवासियोंकी दृष्टि गोचर होती है। किसीको कब्जियत (कान्स्टीपेशन) किसीको प्रमेह (स्पर्मेटोरिया) ही दुःखी कर रहा है किसीको रक्तविकारकी बिमारी है तो कोई क्षय (तपेदिक) से बेचैन है। कभी कभी हम अपनी इस दीन दशापर इतने विवश हो जाते हैं कि आत्म हत्या करनेको जी चाहता है और सहसा मुंहसे निकल पड़ता है क्या जीवन रखनेमें कुछ सार है। किन्तु घबरानेकी कोई बात नहीं हताश मत हो रोगसे छुटकारेका उपाय सोचो।

पंचवर्षीय योजनाओंके प्रचार तन्त्र द्वारा जो कुछ भारतमें हो रहा है, विकास योजनाओं द्वारा नाटक सिनेमा ग्राम-ग्राममें दिखाया जाता है मुफ्त जिसमें ग्राम जिला सेवाधिकारी तालुकाधिकारी और सब डिवीजनल अधिकारी आदि साथमें रहते हैं क्षय विरोधी मोरचेमें बी० सी० जी० के टीकोंपर जोर दिया जा रहा है और मलेरिया विरोधी मोरचे भी डी० डी० टी० पावडर का प्रचार करके आयुर्वेदका सोंठ, मिर्च, पीपरि, धन्या केथ्या मेथ्या, काढा आदि द्वारा उसका उपहास किया जाता है हमारी उन सरकारी प्रचारकोंसे प्रार्थना है वे बिना सोचे विचारे अनुभव कीये किसी भी बातका ऐसा खुला प्रचार न करें।

इस निर्धन देशमें अधिकांश जनता अभावग्रस्त है; किसी भी मंहगी चिकित्सा व्यवस्थाकी योजना सफल नहीं हो सकेगी उदाहरणार्थ भारतमें २५ लाख

व्यक्ति हर साल क्षयसे पीड़ित रहते हैं उनमें प्रतिवर्ष ६ लाख तो स्वर्ग यात्रा ही कर जाते हैं जबकि समस्त स्वास्थ्य सदनोंमें ७ या ८ हजारसे अधिक रोगी स्थान नहीं पा सकते जो स्वास्थ्य सदनोंके चौकीदारसे लेकर उच्चाधिकारियोंको खुश कर सकते हैं बाकीको कौन पूछता है। अधिक स्थान बनाना बड़े खर्चका कार्य है। क्षय रोगकी चिकित्सा और रोकथामके लिये एलौपैथिक विदेशी साधन स्टेप्टोमाइसिन पैराएमिनो सेलिसिलिक एसिड व बी० सी० जी० आदि औषधियां आज तक अनुभव करनेपर वे निरर्थक व तीव्र विष प्रमाणित भी हो चूके हैं।

भारतमें प्रतिवर्ष १० करोड़ व्यक्ति मलेरियासे पीड़ित होते हैं जिनकी चिकित्सा व्यवस्थापर कमसे कम ३० करोड़ रुपया व्यय होता है फिर भी १० लाख से अधिक तो यमपुरी पहुँच जाते हैं। कुष्ठका प्रसार भी भारतमें अत्यधिक हो रहा है संसारमें कुष्ठके जितने रोगी हैं उनका ५ वां भाग अर्थात् १० लाखसे अधिक कुष्ट रोगी भारतमें ही वर्तमान है। इसी प्रकार केंसर और नजले आदिके घातक रोगोंके रोगी लाखों की संख्यामें विद्यमान है। इन रोगोंकी रोक थाम और चिकित्सामें असफल एलौपैथिक प्रयत्नोंमें अरबों रुपया व्ययकर स्वास्थ्य सेवाओंका विकास नहीं किया जा सकेगा।

३५ करोड़ ६३ लाख जन संख्याके इस भारतमें प्रथम पंचवर्षीय योजनाकी पूर्तिके लिए १०४२०२६९ करोड़ रुपयोंका धन था, इसका करीब २० भाग अर्थात् १ करोड़ २५ लाख रुपये स्वास्थ्य सेवाओंके लिये रखे गये आयुर्वेदके लिए। इसमेंसे केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रणालयने एक और जहां ९९ करोड़ ६२ लाख ६५ हजार रुपयोंके व्ययकी व्यवस्थासे विदेशी एलोपैथिक पद्धतिके प्रसारकी योजना बनाई दूसरी ओर भारतीय चिकित्सा पद्धति व अन्य समस्त पद्धतियोंके विकासके लिए सम्मिलित रूपसे केवल ३७ लाख ५ हजार रुपये स्वीकृत किये।

एक ओर भारतके १० प्रतिशत नागरिक भी विदेशी चिकित्सा पद्धति द्वारा जिसके केवल ३५ हजार ही चिकित्सक हैं पूरा लाभ स्वास्थ्यका नहीं कर पाते ९९॥ प्रतिशतसे भी अधिक धनराशिकी योजनाओंका बनाया जाना दूसरी ओर ६० प्रतिशत नागरिकोंकी चिकित्सा व्यवस्था करने वाली भारतीय पद्धतिके लिए जिसके चिकित्सक ५ लाख हैं आधा प्रतिशतसे भी कम धन स्वीकार किया जाना विकासशील प्रयत्न है क्या? एलोपैथी पद्धतिमें कोई ऐसी सफल व्यवस्था नहीं है जिसके आधारपर वह लोगोंको स्वाभाविक रूपसे स्वस्थ रख सके और चिरंजीवी बना सके।

भारत सरकारके महामन्त्रियोंसे भारतके राष्ट्रपति से स्वास्थ्य मन्त्रियोंसे भारतकी राष्ट्रीय सभा कांग्रेसाध्यक्ष व मन्त्रियोंसे जोरदार शब्दोंमें निवेदन है कि वे विदेशिताको त्यागें स्वदेशी बने भारतीय आरोग्य शास्त्रोंको देखें और सत्य समझनेका प्रयत्न करें घातक कृमि वायु, भोजन, जल आदि द्वारा मनुष्यके शरीरमें प्रविष्ट होकर या मनुष्योंको काटकर उसे यातना पहुँचाते हैं, अतः ये 'यातुधान' हैं। शरीरके मांसको खा जानेके कारण ये 'क्रव्यात' या 'पिशाच' कहलाते हैं। इनसे मनुष्यको अपनी रक्षा करना आवश्यक होता है। 'इसलिए ये' रक्षः या 'राक्षस' है। यज्ञ द्वारा अग्निमें कृमि विनाशक औषधियोंकी आहुति देकर इन रोग कृमियोंको विनष्टकर रोगोंसे बचाया जा सकता है। अर्थव वेद के १।८ के कहा है।

इदं हविर्यातु धानान नदीफेनमिवावहत्।
य इदं स्त्री पुमानकः इह सस्तुवत्तांजनः ॥

यत्रेधामग्ने जनिमानि वेत्थगुहा सतामन्त्रिणां जात्तवेदः
तस्त्वं ब्राह्मणा बाव धानो जह्योषां शतत्तर्ह मग्ने ॥

अग्निमें डाली हुई यह हवि रोग कृमियोंको उसी प्रकार दूर बहा ले जाती है, जिस प्रकार नदी पानी के झागोंको जो कोई स्त्री या पुरुष इस यज्ञको करे उसे चाहिए कि वह हवि डालनेके साथ मन्त्रोच्चारण द्वारा अग्निका स्तवन भी करें। हे प्रकाशक अग्ने गुप्त से गुप्त स्थानोंमें छिपे बैठे हुए भक्षक रोग कृमियोंके

जन्मोंको तू जानता है। वेदमन्त्रोंके साथ बढता हुआ तू उन रोग क्रमियो वधोंका पात्र बना।

इस वर्णनसे स्पष्ट है कि मकानके अन्धकार पूर्ण कोनोंमें सन्दूक पीपों आदि सामानके पीछे दीवारकी दरारोंमें एवं गुप्तसे गुप्त स्थानोंमें जो रोग क्रमि छिपे बैठे रहते हैं वे क्रमिहर यज्ञिय औषधियोंके धूमसे विनष्ट हो जाते हैं।

भगवान यादवेन्द्र श्रीकृष्ण बृजचन्द्र गीता अध्याय ३ में कहते हैं।

सह यज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिं।
अनेन प्रसविष्य ध्वमेषवोऽसिचष्टकामधुकः ॥१०॥
देवान्भावयता नेने ते दे देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परम वाप्स्यथा ॥११॥
इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञ भाविताः।
तैर्दत्तान प्रदायैभ्यों यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः॥१२॥
यज्ञ शिष्टाशिनः सन्तो मुच्यते सर्व किल्विषैः।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥१३॥

सृष्टिके आरम्भमें प्रजापति ब्रह्माने यज्ञके साथ प्रजाको उत्पन्न करके इस यज्ञ द्वारा तुम्हारी वृद्धि होवे यह तुम्हें इच्छित कामनाओंको देने वाला होवे ऐसा कहा। इस यज्ञसे तुम लोग देवोंको सन्तुष्ट करते रहो। इस प्रकार परस्पर एक दूसरेको सन्तुष्ट करते हुए तुम सब परम कल्याणको प्राप्त करो। परमेश्वरने प्रजाको यज्ञके साथ उत्पन्न किया है और ऐसी जगतकी रचना की है कि जो यज्ञ करेंगे उनकी ही वृद्धि होगी और उन्हींकी कामनाएं तृप्त होंगी। जो यज्ञ नहीं करेंगे. वे नाशको प्राप्त होंगे और उनकी इच्छाएं कभी तृप्त नहीं होंगी। यज्ञसे मनुष्य देवताओंकी सन्तुष्टि करेंगे। तो देव भी मनुष्योंको तृप्त करेंगे। इस रीतिसे एक दूसरेकी सहायता करते हुए सब कल्याणको प्राप्त होंगे। यज्ञसे सन्तुष्ट हुए देवता मनुष्योंको इष्ट भोग अवश्य देंगे, परन्तु उन इष्ट भोगोंमें से कुछ भाग यदि मनुष्य श्रद्धासे उन्हें वापिस नहीं देंगे और सब अपने लिये ही रखेंगे, तो वह निःसन्देह चोर होंगे। यज्ञ जो अपने भोगोंकी ही सिद्धता करते हैं वे पापका भोग करते हैं।

अन्नान्दभवन्ति भूतानि पजन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः ॥१४॥
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षर समुद्भवम्।
तस्मात्सर्व गतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥१५॥

भूत (जीव) मात्र अन्नसे होते हैं, अन्नकी उत्पत्ति पर्जन्यसे होती है, पर्जन्य यज्ञसे होता है और यज्ञ कर्मसे होता है। कर्म विधिसे ज्ञान होता है और ज्ञान क्षय परमात्मासे उत्पन्न होता है इसलिये सर्व व्यापक परमात्मा यज्ञमें सदा रहता है।

कविकुल गुरु गोस्वामी तुलसीदासजी रामचरित्र मानस बालकाण्डमें कहते हैं।

श्रृङ्गी ऋषि हि वशिष्ट बोलावा।
पुत्र काम शुभ यज्ञ करावा॥
भगति सहित मुनि आहुति दीन्हे।
प्रगटे अग्नि चरु कर लीन्हें॥
यह हवि बांटि देहु नृप जाई।
जया जोग जेहिं भाग बनाई॥
तब हि राय प्रिय नारि बुलाई।
कौशल्यादि तहा चलि आई॥

यहां विस्तार भयसे और प्रमाण नहीं देते इतना ही काफी है रामचरित्र मानसमें अनेकों प्रमाण यज्ञके हैं बालमीकि रामायण, अध्यात्म रामायण, अष्टदश-पुराण, भागवत, उपनिषद्, महाभारत आदिमें यज्ञका वर्णन भरा पड़ा है चरकाचार्य चिकित्सा स्थान अध्याय ८ श्लोक १२ में कहते हैं।

प्रयक्तया यथा चेष्टया राज्ययक्ष्मा पुराजिता।
तां वेद विहिता निष्ठ मारोग्यार्थी प्रयोजयेत॥

प्राचीनकालमें राजयक्ष्मा रोग नष्ट किया जाता था, आरोग्य चाहने वाले मनुष्यको उसी वेद विधिसे यज्ञका अनुष्ठान करना चाहिये। अथर्ववेद ५।२९ से इस विषयपर और भी अच्छा प्रकाश पड़ता है।

अक्ष्यौ निविध्य हृदयं निविध्य,
जिह्वा नितृन्द्धि प्रदशातोमृणीहि।
पिसाचो अस्य यतमो जायात,
अग्ने यविष्ट प्रति तंश्रृणीहि ॥१॥

हे यज्ञाग्ने जिस मांस भक्षक रोग कृमिने इस मनुष्यको अपना ग्रास बनाया है, उसे तू विनिष्ट करदे। उसकी आंखें फोड़ दे, हृदय चीर दे, जीभ काट दे, दांत तोड़ दे।

आमे सुपक्वे शवले विपक्वे,
यो मां पिशाचो अशने ददम्भ।
तदात्मना प्रजया पिशाचा,
वियातयन्ता मगदोऽयमस्तु।
क्षीरे मामन्थे यतमो ददम्भ,
क्रव्याद् यातूनां शयने शयानम्।
दिवामानक्तं यतमो ददम्भ,
क्रव्याद् या तूनाशयने शयानम।
तदात्मना प्रजाया पिशाचा,
वियातयन्तामगदोऽयमस्तु॥ अथर्ववेद ५।२९।

कच्चे पक्के अधपके या तले हुए भोजनमें प्रविष्ट होकर जिन मांस भक्षक रोग कृमियोंने इस मनुष्यको हानि पहुँचाई है वे सब रोग कृमि हे यज्ञाग्ने तेरे द्वारा सन्तति सहित विनिष्ट हो जावें, जिससे कि यह नीरोग हो। दूधमें, मट्ठे में, बिना नागरके पैदा हुए जङ्गली धान्यमें, कृमि जन्य धान्यमें, पानीमें, विस्तर पर सोते हुए, दिनमें या रातमें जिन रोग कृमियोंने इसे हानि पहुँचायी हैं वे सब हे यज्ञाग्ने! तेरे द्वारा सन्तति सहित विनिष्ट हो जायें, जिससे कि यह हमारा साथी नीरोग हो।

न तं यक्ष्मा अरुन्धते नैनं शयथो अश्नुते।
यं भेषजस्य गुल्गुलोः सुरभिर्गन्धो अश्नुते॥

अर्थात जिस मनुष्यको गुगल औषधिकी उत्तम गन्ध प्राप्त होती है उसे यक्ष्मा रोग पीड़ित नहीं करते और अभिशाप या आक्रोश उसे नहीं घेरता।

यज्ञ द्वारा रोग निवारण शास्त्रकारोंकी कोरी कल्पना या उड़ान मात्र नहीं है। प्राचीन कालमें रोग फैलनेके समयोंमें बड़े-बड़े यज्ञ किए जाते थे और जनता उससे आरोग्य लाभ करती थी। इन्हें भैषज्य यज्ञ कहते थे। गोपथ ब्राह्मणमें लिखा है।

भैषज्य यज्ञा वा एते यच्चातुर्मास्याजि।
तस्माद् ऋतुसन्धिपु प्रयुज्यस्ते।
ऋतुसन्धिपुर्वैव्याधिर्जायते। गोपथब्राह्मण उत्तरार्थ १।१९

चातुर्मास्य यज्ञ हैं वे भेषज्य यज्ञ कहलाते हैं। क्योंकि वे रोगोंको दूर करनेके लिए होते हैं। ये ऋतु सन्धियोंमें किये जाते हैं आषाढ़ पौर्णिमाको १ कार्तिक पौर्णिमाको २ फाल्गुन पौर्णिमाको ऐसे तीन ऋतु सन्धियोंमें ही रोग फैलते हैं। यह भारती मत हैं पाश्चात्योंके मत हम नीचे लिखते हैं।

पाश्चात्य वैज्ञानिकोंने रोग कीटाणुओंके नाश करनेके लिये पदार्थ खोज निकाले हैं (१) एण्टिसेप्टिक्स (विषविरोधी) और (२) डिसीनफैक्टन्स (छूतके प्रभावको रोकने वाले) प्रथम श्रेणीके पदार्थ रोग कीटाणुओंसे मनुष्यकी रक्षा करते हैं-मारते नहीं। इस श्रेणीमें फेनायल, क्रियाजोट, हाइड्रोजन परआक्साइड आदिकी गणना की जाती है। दूसरी श्रेणीके पदार्थों में दोनों गुण उनकी घनता विरलताकी स्थितिके अनुसार पाये जाते हैं। पर इन तत्वोंका सही प्रयोग एक कुशल वैज्ञानिक ही कर सकते हैं। साधारण लोग उसकी मात्राका सही परिमाण नहीं कर सकने के कारण लाभके स्थानमें हानि ही उठा सकते हैं और वह हानि तीव्र घातक होती हैं।

हवन यज्ञ (गैस) इस दोषसे रहित है। कदाचित कुछ विषैला अंश रहे तो घृतका वाष्पीय प्रभाव उसे भी नष्ट करके लाभकारी बना देता है। इसमें स्थित क्रियोजोट, एल्डीहाइड, फेनायल और दूसरे उड्डयनशील सुरभित पदार्थ वैसा ही लाभ देते हैं। इससे सभी निर्विघ्न रूपसे लाभ उठा सकते हैं।

वायु शुद्धिके अतिरिक्त हवन गैससे स्थान, जल आदि अनेकों तत्वोंकी शुद्धि भी हो जाती है, जिससे पर्जन्यके द्वारा अन्न और औषधियां भी निर्मल और परिपुष्ट हो जाती है। इससे मानव शरीर रोगाणु निरोधक और विनाशक अणुओंसे भरपूर हो जाता है। फिर उसपर रोगोंका आक्रमण हो जाय और कदाचित सफल भी हो जाय तो उसके शरीरमें स्थित शक्तिशाली रोग विध्वंसक अणु उसे अधिक समय तक जीवित रहने नहीं देता। उसका शीघ्र ही विनाश कर देता है।

क्रमशः

गांव का उपयोगी फल—

बेल

(लेखिका—श्रीमती सुमित्रा देवी अग्रवाल "विशारद")

हमारे देशके गांवोंमें जितने भी फल पाये जाते हैं वे गुण एवं लाभ दोनोंकी दृष्टिसे उपयोगी होते हैं। सच तो यह है कि ग्रामीणोंको गांवोंमें पाये जाने वाले फलोंसे जितना लाभ होता है, उतना लाभ अन्यत्र पाये जाने वाले फलोंसे नहीं होता। गांवोंमें सुगमता पूर्वक जो फल प्राप्त होते हैं उनमें बेल सबसे उपयोगी माना जाता है। यदि बेलको हम घरका अस्पताल और गांवोंका दवाखाना कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। बेलका पेड़ गांवोंमें तो पाया ही जाता है, साथ ही साथ देशके प्रत्येक भागोंमें बेलका पेड़ आसानीसे मिल जाता है। इसका पेड़ बहुत बड़ा होता है। बेलके पेड़में लगने वाले फलको बेल ही कहा जाता है। बेल प्रायः कैथेके बराबर ही होता है। बेलके कुछ पेड़ोंमें अधिक फल लगते हैं, कुछ पेड़ोंमें कम। जिन पेड़ोंसे अधिक फल प्राप्त होते हैं ऐसे पेड़ प्रायः बगीचेमें पाये जाते हैं।

कच्चे और पके हुये बेलका उपयोग अनेक प्रकार से किया जाता है। कच्चे बेलसे शाक बनाया जाता है। कुछ लोग बेलका अचार तथा मुरब्बा बना कर बेलका प्रयोग करते हैं पके हुये बेलमें एक प्रकारका चिपचिपा रस निकलता है। बेलका रस खानेमें मीठा तथा स्वादिष्ट होता है। किन्तु इसकी तासीर गर्म होती है। बेलके रससे कागज भी चिपकाया जाता है। गांवोंमें गरीब लोग बेलके रसको बडे चावसे खाते हैं।

जितने भी फल होते हैं, प्रायः कच्चे फलोंका सेवन करना लाभदायक नहीं होता। कुछ फल तो ऐसे होते हैं कि यदि कच्चे फल खा लिये जांय तो त खराब होने और पाचन क्रिया बिगड़नेका भय रहता है। कच्चा बेल किसी भी अवस्थामें खानेके योग्यके नहीं होता। खानेके पहिले बेलको पका लेना चाहिये। कच्चा बेल आगपर रख कर पकाया जाता जिस है। जिस समय बेल पक जाता है तो ऊपरका कडा छिलका बडी तेज आवाज करके चिटक कर अलग हो जाता है।

बेलका उपयोग अनेक रोगोंमें सफलतापूर्वक किया जाता है। बेल अनेक रोगोंकी रामबाण दवा है। कभी कभी आवश्यकता पड़नेपर पके बेलका सूखा गूदा मिलना कठिन हो जाता है। पके हुये बेलका गूदा अतिसार और दस्तकी बीमारीकी दवा है। गांव वाले इसी कारण पके हुये बेलके गूदेको सुखाकर सुरक्षित रख लेते हैं और समय पड़नेपर बेलके सूखे गूदेका उपयोग अनेक रोगोंमें सफलतापूर्वक करके रोगसे तत्काल ही छुटकारा पा जाते हैं।

गांवोंमें दवाखाने, डाक्टर या वैद्य तो होते ही नहीं गांवोंमें ऐसे ही उपयोगी फल ही वैद्य और डाक्टर का काम करते हैं। बेलकी पत्तियाँ, फूल फल, जड़, सभी उपयोगी होते हैं। गांव वाले इसीलिये बेल के फल सुखाकर अपने घरोंमें सम्हाल कर रखते हैं और समय पड़नेपर बेलका उपयोग करके अपना इलाज स्वयं कर लेते हैं।

बेल खानेमें स्वादिष्ट तथा मधुर होता है। बेल त्रिदोषनाशक है। कै और शूलके रोगमें तो बेल विशेष उपयोगी माना गया है। बेलका सेवन करनेसे कफ और वायु सम्बन्धी रोग दूर हो जाते हैं। इसके सेवन करनेसे पित्तका प्रकोप नष्ट हो जाता है और मूत्रकृच्छ्र की बीमारीमें बेलका प्रभाव तत्काल ही दिखलाई

पड़ता है।

कच्चा बेल स्वभावसे ही स्निग्ध और ग्राही होता है। कच्चे बेलका सेवन करनेसे अग्नि तेज होती है, किन्तु स्वादमें कड़वा तथा फीका होता है। कच्चे बेल की तासीर गर्म होती है। शूल तथा आमवात रोगोंमें कच्चा बेलका सेवन करनेसे लाभ होता है। इसी प्रकार संग्रहणी और कफ रोगमें कच्चे बेलका सेवन करनेसे आराम मिलता है।

पका हुआ बेल खानेमें मीठा तथा स्वादिष्ट होता है किन्तु जलन पैदा करता है। पके बेलकी तासीर गर्म होती है। पुराने बेल मधुर और स्वादमें फीकापन लिये होते हैं। पुराना बेल पाचक होता है पुराने बेल का सेवन करनेसे कफका नाश होता है।

बेलका उपयोग अनेक रोगोंमें सफलतापूर्वक किया जा सकता है। बेलके कुछ उपयोग इस प्रकारसे हैं:—

बेलके गूदेको गायके मूत्रमें पीस छान कर थोडा सा तैल मिलाकर गुनगुना करके कानमें डालनेसे कानोंका बहरापन दूर हो जाता है। पके हुये बेलका गूदा खानेसे गलेमें होने वाले आकस्मिक दर्द शीघ्र ही ठीक हो जाता है। बेल रक्तातिसारके रोगियोंके लिये बड़े कामका है। रक्तके दस्त आनेपर सूखे हुये बेलके गूदेका चूर्ण थोड़ेसे गुड़में मिलाकर खानेसे निश्चय ही लाभ होता है। हर प्रकारके अतिसारमें कच्चे बेल का गूदा और आमकी गुठली कूटकर, इसका काढा बनाकर अन्दाजसे शक्कर और शहद मिलाकर खानेसे अतिसार रोग दूर हो जाता है।

बेलके गूदेको पानीमें उबाल कर उसी पानीसे कुल्ला करनेसे मुंहके छाले नष्ट हो जाते हैं। बेलका गूदा और सोंठका चूर्ण गुड़ मिलाकर सेवन करनेसे बालकोंकी संग्रहणीमें लाभ होता है। बेलके गूदेका अर्क निकाल कर पीनेसे मनुष्योंका स्वास्थ्य बनता है और वीर्य पुष्ट होता है। बेल, सोंठ, जायफल, तीनोंका काढा बनाकर पीनेसे विशूचिका या हैजा रोग दूर हो जाता है। इसी प्रकार बेल और सोंठका काढा बनाकर पिलानेसे हैजामें लाभ होता है।

निःसन्देह गांवोंका उपयोगी फल बेल गुणोंकी खान है। इसीलिये गांवोंमें बेल बडे चावसे खाया जाता है और सुखाकर बीमारियोंको दूर करनेके लिये रख लिया जाता है। बेलकी उपयोगिताको देखते हुये ग्रीष्म ऋतुमें बेलका उपयोग किसी न किसी रूपमें अवश्य करना चाहिये। बेलका शर्बत स्वादिष्ट एवं जायकेदार होता है। गरमीके दिनोंमें बेलके शरबत का सेवन करनेसे जलन दूर हो जाती है। और लू लगनेका भय नहीं रहता। इस उपयोगी फलसे हर एक को अवश्य ही लाभ उठाना चाहिये।

विषूचिका (हैजा)
(CHOLERA)

सूर्य चि० विशारद पं० नंदकिशोर शर्मा, मंत्री पंचायत ढोटी, (आगर)

सूचीभिरिव गात्राणि तुदन्सतिष्ठतेऽनिलः।
यस्याजीर्णेन सा वैद्यैर्विषूचीतिनिगद्यते॥

सुश्रुत उत्तर तन्त्रम् अ० ५६। ४।

जिस अजीर्णके कारण वायु शरीरमें सुई चुभनेके समान वेदना उत्पन्न करती है, उस अवस्थाको वैद्य "विषूचिका" कहते हैं। आयुर्वेदानुसार यही निरुक्ति है। भोजनके लालची लोग इसके अधिक रोगी होते हैं। यह संक्रामक होकर मक्खियां, रोगीके मल, थूक इत्यादिके संसर्गसे भी फैलता है। पाश्चात्य विद्वान् इसका कारण कौचका अल्पविरामाकारी जीवाणु (Koch's Camma, Bacillus) मानते हैं। वमन, मल, इत्यादिके दूषित जीवाणु संक्रामित होजाते हैं। वायु मण्डल की उष्णता व आर्द्रता अधिक होनेसे गर्मी के अंतमें व वर्षाके प्रारम्भमें प्रायः यह रोग फैलता है।

लक्षणम्-मूर्च्छाऽतिसारौवमथुः पिपासा,
शूलं भ्रमोद्वेष्टनजृम्भदाहाः।
वैवर्ण्यकम्पौ हृदयो रुजश्च,
भवन्ति तस्यां शिरसश्च भेदः॥

मूर्च्छा, अतिसार, वमन, प्यास, शूल, चक्कर आना, ऐंठन, जँभाई आना, दाह, विवर्णता, कम्प, हृत्पीड़ा, शिर फटनेका सा शूल आदि लक्षण विषूचिकाके हैं। इसमें प्रथम शूल उठता है व साथ ही वमन, विरेचन प्रारंभ होता है। फिर पिपासा आदि लक्षण प्रारंभ होते हैं। खाया पिया निकल जाने पर आम मांस धोवनका सा द्रव प्रवृत्त होकर ऐंठन होती हैं।

पाश्चात्य विज्ञानमें लक्षणोंके ४ भेद माने हैं —

(i) Premonitory Diarrhoea-पूर्वरूप-हरेरंग के पीड़ा रहित अनेक दस्त, वमन, हल्लास, कमजोरी मूत्रकी कमी, त्वचाकी आर्द्रता होती है।

(ii) Stage of evacuation—विरेचनकी अवस्था रोगके आक्रमणके साथ विरेचन प्रारंभ होते हैं, दस्तसे पेटमें गुड़गुड़ाहट तो होती है किंतु मरोड़ नहीं। थोड़े समयमें वमन प्रारंभ हो जाता है। वमन व दस्तके सिवाय प्यासाधिक्य रहता है। जिह्वा सूखती है। हाथ पैरकी अंगुलियोंमें ऐंठन प्रारम्भ होती हैं। शरीर पर पसीना होता है। दस्त तण्डुल जलवत हो जाते हैं। कभी कभी पानीके समान पतले भी होते हैं। दस्तमें कई गैलन पानी शरीरसे नष्ट हो जाता है।

(iii) Stage of Callapse—अवसादकी अवस्था यह अवस्था विरेचनके ४-८ घण्टेके बाद प्रारंभ होती है कभी ४८ घंटेके बाद भी शुरु होती है। त्वचा ठंडी होती है। ठंडा पसीना आता है। बगल में ताप ९५° फै० तक मिलता है। आवाज क्षीण हो जाती है, चेहरे व नखोंपर नीलिमा छा जाती है। उच्छ्वास ठंडा होता है। ऐंठन होती है इसकी अवधि १२ से ३६ घंटेकी होती है। रोगकी तीव्रता हो तो हृदय क्षीण होकर मूत्राघातसे विषमयता (Ureamia) होती है। इन सब कारणोंसे रोगी चल बसता है। यही असाध्यावस्था है।

(iv) Stage of reaction--प्रतिक्रियाकी अवस्था यदि रोग अति तीव्र न हों या उसकी उचित चिकित्सा न की जाय तो यह अवस्था उत्पन्न होती है। इसमें बाह्य त्वचाकी उष्णता शनैः शनैः स्वाभाविक अंश तक या उससे भी अधिक होती है। रक्त-भार बढ़नेसे नाड़ी स्पष्ट होने लगती हैं। वमन व दस्त कम होते हैं व पित्तकी उपस्थितिसे पीले रंगके होते हैं। यदि अवसादकी अवस्था अधिक काल तक हुई तो प्रतिक्रिया तीव्र स्वरूपकी होकर रक्त संचार शुरु होने पर आंत्रगत विष रक्तमें प्रविष्ट हो जावेगा जिसके कारण मूत्रविषमयता, तीव्रसंताप, प्रलाप, तंद्रा, बेहोशी आदि होकर रोगीकी मृत्यु हो जाती है।

सूक्ष्म दर्शक यंत्र द्वारा मल एवं रक्तकी परीक्षा कर लेनी चाहिये।

चिकित्सा--(i) अपामार्गकी जड़को जलमें पीसकर पीनेसे विसूचिका दूर होती है।

(ii) करेलेके पत्तोंका रस निकालकर तिलका तेल मिलाकर पीवें।

(iii) बेलकी गिरी तथा सोंठका काथ पीवें तो वमन व विषूचिका शांत हो।

(iv) चिरचिटे (अपामार्ग) की पत्तियां और मिर्च समभाग लेकर घोड़ेकी लारसे पीस अंजन करें, मूर्छा दूर हो व विषूचिकामें लाभ हो।

(v) तक्र या दहीमें समभाग जल मिलाकर या नारियलके फलका जल पिलानेसे लाभ होता है।

(vi) प्यासकी अधिकतामें व उत्क्लेश (उबकाई) में लवङ्गके साथ उबाला हुआ जल पिलाना चाहिये।

(vii) हर्र, बच, हींग, इन्द्रजौ, लहसन, सौवर्चल, अतीस इनका समभाग चूर्ण गर्म पानीसे पीनेसे शूल, विषूचिका व अरुचिमें तुरंत लाभ होगा।

(viii) हिमांशु द्रव--अजवाइनका सत्व, कर्पूर व पिपरमेंट समभाग मिलाकर थोड़ी देर रखा रहने दो अर्क सा बनने पर १० या १५ बूंद २ तोला पानीमें डालकर १५-१५ मिनट पर दें बच्चोंको १ या २ बूंद देवे।

(ix) समीरगजकेशरी—शुद्ध कुचला, कालीमिर्च, अफीम, तीनों समभाग लेकर पानके रसमें घोट मूंगके बराबर गोलियां बनावें।

मात्रा—२ से ४ गोली तक। इससे दस्त शीघ्र बन्द होंगे।

(x) अर्कादि वटी—आककी जड़की छाल, काली मिर्च इन दोनोंको आर्द्रक रसमें घोटकर मटरके बराबर गोली बनावें। मात्रा २ से ३ गोली इन गोलियों को प्रयोग करनेसे कई रोगी भी स्वस्थ हुए। हैजा तीव्र अवस्थामें होने पर इन गोलियोंको खिलाकर ऊपर से हिमांशु द्रव भी पिलावें।

(xi) यदि रोगी को बांयटे आते हो तो मिट्टीके तेलमें हींग मिलाकर मालिश करो।

(xii) अधिक प्यास लगने पर—प्याजका रस १ तोला, पोदीना रस ६ माशे, शहद ६ माशे मिलाकर १०-१० मिनिटके बाद दें। ५-६ बारके बाद प्यास कम होकर वमन व विरेचनमें भी लाभ होगा।

(xiii) हैजे पर एक चमत्कारिक औषधि—अरहर की पत्ती २ तोला, कालीमिर्च ३ तोला दोनोंको आध पाव जलमें पीस छान लें व रोगीको पिलाते रहें (आवश्यतानुसार) यह बड़ी रामबाण दवा है। हैजेका शीघ्र ही वेग रुक जाता है।

(xiv) बेरकी गुठलीकी मिंगी २ या ३ माशाको मिश्री १ तोलामें मिलाकर दें ऐसी तीन खुराक खिला देनेसे वमन, विरेचन आदि दूर होकर हैजा दूर हो जाता है।

(xv) हुक्केका पानी पिलानेसे भी लाभ होता देखा गया है।

रोगीका मल, थूंक आदि शीघ्र दूर करना चाहिये या फिनायलसे स्वच्छ करवा दें ताकि संक्रामकता न फैले, कक्षमें गूगल या लोबान जलाते रहें।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

ग्रीष्म ऋतु और रक्तपित्त

लेखक—आयुर्वेदाचार्य डा० एस० एन० खरे, ए० एम० बी० एस०
चिकित्सक-सेवक औषधालय ककवारा, झांसी (उत्तर-प्रदेश)

(गतांकसे आगे)

१६. इस ऋतुमें दोपहर होते ही गर्म हवा (लू) चलने लगती है। तो ऐसी दशामें घरके बाहर न निकलना चाहिये। यदि किसी कारणसे बाहर जानेका काम भी पड़ जावे तो निम्न लिखित उपाय कर लेना चाहियेः—

(अ) मोटे सफेद वस्त्र पहन कर और छाता लगा कर बाहर निकलना चाहिये। जहां तक हो सके खादी कपड़ा होना चाहिये। लू से बचनेका खास उपाय यह है कि शरीरके पसीनेको हवा नहीं लगना चाहिये। कानोंके ऊपर कपड़ा रहना चाहिये। आजकल जो मलमल जैसे पतले कपड़े लोग इस ऋतुमें पहनते हैं वह ठीक नहीं है क्योंकि उन कपड़ोंसे हवाकी कोई बचत नहीं होती है। यदि यह कपड़े पहननेका शौक हो तो दिनको नहीं पहनना चाहिये। प्रातः सायंकाल में अवश्य पतला और ढीला कपड़ा पहन कर बस्ती से बाहर शुद्ध जलवायुमें भ्रमण करना चाहिये।

(आ) लू हमेशा कान, वक्ष (छाती) और पैरोंसे लगती है इस लिये इन्हें बाहर जाते समय बन्द रखना चाहिये। गरम धूलमें बिना जूतोंके नहीं चलना चाहिये

(इ) शीतल जलका सेवन कर छाता लगाकर बाहर जाना चाहिये। हो सके तो प्याज भी साथमें रखना चाहिये।

(ई) यदि लू लग भी जाय तो निम्न उपाय करना चाहियेः—

(१) रोगीको शीतल स्थान पर चारपाई डालकर आरामसे लिटा देना चाहिये।

(२) रोगीकी बढ़ी हुई गर्मी तथा दाहकी शान्तिके लिये उसके समस्त शरीरको शीतल जलसे गीले किये हुये वस्त्रसे ढक देना चाहिये। मस्तिष्क पर शीतल जल (या बरफ) का परिषेक (ढालना) करते रहना चाहिये।

(३) यदि रोगीको मल बद्धता हुई हो तो उसकी नाभिपर दन्ती तैल की एक या दो बूंद की मालिश कर देनेसे सुख पूर्वक विरेचन हो जाता है।

(४) यदि रोगी का इन उपरोक्त विधियोंसे शरीर शीतल होने लगे और जीव साक्षिणी नाड़ी (Radial Artery) की गतिमें व्यति क्रम हो जावे या अस्पष्ट प्रतीत होने लगे तो रोगीको उष्ण वस्त्रोंसे आवेष्ठित कर देना चाहिए और चारपाईके चारों ओर प्रज्वलित अंगारोंसे भरी अंगीठियां रखकर शीत शरीरको पुनः उष्ण करें। साथ ही साथ "मृत सञ्जीवनी सुरा" का पान करावें। यदि मूर्च्छा हो तो इसके भी उपचार करना चाहिये।

(५) यदि रोगी अत्यन्त प्यास से पीड़ित हो तो शीतल जल नहीं पिलाना चाहिये। अपितु उस जल को चन्दनसे सिद्ध करके या पीपल वृक्षकी छाल को जलाकर उबले हुये जलमें बुझा देवे और किञ्चित् उष्ण जल पिलावें। इससे रोगीको पसीना आ जाता है और तापक्रम घट जाता है।

(६) यदि तापक्रम ज्यादा हो तो चनेकी सूखी

भाजी (पत्ते) पानीमें भिगोकर बांटकर हाथ और पैरों पर मालिश करनेसे कम तापक्रम हों जाता है।

(७) यदि ज्यादा वमन (उल्टी) या दस्त लगने हों तो अर्क कपूर २-३ बूंद बतासाके साथ अथवा अर्क पोदीना को बतासाके साथ प्रयोग करना चाहिये नहीं तो हैजाका रूप हो जाता है।

(८) इस रोगमें जल, लवण तथा क्षारकी मात्रा कम हो जाती है इसलिए रोगी,को लवण घोल अथवा थोड़ा-थोड़ा नमक मुखमें डालकर पानी पिलाना चाहिये और आमका पना भी दिया जाता हैं। यदि रोगी बेहोश है जल नहीं पी सकता है तो सिरा मार्ग द्वारा समबल लवण जल (Normal saline) देना चाहिये। सोडाबाई कार्ब ३० ग्रेन ग्लूकोजमें मिलाकर मुख द्वारा देना चाहिये। इससे अम्लोत्कर्ष (Acidosis) की सम्भावना नहीं रहती है।

(९) रोगी जितना पानी पिये उतना ही पिलाना चाहिये क्योंकि प्यास लगनेपर पानी न पिलाने से प्राणोंका नाश हो जाता है। जल ही प्राणों का आधार है।

(१०) यदि शरीरमें ज्यादा ऐंठन हो तो वह जल तथा लवणकी कमी हो जाती है। इसलिये आधा घण्टे या एक घण्टेपर लवण जलके साथ देना चाहिये।

(११) यदि श्वसनका निपात हो रहा हो तो कृत्रि-मश्वसन, क्रिया चालू करें। चेहरे तथा वक्षपर जल छिड़कना एवं जिह्वा को बार-बार अन्दर बाहर खींचना चाहिये।

(१२) लू लगनेकी सबसे मुख्य चिकित्सा तापक्रम बढा हुआ हो तो उसे जल्द ही कम करना चाहिये। क्योंकि इसमें पसीना बन्द हो जाता है और तापक्रम बढकर१०४° से ११०° फा० तक पहुँच जाता है।

(१३) यदि कोई चिकित्सक किसी लू लगने वाले रोगीमें निम्न लक्षण देखें तो उसकी चिकित्सा न करें क्योंकि इसमें अपयश मिलता है।

करद्वयेऽङ्घ्रिद्वितये च नीलिमा
तथा धमन्याः क्षणलुप्तता च।
विक्षेपणं चावयवस्य रोगिणों-
ऽशुघातिनो मृत्युकृते भवन्ति ॥

किसी रोगीके हाथ और पैरोंमें नीलापन एवं नाड़ी क्षण-क्षणमें लुप्त हो कर शरीरमें आक्षेप उत्पन्न हो जाते हैं। मनुष्यमें यह लक्षण यदि अंशुघात रोगमें हो तो उस मनुष्यका निवारण बिना मृत्युके नहीं होता है इसलिये चिकित्सा सोच समझ कर करनी चाहिये।

इसी प्रकार ग्रीष्म ऋतुमें धूप, व्यायाम, शोक, रास्ता चलना और ज्यादा मैथुन करनेसे एवं तीक्ष्ण, उष्ण, क्षार (नमकीन), खट्टे तथा चरपरे पदार्थोंके अधिक सेवन करनेसे पित्त दूषित होकर रक्तको दूषित कर देता है और शरीरके विभिन्न भागोंसे रक्त निकलने लगता है जब मुख, नासिका आदि द्वारा ऊपरी मार्गोंसे रक्त निकलता है तो ऊर्ध्व रक्तपित्त कहते हैं और जब गुदा, योनि व मूत्रनलिका द्वारा अधोमार्ग से रक्त निकलता है तो उसे अधो रक्तपित्त कहते हैं। जब रक्त दूषित होकर शरीरके रोम-रोम में से निकलने लगता है तब इसे असाध्य रक्तपित्त समझना चाहिये।

रक्तपित्त की चिकित्सा

कुछ स्वयं अनुभवके योगोंपर प्रकाश डालते हुये निम्न योग भारतीय जनताकी सेवामें उपस्थित कर रहा हूँ।

(१)"प्रति मार्ग च हरणं रक्तपित्ते विधीयते" अर्थात् रक्तपित्त की चिकित्सामें दोषोंका शमन करना चाहिये ऊर्ध्व मार्ग द्वारा रक्त आता हो तो विरेचन और अधो मार्गसे रक्त आता हो तो वमन कराना चाहिये। परन्तु केवल बलवान पुरुषको।

(२) अडूसेके हरे पत्तोंका स्वरस निकालकर १ तोलासे २ तोला की मात्रामें लेकर १ तोला शहद

तथा १ तोला चीनी मिलाकर प्रति दिन पीनेसे भयंकर रक्तपित्त भी नष्ट हो जाता है।

(३) पिसे हुए पत्तों (अडूसे=वासा या रुसाके) का पुटपाक द्वारा निकाला हुआ स्वरस मधु मिलाकर पीनेसे अथवा अडूसेके पत्तोंका हिम बनाकर मधु मिला कर पीनेसे रक्त पित्त, कास, ज्वर तथा राजयक्ष्मा रोग दूर हो जाते हैं।

(४) उदुम्बर (ऊमर या गूलर) के हरे अथवा अर्धपक्व फलोंको पत्थरपर पीसकर कपड़ेमें रखकर पोटली बनाकर हाथोंसे दबाकर स्वरस निकाल देना चाहिये। एक तोलेसे दो तोलेतक इस स्वरसमें शहद मिलाकर प्रतिदिन सेवन करनेसे रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाता है।

(५) अडूसा, मुनक्का तथा हरड़का क्वाथ बना कर इसमें मिश्री व मधु मिलाकर पीनेसे सब प्रकारके श्वास और रक्तपित्त रोग नष्ट हो जाते हैं।

(६) फिटकरीका चूर्ण एक माशा लेकर दूधमें मिलाकर पीनेसे खूनका गिरना बन्द हो जाता है।

(७) सूखे आँवलेका चूर्ण एक माशा लेकर इसमें शक्कर (चीनी) मिलाकर घीके साथ खानेसे रक्त-पित्तमें लाभ होता है।

(८) सूखे आँवलोंको घीमें तलकर पीसनेके बाद मस्तक पर लेप कर देनेसे नाकसे खून का गिरना बन्द हो जाता है।

(९) ठण्डे जलमें चीनी मिलाकर शरबत तयार करके नाक द्वारा पीनेसे अथवा नाकसे दूध पीनेसे या दूधके साथ मुनक्केका रस पीनेसे अथवा ईखके रसमें शक्कर मिलाकर पीनेसे नासिका द्वारा गिरता हुआ रक्त बन्द हो जाता है।

(१०) मुनक्कोंका रस अथवा आमकी गुठलीका रस अथवा प्याजके रसका नास लेनेसे नाकमेंसे गिरता हुआ रक्त बन्द हो जाता है।

(११) दो माशे भर हरड़के चूर्णको शहदके साथ मिलाकर प्रतिदिन सेवन करना चाहिये। इससे रक्त-पित्तमें लाभ होता है।

(१२) "वासायां विद्यमानायामा शायां जीवितस्य च।
रक्त पित्त क्षयी कासी किमर्थ भवसीदति॥"

जब तक संसारमें अडूसा विद्यमान है तब तक जीवनकी आशा करने वाले रक्तपित्त, क्षय, कासके रोगी व्यर्थमें दुःख उठाते हैं। वास्तवमें अडूसा इस रोग की परमौषधि है जिससे कि धन भी खर्च नहीं होता है।

(१३) जो चिकित्सक धनी पुरुषोंसे धन प्राप्त करना चाहे वह कैल्शियम ग्लूकोनेट विद विटामिन "सी" ५०० मि० ग्रा० (Calcium Gluconate with vit C 500 mg) सैन्डोज कम्पनी या वी० आई० कम्पनीका इंजेक्शन सिरा गत मार्गसे देवें इसमें बहुत ही सावधानी की आवश्यकता है। इससे रक्त निकलना शीघ्र ही बन्द हो जाता है।

मुख द्वारा विटामिन के (K), सी (C), और कैल्शियम लैक्टेटकी एक-एक गोली तीन गोली एक साथ पानीके अनुपानके साथ सेवन करें। इस प्रकार दिनमें तीन बार इन गोलियोंका सेवन करना चाहिये।

अस्तु भारतीय जनतासे निवेदन है कि ग्रीष्म ऋतु कालीन उपरोक्त भयंकर परिणामोंसे बचनेके लिये ऊपर लिखे हुये नियमों और औषधियोंको सेवन कर आरोग्यता को प्राप्त करें।

इति

स्वर्णक्षीरी और श्वास रोग

लेखक:—स्वामी कृष्णानन्द शास्त्री, सिद्धाश्रम, मालिन खोह, चन्देरी (मध्य प्रदेश)

'स्वर्णक्षीरी' जिसे साधारण भाषामें सत्यानाशी भी कहते हैं। यह बूटी प्रायः सभी प्रान्तोंमें पाई जाती है, संज्ञा गुणके आधार पर ही दी गयी है। इसकी उपपत्ति वर्षा ऋतुके पश्चात् आरम्भ होती है। अनुमानतः इसका वृक्ष ३ फीटकी उंचाईका होता है। तथा बसंत ऋतुमें इसपर बहुत सुहावने बसन्ती रङ्गके पुष्प खिलते हैं, फल-कांटेदार होता है। तथा फलके भीतर राईके बराबर कृष्ण वर्णके दाने भरे रहते हैं, तथा पत्ते भी कांटेदार होते हैं। एवं पत्ते वा शाखा तोड़नेपर स्वर्ण सदृश दूध निकलता है, इसी हेतु इसे 'स्वर्णक्षीरी' कहते हैं।

उपर्युक्त औषधिके विषयमें पं० श्री चक्रपाणिजी इटोंजा, लखनऊ निवासीका अनुभव आपके सामने रखता हूँ, जिससे आपको पूर्ण रूपेण यह ज्ञात हो जायगा कि इसमें अवश्यमेव इत्याकारक शक्ति निहित है। उक्त चक्रपाणि इस योगसे अनेकशः श्वास पीड़ित हताश हुये व्यक्तियोंको स्वास्थ्य प्रदान करते हैं, जिन्हें बहुतसी आत्मायें अपने जीवनको सुखमय अवगतकर मुक्त कण्ठसे कोटिशः धन्यवाद दे रही हैं। अस्तु वही योग उन्हींसे प्राप्त कर आपकी सेवामें प्रस्तुत कर रहा हूँ और आशा है इस योगसे आपकी निराशा हताश होकर आप स्वयंको स्वस्थ दशामें देखेंगे। सम्प्रति श्री चक्रपाणि जी को "सालमली-कल्प" करा रहा हूँ, जिसे प्रारम्भ दिवससे केवल दश दिन गत हुये हैं और ३० दिन शेष हैं। अनुपान—प्रोक्तौषधिके पुष्पोंका २ तोला चूर्ण प्रतिदिन गोदुग्धेन सह सेवन कराया जा रहा है, दूधकी मात्रा यथेच्छ है। आपका साधन-संयम मौन-व्रत, एकान्तवास, जन वातावरण शून्य अज्ञात है, एवं दश दिनके सेवन व्यवहारसे ही औषधि एवं 'कल्प' का गुण प्रकाशमें आने लगा है, शब्दों एवं चेहरेसे विस्पष्ट बोधित होता है कि पुराने जीर्ण-सीर्ण शरीराभ्यन्तरीय रोग क्षीण होने जा रहे हैं। और शरीरमें पूर्वकी अपेक्षा बलकी मात्रा भी कुछ अंशोंमें वृद्धिको प्राप्ति हो रही है।

अस्तु:—अवश्वासावरोधक उपायको कहते हैं। उपर्युक्त स्वर्णक्षीरीको पंचाङ्ग सहित ग्रहण कर पाताल यंत्रसे अथवा आसमानी यंत्र द्वारा अर्क निकाल कर तथा वस्त्रसे छान कर स्वच्छ बोतलमें भर कर एवं कार्क-लगा कर सुरक्षित रूपसे रख लीजिये। बस अत्युत्तम श्वासारि अर्क बन कर तैयार है, यथावश्यक समय व्यवहार कीजिये और यश कमाइये। सेवन विधि:—प्रातः सायं १-१ तोला एक मासावधि पर्यन्त पथ्या-पथ्यका विशेष विचार प्रतिकूल वस्तु उपभोग में न लाइयें, किन्तु अनुकूल खाद्य पदार्थके साथ प्रतिदिन एक छटांक घृत अवश्य लेते रहें।

उक्त औषधिका दूध मर्दन करनेसे चर्म रोग पर भी काफी प्रभाव डालता है। सम्प्रोक्त क्रियानुसार 'अडूसा' (विसूंटा) नामक बूटीके पत्तोंका खींचा हुआ अर्क भी श्वास शमनमें ७० प्रतिशत लाभदायक सिद्ध हुआ है। सेवन विधि पूर्वोक्त अनुसार ही है। औषधिका प्रभाव ४-५ दिनके ही सेवन-व्यवहारसे विदित होने लगेगा।

'पुष्पहार' नामसे सुप्रसिद्ध लखनऊ प्रांतमें एक लता है, जिसे लोग शोभा और सुगन्धके लिये बंगले एवं वाटिकाओंमें लगाते हैं। इसका प्रसार-फैलाव काफी विस्तार लिये हुये रहता है। इसका पुष्प रात्रि कालमें खिलता है दिनमें नहीं। तथा जिसकी प्रतिभा चन्द्र-किरणके समान उज्वल-स्वच्छ और मनको प्रसन्न करने वाला तथा स्वादमें सुमधुर-गन्ध में सुगन्ध गर्भित है, एवं गुणमें उन्माद नाशक सिद्ध हुआ है। उपयोग—२ फूल १० किशमिशके दाने निशा समय कांचकी कटोरीमें आधा सेर जल भर कर भिगोकर रख दीजिये, और ऊषा कालमें शौचादिसे निवृत होकर तथा घोट-पीस कर एक छटांक शक्कर मिलाकर पीनेसे (हौल दिल) जिसे दिलकी धड़कन व उन्माद भी कहते हैं, बहुत कुछ लाभदायक है। दोनों समय सेवन कराना चाहिये, २-४ दिनके ही सेवन व्यवहारसे रोगीको सुपर्याप्त लाभ पहुँचेगा। इसके बीजेको पपीता भी कहते हैं, जो स्वादमें कड़वा गुण में कुष्टहारी है।

सालमली-कल्पका विशेष विवरण क्रिया सम्पन्न होने पर सूचित करुंगा। ॥ इति शिवम् ॥

(गतांकसे आगे)

प्राकृतिक और रासायनिक कस्तूरीका प्रभाव—

ताजा कस्तूरी दूधिया होती है और बादमें भूरे लसलसे लाल रंगमें परिवर्तित हो जाती है। इसकी सुगन्ध दीर्घ समय तक स्थिर रहती है। स्वादमें कटु और सुगन्धित होती है। मद्यसारमें १०% तक घुलनशील। जलमें ५०% तक। ईथर और क्षारमें भी घुलनशील। यह कागजको पीला कर देती है और गर्म करनेपर पेशाब जैसी गन्ध देती है। इसमें एमोनिया, ओलियन, कोलेस्ट्रिन, वसा, मोम, जिलेटिन जैसा तत्व, एलब्युमिनस तत्व और राख होती है। इसमें मुख्यतया क्लोराइड आव सोडियम, पोटेशियम और केलसियम होता है। कस्तूरी भापसे परिश्रुत करने और अन्य प्रकारसे शुद्ध करनेपर अल्पांशमें लसलसा, रंगहीन तैल देती है जो कि कस्तूरी जैसा रुचिकर और प्रभावशाली होता है। यह तैल किटोन मालूम होता है और मुस्कोन शब्दसे पुकारा जाता है। कस्तूरी अपने प्रभाव, स्थिरता और सुगन्धके स्थायी होनेके कारण विलक्षण है। इसके संसर्गसे हरेक वस्तुमें दीर्घ समय तक इसकी सुगन्ध स्थिर हो जाती है। यह गन्ध द्रव्योंमें बहुत मूल्यवान है। यद्यपि यह अब स्वतन्त्ररूपसे उपयोगमें नहीं आती फिर भी अन्य सुगन्धीको स्थायीत्व और तीव्रता देनेके लिए बहुत उपयोगमें आती है। गंधी इसकी महकका उपयोग साबुन, पाउडर, तरल सुगन्धियोंमें सुगन्ध देनेके लिए करते हैं। इसकी सुगन्ध कपूर, जटामांसी, कड़वी बादाम, लहसुन, हाइड्रोस्यानिक एसिड और अर्गट चूर्णके सम्पर्कसे नष्ट हो जाती है।

व्यापारिक भेद— प्रारम्भमें कस्तूरी की तीन जातियां प्रसिद्ध हैं।

(१) रूसकी कस्तूरी—यह जाति अल्प सुगन्ध वाली होती है। अतः इसका कम महत्व है।

(२) अमेरिकी कस्तूरी—यह बहुत तीव्र सुगन्ध युक्त होनेसे प्रथम कोटिकी कस्तूरीकी अपेक्षा बाजारमें इसका मूल्य अधिक प्राप्त होता है। भारतीय औषधि ग्रन्थोंमें असमकी कस्तूरीका 'कामरूप कस्तूरी' से वर्णन किया गया है। यह रंगमें श्याम और प्राप्त होने वाली कस्तूरियोंमें सर्व श्रेष्ठ मानी गयी है।

(३) चीनी कस्तूरी—चीनी कस्तूरी अरुचिकर और अमोनिया प्रकट करने वाली गंधसे रहित होनेके कारण (जैसा कि निम्न जातिकी कस्तूरीमें होता है) वर्तमानमें बहुत मूल्यवान है। चीनसे निर्यात होने वाली कस्तूरी तिब्बतसे आती है जो कि मृग कस्तूरीका घर है। तातसिएनलूके कस्तूरी विक्रेताओंसे खरीदकर इसे चुंगकिंग लाया जाता है। व्यापारमें 'टोनकिन कस्तूरी' प्रसिद्ध जाति जिसका उपयोग परफ्यूमरी में किया जाता है पश्चिमी जेचुआन और पूर्वी तिब्बतकी ऊँची चौरस भूमिसे आती है।

गत शताब्दीमें यांगत्से नदीपर जहाजी यातायातके उदयके पहले इस जातिकी कस्तूरीका निर्यात टोनकिन के रास्तेसे दक्षिणको होता था और आजतक इसी कारण इसका नाम टोनकिन कस्तूरी पड़ा हुआ है। कस्तूरीका मुख्य बाजार तातसिएनलू नगरके अन्दर स्थित है जो कि तिब्बतकी सीमासे सटा हुआ है। यूनानके सूबोंसे एक निश्चित जातिकी कस्तूरी भी प्राप्तकी जाती है लेकिन यह व्यापारमें अपना कोई महत्त्व नहीं रखती। उत्तरी मंगोलिया और मंचुरिया और पूर्वी साइबेरियाके भागोंसे बड़ी संख्यामें कस्तूरी बाजार में आती है। इस कस्तूरीकी ख्याति केबरडिनके नामसे है; लेकिन इसमें अरुचिकर तीव्र गन्ध होनेसे इसे प्रथम श्रेणीके उत्पादनोंके लिए, उपयोगमें नहीं लिया जाता।

कस्तूरीमें मिलावट— बड़ी माँग होने तथा इसे

प्राप्त करनेकी कठिनाइयोंके कारण कस्तूरीमें बहुधा निष्क्रिय तत्त्व जैसे कि सूखा हुआ रक्त, यकृत् इत्यादि की मिलावट कर दी जाती है। वनस्पति उत्पादन जैसे सेम, गेहूँके दाने, जौ के दाने, इत्यादि भी कस्तूरी बनानेके समय मिश्रित कर दिये जाते हैं। कस्तूरी अन्य द्रव्योंको जो कि इसके सम्पर्कमें आते हैं शीघ्र ही अपनी सुगन्ध दे देती है। इसका मिलावटी होने की पहचान गन्धसे करना सहज नहीं। चीनी और तिब्बती व्यौपारियोंमें कई तरीके परीक्षा करनेके प्रचलित हैं परन्तु वे वैज्ञानिक नहीं हैं। फिर भी चीजकी शुद्धता मालूम करने के लिए सन्तोष-जनक हैं। जब कोई सन्देह उपस्थित हो जाता है तो नाभेमेंसे कुछ दाने निकालकर पानीमें डाल दिए जाते हैं। यदि यह दानेकी तरह रह जाये तो कस्तूरी असली मानी जाती है और घुल जानेपर कृत्रिम या मिलावटी। दूसरा तरीका दहकते हुए कोयलेपर कुछ दाने कस्तूरीका रख देना है। यदि यह पिघलकर बुद-बुदे हो जाएं तो उत्तम है और एक दम सख्त हो कर कोयला हो जाएं तो मिलावटी। असली कस्तूरीको गाड़ देनेपर भी वह अपनी सुगन्ध नहीं बदलती, जब कि अशुद्ध या मिलावटी कस्तूरी सर्वथा भिन्न गन्ध देने लगती है। मिलावटी कस्तूरीको छूकर भी जाना जा सकता है। असली कस्तूरी छूनेपर कोमल और मिलावटी कठोर मालूम पड़ती है। पंजाबसे कस्तूरीके बाबत विख्यात और दिलचस्प परीक्षण प्राप्त हुआ है। हींगके आरपार एक डोरा निकालकर उसे फिर कस्तूरी के नाभेमेंसे निकाला जाता है। यदि धागेमें हींगकी गन्ध रह जाती है तो कस्तूरीको मिलावटी माना जाता है।

कृत्रिम कस्तूरी—चूंकि कस्तूरी बाजारमें बड़ा मूल्य प्राप्त करती है इसलिये अभागा छोटा पशु कस्तूरी मृग निर्दयतापूर्वक अपने मूल्यवान सुगन्धित नाभेके कारण शिकार किया जाता है। विदेशी पशु शास्त्रज्ञोंने यदि बिना किसी रुकावटके इन पशुओंका क्षय करनेके बाबत नाशकी वर्तमान अवस्था रहने दी जाये तो भय प्रकट किया है। अनुमान किया जाता है कि एक काटी (५२ तोला) कस्तूरीके लिए कम से कम २२ नाभोंकी आवश्यकता पड़ती है। इस तरह एक काटी कस्तूरीको व्यौपारके लिए बाजारमें लाने पर २२ नर कस्तूरी मृगोंको मारना पड़ता है। क्योंकि कस्तूरीके नाभे नर मृगके उदरमें ही पाये जाते हैं। दूरीसे देखनेपर नर और मादाकी पहचान नहीं हो पाती इसलिए एक काटी कस्तूरी नाभोंके लिए बहुतसे नर या मादा पशुओंको पकड़ना या मारना होता है। यह पशु मद उत्पन्न होने वाली ऋतुमें ही पकड़े या मृगया किए जाते हैं और इस तरह इनका सर्वनाश हो रहा है। अतः इस तथ्यसे फ्रांसमें सुगन्धीकी चीजोंके लिए बढते हुए व्ययका मिलान करनेके लिए, वहाँके केमिस्टों को इस प्राकृतिक वस्तुका कोई प्रतिनिधि तलास करनेके लिए अग्रसर किया जो कि उनकी प्रयोगशालामें बनाया जा सके।

कस्तूरीके सदृश सुगन्धित यौगिक तैयार किये गए हैं। लेकिन इनका निर्माण सम्बन्धी रासायनिक प्रकार प्राकृतिक कस्तूरीसे सर्वथा भिन्न है। यद्यपि यह जह-रीला नहीं फिर भी सुगन्धीमें अधिक सस्ती दशाओं में प्राकृतिक बहुमूल्य कस्तूरीके प्रतिनिधि रूपमें प्रयुक्त होता है। कस्तूरीके प्रतिनिधि जो कि वर्तमानमें ट्रिनी-ट्रोमेटा टर्टियरि बुटिल टोल्यूएन (Trinitrometa Tertiabutyl Toluene) और इसके अनुरूप यौगिक (Homologues of Toluene) केनोटसके प्रति-निधि डिनाइट्रो जो कि टोल्यूनके यौगिके एसिल क्लो-राइड्स पर उनकी परस्पर क्रियासे बनाये जाते हैं, के नामसे प्रसिद्ध हैं। इनमेंसे Trini Trobutyltoluol, $C_6 HNO_3, CH_3^3 \ C_4 H_7$, को सर्व श्रेष्ठ माना गया है। इसकी सुगन्ध प्राकृतिक कस्तूरीसे बहुत मिलती है और परफ्यूमरीमें कृत्रिम कस्तूरीके नामसे विक्रयकी जाती है।

कस्तूरीका व्यौपारिक महत्व—भारतमें और चीन जापान तथा पूर्वीय द्वीपोंमें भी कस्तूरीका उपयोग बहुत ज्यादा होता है। इसको औषधीय उपयोगके अतिरिक्त सुगन्धीमें बहुत ज्यादा काममें लिया जाता है। फ्रांस कस्तूरीका सर्वाधिक और बड़ा क्रेता है और निर्यातका $\frac{1}{3}$ भाग प्राप्त करता है। कस्तूरीके व्यौपारिक महत्वकी

कुछ कल्पना अकेले चीनसे निर्यात होने वाले कस्तूरी के वार्षिक मूल्यसे की जा सकती है जो कि ७० हजार पौंडसे १ लाख पौंडके बीचमें होता है और कस्तूरीकी उस बड़ी मात्राके लिए जो कि चीन स्वयं अपने लिए रख लेता है कुछ नहीं कहना है। वहां पर इस का उपयोग मात्र सुगन्धीके लिए ही नहीं किया जाता अपितु उत्तेजक औषधियोंमें भी किया जाता है। कहा जाता है कि लगभग ८ वर्ष पूर्व दक्षिणी पूर्वी सारुंग (Tsarung) के लामाओंने कस्तूरी मृगके निर्दयतापूर्वक वध किए जानेके कारण शिकारियोंको कस्तूरी मृगके पकड़ने या शिकार करनेके बाबत, निषेधात्मक राजघोषणा निकाली जिसमें बहुत शख्त जुर्मानेका आदेश था। उस घोषणामें कहा गया था कि कोई भी शिकारी मृग पकड़ेगा या शिकार करेगा तो उसके हाथ पैर काट डाले जाएंगे और उसको मन्दिर के दर्वाजे पर कीलसे टांग दिया जायगा। लामाओं की इस भयंकर दण्ड घोषणाके होते हुए भी तिब्बतकी सीमापरसे आने वाली कस्तूरीकी मात्रा प्रति वर्ष अधिक है।

भारतसे काफी मात्रामें कस्तूरीका अमरिका और संसारके अन्य भागोंको निर्यात किया जाता है। वाटके अनुसार १८७८-१८८८ तक के १० वर्षोंमें भारत से कस्तूरीके ४४१६५ औंसका कुल निर्यात मूल्य ११,१७,५७९ रुपये था।

औषधज प्रभावः—इस लोकप्रिय उपचारके प्रभावके सम्बन्धमें स्वल्प ही जाना गया है। बाजारसे प्राप्त होने वाली कस्तूरीके सचमुच बहुतसे प्रयोग करने पर वास्तवमें वह सर्वदा अत्यधिक मिलावटी सिद्ध हुई है। स्वदेशी और आयातकी हुई कस्तूरीका निष्कर्ष भी सन्देहसे परे नहीं। हमारे निरीक्षणोंकी कोई भी सम्भव भूल निकालनेके लिए हमने विशुद्ध कस्तूरीके नमूने, भारतीय प्रणालीके विख्यात चिकित्सकसे प्राप्त किए थे। ये नमूने राणा साहब थारोच (सिमला हिल स्टेट) की सीमाओंमें मारे गए और काश्मीरके विश्वसनीय विक्रेताओंसे कस्तूरी मृगके नाभोंमेंसे प्राप्त किये गये थे।

कस्तूरीके औषधीय परीक्षणके लिए हमारी प्रयोगशालामें कस्तूरीको स्वल्प मद्यसारमें भिगोकर और फिर उसका जलमें प्रविलय कर २४ घण्टे रखकरके विलयन तैयार किया गया था। यह नमूना आर्द्र हो तो गन्धकाम्ल पर वायु शोषक यन्त्र (Vaccum Desiccator) से इसे सुखालिया जाता है। इस तरह करने पर १५-२० प्रतिशत तक आर्द्रता लुप्त हो जाती है। कस्तूरी अच्छी तरह से पानीमें विलय हो जाती है और वनस्पतिका कोषमय महत्वहीन तत्व छोड़ देती है। यदि इस विलयनको गर्म किया जाय तो थोड़ी-सी कस्तूरी और घुल जाती है परन्तु ऐसा करने से कस्तूरीका उड़नशील तत्व नष्ट हो जाने की संभावना रहती है। इस लिए गर्म करना उचित नहीं समझा गया।

भारतमें कस्तूरी और इससे मिलने वाले सुगन्धित द्रव्यों का बहुत समयसे स्वदेशीय औषधियोंमें प्रयोग किया जा रहा है जो कि अपस्मार, उन्माद और बच्चों के आक्षेप रोगोंमें लाभकारक है। वास्तव में लगभग सभी प्राचीन और अर्वाचीन भैषज संहिताओंमें इस भेषजको शक्तिशाली सुगन्ध, वातनाड़ी शामक (Nerve sedative) में आश्चर्यजनक कार्य करती है। फिर भी यह बहुत कठिन है कि इसके रोग शामक कार्यकर तत्व का वास्तविक मूल्यांकन कैसे किया जाय? क्योंकि इसके गुणोंका परीक्षणात्मक निश्चित प्रमाण प्रयोगशालामें सिद्ध नहीं किया जा सकता। मात (Matcht) और तुंग (१९२१) ने कस्तूरी और अन्य सुगन्धित तत्वोंका वातनाड़ी संस्थानके केन्द्रपर परिणाम स्वरूप होने वाले शामक प्रभावोंका अध्ययन करनेके लिए प्राविधि की एक योजना की। इस सौरभित भेषजके विलयनके कुछ बिन्दु एक कीपके मुंह पर रूईका फौहा रख कर डाले गये, जिसमें लगभग १५ मिनट तक चूहोंको बन्द रखा गया। फिर चूहों को दुर्गम स्थानके प्रवेश पर रखा गया और उनकी तिर्यक् रेखाके समय और त्रुटियोंको ध्यानसे देखने पर जाना गया कि कस्तूरी ने बहुत हल्का शक्ति का ह्रास कराने वाले उच्च केन्द्र पर असर किया।

प्रयोग शालामें पशुओं पर किए गए परीक्षणसे विदित हुआ कि कस्तूरीका शामक प्रभाव बतानेके लिए कोई प्रमाण नहीं है। इसका २ ग्रामकी मात्रामें मुंहसे सेवन कराने पर अस्पतालमें कई बीमारों पर इसका शामक प्रभाव नहीं देखा गया।

परिवहन संस्थानपर प्रभाव

१० से २० मि० ग्रा. कस्तूरीके विलेय हिस्सेका १ से २ सी. सी. जलमें बिल्लियोंकी औवींशिरामें अन्त: क्षेपण करने पर शर्करा मिश्रित क्लोरल द्रव्यसे चेतना हीन बनानेपर कण्ठस्थ रक्तवाहिनीके रक्त दबावमें कोई परिवर्तन नहीं हुआ और अधिक मात्राओंमें बहुत कम प्रभाव देखा गया। खरगोशोंके और बिल्लीके बच्चोंके निर्जन दिलोंमें, कस्तूरीके जलीय विलयनका समाहार, लेजेंडॉरिफकी विधिसे छिड़कनेपर जो कि १ से १,००० से १ से २००,००० तक होनेपर भी दिल की गति, लय और आंकुचनमें किसी प्रकारका परिवर्तन नहीं हुआ। जल व स्थलके प्राणियोंके दिल पर कस्तूरीके जलीय विलयनका अन्तःक्षेपण रस ग्रन्थि में या मेंढ़ककी त्वचामें करने पर किसी प्रकारका ध्यान देने योग्य परिवर्तन नहीं कर सका। मैंढ़कोंके एकत्रित दिलोंपर भी आचार्य रिंगरके दर्दुर मिश्रण का छिड़काव करनेपर कस्तूरीका केन्द्रित विलयन उसके अंग पर प्रत्यक्ष क्षोभ नहीं कर सका। मुदालियर, डेविड और रेड्डी (१९२९) ने सर्व श्री सौथल ब्रदर्स और बार्कले लिमिटेड (Messrs Southal Bros and Barclay Ltd) बरमिंगहामसे कस्तूरीके निष्कर्ष (Tincture) प्राप्त करके कुछ अवलोकन अंकित किये थे।

रक्तका कोषाणुओंके अंश पर होने वाला प्रभाव मुदालियार, डेविड और रेड्डी (१९२९) के मतानुसार कस्तूरी रक्तके कोषाणु अवयवों पर सुविख्यात प्रभावोत्पादक है। कस्तूरीका मुंहसे सेवन करानेपर श्वेत रक्ताणुओं (Leucocytes) की पूर्ण संख्या, बढ़ जाती है। यह प्रभाव उनके अनुसार, उन बीमारोंपर विशेष करके देखा जाता है जिन्हें श्वेताणुह्रास (Leucopenia) हो। जब कुछ बीमारोंको कस्तूरीका सेवन कराया जाता है तो सम्पूर्ण श्वेताणुओंकी गणना दुगुनी हो जाती है और साधारण व्यक्तियोंमें या उनमें जो कि श्वेताणुवृद्धि (Leuco cytosis) से आक्रमित होते हैं, तुलनात्मक रूपसे बहुत ही कम परिवर्तन होता है। उन्होंने १ औंस जलमें १० से २० बूंद कस्तूरीका निष्कर्ष दिया और आधसे एक घंटेके भीतर सर्व श्वेताणुओं (Leucocyte) की संख्यामें एक निश्चित वृद्धि दिखाई दी। इन अवलोकनोंकी पुष्टिके लिए कारमाइकल हॉस्पिटलके वार्डोंमें स्वस्थ व्यक्तियोंके साथ-साथ ६ रोगियोंके एक समूहको पृथ्वीके मध्य अयनगत प्रदेशज रोगों से पीड़ितोंके लिए यह भेषज दिया गया, जो कि श्वेताणुओंके ह्रास युक्त काला आजारसे आक्रमित हो रहे थे। कस्तूरी चूर्ण रूपमें १ ग्रेनकी मात्रामें लगातार ७ दिन तक भोजनके २॥ घंटे पश्चात् दिया गया और रक्तभार, नाड़ी गति, परिमाण (आकृति Volume), केन्द्रसे निकलने वाली नाड़ीके प्रसारणीय अर्थात् दो स्पन्दोंके मध्यका रक्तभार (Tension) का नियमित अभिलेखा गया। और उसी समय रक्तके रक्ताणुओंकी (Erythro cytic) और श्वेताणुओं (Leucocytic) की गणना भी की गई। क्योंकि कस्तूरी देनेके शीघ्र ही पश्चात् गणना, मानसिक (Psychic) तथा आमाशयज प्रतिक्रियाओं (Reflexes) के कारण जो कि इस भेषजके कारण उत्पन्न होती हैं, मिथ्या भ्रमोत्पादक हो सकती हैं। हमने मात्रा देनेके तुरन्त और २-३ घण्टे देर तक अवलोकन किया। रक्तकी गणना कस्तूरी देनेके पहले और बादमें की गई। और पुन: ७ दिवसकी समाप्तिके अन्तमें भी की। इस तिथि को भी हमने गणनामें कोई जानने योग्य परिवर्तन नहीं देखा। रक्तदबाव, नाड़ीगति, तनाव (Tension) इत्यादि ने कोई जानने योग्य परिवर्तन नहीं दिखाये। स्वस्थ व्यक्तियोंको (परिक्षण शालाके सहायक चिकित्सकों Laboratory assistants) भी कस्तूरीकी २ग्रेनकी मात्राएं देनेके पश्चात् नाड़ीकी गति, रक्तदबाव और रक्ताणुओंकी संख्यामें कोई परिवर्तन नहीं देखा उन्होंने फिर भी वर्णन किया कि आमाशयके भीतर

सामान्य क्षोभ अनुभव किया क्योंकि यह भेषज, जो कि कई प्रकारोंसे आमाशय पौष्टिक मिश्रणकी मात्रामें इसके प्रभावकी तुलना करनेके उद्देश्यसे दी गई थी; कई तरहसे मिलता-सा प्रभाव उत्पन्न करती है। काला आजार बीमारीकी अवस्थामें प्राप्त किये गये परिणाम स्वस्थ व्यक्तियोंकी अवस्थामें देखे गये परिणामोंके समान पाये गये और श्वेताणुओंकी गणनामें जानने योग्य किसी तरह की वृद्धि नहीं देखी गयी।

श्वसन संस्थानपर प्रभाव—दानेदार चेतना ह्रासज द्रव्योंके प्रभाव जानवरोंमें कस्तूरीके विलेय भागके १० से २० मिलीग्रामके अन्तःक्षेपण, १ से २ सी. सी. जलमें कण्ठस्थ नाड़ीके भीतरके दबावको, अङ्कित करनेके कागज पर देखनेसे विदित हुआ कि उसमें कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। फिर भी जब एक रूईका फौहा, कस्तूरीके विलयनमें भिगोकर पशु की नासाके निकट सम्पर्कमें लाने एक बहुत अस्थिर और स्पष्ट उत्तेजना श्वासोच्छ्वासमें देखी गई। यह अस्थिर उत्तेजना उस समय भी देखी गई जब कस्तूरी के जलीय विलयनकी एक सूक्ष्म मात्रा छोटी सिरिञ्ज के द्वारा उस पशुकी चेतना शून्य नासिकाकी श्लेष्मिक कलामें आहिस्तासे छिड़काई गई। अन्तिम अवस्थामें उत्तेजनाके लिए लगा हुआ समय, कस्तूरीको नासाके सम्पर्कमें लानेमें लगे समयकी अपेक्षा अधिक लम्बा है। यह सम्भवतः इस तथ्यसे है कि प्रबल गन्धमय द्रव्य उड्डयनशील अवस्थामें चेतनागंधके द्वारा आदर्श-भूत गन्ध उत्पन्न करनेकी क्रिया करती हो।

कण्ठस्थ श्लेष्मिक कलाके ऊपर जब कस्तूरीका विलयन कण्ठस्थ नलिकाके भीतर मुंह बनाकर छिड़का गया तो नासा श्लेष्मिककलामें सीधा व्यवहृत करनेसे उत्तेजना उत्पन्न करनेमें असफल रहा जैसा कि इसका नासा श्लेष्मिक कलामें सीधा व्यवहार करनेपर देखा गया था।

उपर्युक्त प्रयोगोंसे विदित होता है कि कस्तूरी श्वसनसंस्थानपर अपनी विशेष क्रिया नहीं दर्शाती। जो कुछ भी क्षुद्र उत्तेजना श्वासोच्छ्वासमें प्रतीत हुई वह सम्भवतः श्लेष्मिक कलाकी सम्पूर्ण प्रतिफलित क्रिया है जो कि गंध ग्राहक वातनाड़ीके सिरा द्वारा उत्तेजना उत्पन्न करने पर हुई थी। गंध ग्राहक वातनाड़ी जो मस्तिष्कके निम्न भागमें अवस्थित है, उसके और उसके मार्ग द्वारा मस्तिष्कस्थ पश्चिम खण्डके मध्य शृङ्गकी सतह पर मुड़ा हुआ स्थान, जो कि लपेटा हुआ है, उसके उच्च केन्द्रोंपर प्रभाव डालती है। इन क्षेत्रोंमें सुषुम्ना नाड़ीस्थ श्वसन केन्द्र, सम्भवतः प्रबन्धक सूत्र का मस्तिष्क तथा सुषुम्ना रज्जुसे निकलनेके कारण उत्तेजित हो जाता है। लगता है कि कस्तूरी बहुत तीव्र और प्रसिद्ध गन्धमय पदार्थ है। जर्मनीके औषध चिकित्सक वलेण्टिन (१६०२) ने अनुमान लगाया कि ०,०२ मिलीग्राम (०,००,०००,००९ मिलीग्राम प्रतिलीटर) को भी प्राणी सूंघकर स्पष्ट रूपसे पहचान सकता है और इसके द्वारा उत्पन्न संवेदन नाड़ीकी उत्तेजनाकी सहज ही कल्पना हो जाती है।

आयुर्वेदमें कस्तूरीका उपयोग—भारतीय चिकित्सकों द्वारा कस्तूरीका प्रयोग बहुत समयसे हो रहा है। यह कई प्रयोगोंका घटक है। भावप्रकाशमें इसकी ३ जातियोंका वर्णन है। यथा (१) कामरूप (असम-देश), (२) नेपाल और (३) काश्मीर। प्रथम प्रकार की काली और अन्यकी अपेक्षा सर्वश्रेष्ठ बतलाई गई है। यह सम्भवतः चीन और तिब्बत की है जो कि कामरूप होकर आती है। नेपालकी कस्तूरी रंगमें काली-सी होना बताया गया है वह मध्यम श्रेणी की है। काश्मीरी कस्तूरी निम्न श्रेणीकी है। भारतीय चिकित्सक इसको हृद्य और सर्व इन्द्रियोत्तेजक, कामोत्तेजक तथा मन्द पुरानी खाँसी, सब अवयवोंकी निर्बलता, नपुंसकता नाशक रूपसे एवं आक्षेपशामक तथा वेदना हर गुणके लिए व्यवहृत करते हैं। यह हृदयोत्तेजनार्थ सर्वोपरि पसन्द की हुई और अन्तिम वस्तु है, जबकि अन्य वस्तु हृदय रक्षणार्थ असफल हो जाती है। यह हृदयोत्तेजक होनेके कारण कभी-कभी स्वतन्त्ररूपसे अथवा कभी कभी सहायक रूपसे मकरध्वजके साथ मिलाकर दी जाती है। कहा जाता है कि पारदके अघुलेय (गन्ध योग) से निर्मित भेषज और

खरैंटीको मिलाकर रोगीको देनेसे मस्तिष्क, श्वसन-केन्द्र, सुषुम्नास्थ रक्तवाहिनी केन्द्र, सुषुम्नारज्जु और सतहपर अवस्थित वातनाड़ी सिराओंको उत्तेजना प्रदान करती है। यह रक्तवाहिनियोंके तनावकी वृद्धि करती है एवं प्रजनन और मूत्रजनन अंगको उत्तेजना देती है। यह मूत्रोत्पत्ति,स्वेदोत्पत्ति और दुग्धोत्पत्तिका ह्रास करती है। उदासीनतायुक्त सामान्य ज्वरों, पाण्डु और सर्वाङ्गकी निर्बलताकी जीर्णावस्थामें विशेष गुणकारी है। इसके कामोत्तेजक गुणधर्मका नपुंसकतापर प्रचुरतासे उपयोग होता है। दक्षिण भारतमें तामिल चिकित्सक बच्चोंको आक्षेप आनेपर अफीमके साथ मिश्रितकर इसका उपयोग करते हैं। उनके मतमें यह अजीर्ण और बृहदन्त्र प्रदाहज आमातिसारकी अचूक औषधि है।

बहुत करके कस्तूरीका प्रचार पाश्चात्य औषधमें १६ वीं शताब्दीके अन्तिम भागसे हुआ। तबसे इसे बहुत सी बीमारियों—आन्त्रज्वर (मोतीझरा), १४ दिनका मुद्दतीज्वर, वातरक्त, अपतानक (Tetanus), हनुग्रह (Lockjaw), जलसंत्रास (पागल कुत्तेका विष विकार–Hydro phobia), अपस्मार सदृश रोग,अपतन्त्रकका आक्रमण(Hysterical attacks) नृत्यवात (Chorea), कुक्कुर कास, हिक्का, श्वास रोग, शूल इत्यादिपर क्रूकशेङ्क (१९०५) ने विषैले संयोगसे केन्द्रस्थ नाड़ी संस्थानपर होनेवाले आशुकारी और विशेष प्रकारके संक्रामक रोगोंमें इसे प्रशंसाजनक बतलाया है। उसने ५ ग्रेन चूर्णित कस्तूरीको प्रत्येक २ घण्टेके अन्तरपर देकर सन्तोषप्रद परिणाम प्राप्त किये थे। बच्चोंके आक्षेपमें जहां निश्चित कारणका पता नहीं लगता, निद्रा लानेवाली शामक औषधि क्लोरल हाइड्रासके संयोगसे कस्तूरीका सेवन करानेपर उत्तम फल प्राप्त हुये हैं। १९०६ तक क्लोरल हाइड्रास (अवस्थानुसार ५ से १० ग्रेनतक) और कस्तूरीका निष्कर्ष (Tincture) १० से ३० बूंदका गुदामें अंतःक्षेपण करनेके लिए सिफारिश की जाती थी। यह रक्त परिभ्रमण और हृदय गतिके निष्फल होनेपर हृदय उत्तेजनार्थ भी प्रयुक्त की जाती थी, जिससे रक्तदबाव, नाड़ीकी गति और तनावमें तीव्रता प्राप्त होती है। इस तरह इसका प्रयोग किया जाता था। इसके गुणके प्रति विश्वासमें फिर भी शनैः शनैः परिवर्तन हो रहा है। एक समय कस्तूरी ब्रिटिश फार्मोकोपियामें सम्मानित (स्वीकृत) थी, किन्तु अब इसे पृथक् कर दिया है। इसी तरह U.S.P. ix में भी स्वीकृत (मान्यता प्राप्त) थी, किन्तु U.S.P. X ने भी वैसा ही मान लिया है।

भारतमें अब भी चिकित्सक कस्तूरीके निष्कर्षका उपयोग कामोत्तेजककी तरह और नाड़ी संस्थानकी उदासीनावस्थामें हृदय उत्तेजनार्थ १० से ३० बूंद तक प्रचुरतासे करते हैं।

हमारी रसायनशालामें अनुभव प्राप्तिके निमित्त शय्यागत रोगियोंपर किए गए प्रयोग हृदय-बलवर्द्धक और श्वेत रक्ताणुवर्द्धक द्रव्य या गुणधर्मका विवेचन करनेकी पुष्टि नहीं करते हैं जोकि कस्तूरीमें अवस्थित हैं। इसमें जो कुछ भी उत्तेजक गुण हैं वह संभवतः तीव्र गन्ध होनेसे घ्राण नाड़ीपर उत्तेजना पहुँचाने तथा आमाशयकी श्लेष्मिक कलापर सामान्य मन्द उग्रता लानेवाला प्रभाव होनेके कारण है। इससे पूर्व हमने देख लिया है कि कस्तूरीकी एक मात्रा जिस रोगीने ले ली है उसे उष्णता प्रतीत होने लगती है और आमाशयकी श्लेष्मिक कलापर सन्तोषप्रद अनुकूल उष्ण असर पहुँचनेसे हृदय और श्वसन क्रियापर प्रतिक्षेप कर उत्तेजक प्रभाव दर्शाती है। यह मृगी, नृत्यवात और बालकोंके क्षुद्र आक्षेपमें सन्तोषप्रद गुण नहीं करती। हिस्टीरियाके आक्रमणमें तीव्र गन्धवाली हींग, जटामांसी आदिके समान फल दर्शाती है। काली खांसी और शूलपर इसका गुण सारभूत तैल द्रव्यके समान प्रतीत होता है। हमारे अनुसन्धानात्मक निरीक्षणसे हम इस परिणामपर पहुँचे हैं कि कस्तूरी का महत्व भारतमें स्वदेशी औषधियोंमें बहुत बढा-चढा है और शारीर यन्त्रके व्यापार सम्बन्धी या भेषजशास्त्र निर्णित इस द्रव्यका कोई भी गुण प्रतीत नहीं होता।

स्वास्थ्य-सौरभ—

नारीका स्वास्थ्य और सौन्दर्य

[लेखक—डा० इन्दिरा देवी शास्त्रिणी, आयुर्वेदमणि, "नारी आरोग्य मन्दिर"
मुरलीधरबाग, हैदराबाद (आ० प्र०)]

आरोग्य जीवन है, रोग मृत्यु है और स्वास्थ्य-धन ही सर्वोत्तम धन है। किसी सन्तने कहा है कि यदि विश्वकी समस्त सम्पत्ति और वैभव तराजूके एक पलड़े पर रखा जाये तथा उत्तम स्वास्थ्यको एक पलड़े पर रखा जाये तो स्वास्थ्यका ही पलड़ा भारी या गौरवशाली रहेगा। वास्तवमें स्वास्थ्यकी तुलना संसार की किसी भी संपत्ति अथवा बहुमूल्य वस्तुसे नहीं की जा सकती है।

मानवप्राणी के समस्त व्यापार, कार्य और रात दिनकी दौड़-धूप सुखके लिये है। किन्तु उस सुखका उपयोग इसी भोगायतन पाञ्चभौतिक शरीर द्वारा ही हो सकता है। फिर चाहे वह विषय-सुख हो या, ब्रह्मसुख ही क्यों न हो। यह सच है कि मनके द्वारा ही सुख और दुःखका अनुभव किया जा सकता है। किन्तु शरीर और मनका निकटतम सम्बन्ध है।

स्वस्थ शरीरमें ही स्वस्थ मनका निवास रहता है। जब शरीर अस्वस्थ होता है तो मन भी अस्वस्थ हो जाता है। अस्वस्थ शरीर और मनसे कोई भी कार्य नहीं किया जा सकता है। इसलिये शारीरिक स्वास्थ्य पर ध्यान देना मानवमात्रका प्रथम कर्त्तव्य है। किसी आचार्यने कहा भी है:—

"धर्मार्थ काममोक्षाणां शरीरं मुख्य साधनम्"।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पदार्थोंकी प्राप्तिका साधन शरीर है। इसलिये अपनी समस्त शक्ति द्वारा शरीरको स्वस्थ रखना सबसे बड़ा पुण्य है, व्रत है, साधना है और है कर्त्तव्यकर्म। यह एक प्राचीन कहावत सर्वथा सत्य है। जब अपना शरीर साथ नहीं देता तो संसारका कोई भी व्यक्ति अपना साथ नहीं देता है। अस्वस्थ या रोगी व्यक्तिसे सभी लोग दूर रहना पसन्द करते हैं। फलतः उत्तम स्वास्थ्य ही सबसे बड़ा उपहार तथा वरदान है।

प्रकृति सुन्दरीकी इस सुन्दर रंगस्थली संसारमें बहुत ही कम प्राणी ऐसे होंगे जिन्हें सौन्दर्य से प्रेम न हो। किन्तु प्रकृति स्वरूपा नारियोंका सौन्दर्य प्रेम अतुलनीय है। प्रकृति माताकी इन लाड़िली पुत्रियों के तन, मन, प्राण सदा सौन्दर्य-साधनाके रंगमें ही रंगे रहते हैं। कोई भी नारी चाहे वह राजरानी हो या भिखारिणी हो दूसरोंके सामने अपनेको असुन्दर प्रकट नहीं होने देना चाहती है। यही कारण है, विश्व के बाजार आज नारियोंके उपयुक्त सौन्दर्य प्रसाधनोंसे भरे पड़े हैं। किन्तु सुन्दर शारीरिक स्वास्थ्यके बिना कोई भी सौन्दर्य-प्रसाधन नारीको सौन्दर्य प्रदान नहीं करता। कारण, चन्द्र और चन्द्रिकाके समान स्वास्थ्य और सौन्दर्य अन्योन्याश्रित है। जहाँ स्वास्थ्य है, वहाँ सौन्दर्य भी है। उत्तम स्वास्थ्यके बिना सौन्दर्य नीरस, निर्जीव और आकर्षणहीन बन जाता है। अस्वस्थ या रोगिणी नारीको कोई भी सौन्दर्य-प्रसाधन, रत्नजटित भूषण या कौशेयक वस्त्र आदि आकर्षक नहीं बना सकते हैं। इसके अतिरिक्त कोई भी रंग सुन्दरताका प्रमुख आधार नहीं है। विभिन्न भागोंकी जलवायुके अनुसार किसी भी नारीकी शरीर-यष्टिका रंग गोरा, गेंहुआं, सुनहला या साँवला ही

क्यों न हो यदि वह स्वस्थ है और उसके शरीरमें रक्ताभिसरण ठीक-ठीक होनेके कारण उसके मुखमण्डल पर रक्तकी लालिमा झलक रही है तो वह लावण्य तथा सौन्दर्यकी अधिष्ठात्री देवी जैसी प्रतीत होती है। उसके अंग-प्रत्यंगसे सौन्दर्य फूट-फूट कर निकलता रहता है। वह किसी भी कृत्रिम सौन्दर्य-प्रसाधन या अलंकारकी अपेक्षा नहीं करती है। जो भी वस्तु उसके निकट जाती है, वह स्वयं अलंकार बन जाती है। स्वास्थ्य और सौन्दर्यका निकटतम सम्बंधका रहस्य महाकवि कालीदासने अपने "अभिज्ञान शाकुन्तल" में प्रकट किया है।

बात है एक तपोवनकी। महर्षि कण्वका आश्रम है। महर्षि कण्व आज आश्रममें नहीं हैं। वे किसी कार्यवश बाहर गये हैं। आश्रमकी पूरी व्यवस्थाका भार आज शकुन्तलापर है। महाराज दुष्यंत मृगयाके श्रमसे श्रान्त होकर महर्षि कण्वके आश्रममें आते हैं। शकुन्तला मुनिकन्याओंकी भांति वल्कलवस्त्र पहने तरुलताओंके आलवालोंमें जल डाल रही है। दुष्यन्त की दृष्टि शकुन्तलापर पड़ती है। वह आश्चर्यचकित हो मन ही मन कहते हैं। शैवालसे परिवेष्ठित होनेपर भी कमलका फूल सुन्दर प्रतीत होता है, चन्द्रमंडलमें प्रतिभासित होने वाला काला कलंक या चिन्ह भी चन्द्रकी शोभाको बढ़ाता ही है, ठीक उसी प्रकार इन वल्कल-वस्त्रोंके परिधानसे भी यह वन-देवी अत्यन्त सुन्दरी प्रतीत होती है। वास्तवमें प्रकृतिसुन्दरी मधुरमूर्त्तियोंके सम्पर्कमें आकर कौन सी चीज भूषण नहीं बन जाती है। इसका अभिप्राय यही है कि सच्चा सौन्दर्य प्रसाधनो द्वारा नहीं प्राप्त होता है, अपितु सुन्दर स्वास्थ्यके द्वारा ही वह प्राप्त होता है।

अब यहाँ प्रश्न उठता है कि स्वास्थ्य कहते किसे हैं और वह कैसे प्राप्त किया जा सकता है? स्वास्थ्य का अर्थ है नीरोगता। वह दो प्रकारकी होती है एक शारीरिक और दूसरी मानसिक। जो व्यक्ति शरीर और मन दोनोंसे स्वस्थ है, वही सच्चे स्वास्थ्य-सुखका अधिकारी है। संसारमें देखे जाने वाले भयंकर रोगोंके अतिरिक्त काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद मत्सर ईर्ष्या तथा द्वेष आदि अगणित मानसिक रोग भी हैं। जो नारी अपनी स्वास्थ्यसाधना द्वारा उपर्युक्त सभी प्रकार के रोगोंसे मुक्त होनेका प्रयत्न करती है, वही तन-मन से सुन्दर बन कर सच्चे सौन्दर्यकी अधिकारिणी होती है।

आयुर्वेद की चमत्कारिक औषध

काञ्चनार

लेखक—कविराज पं० भुवनकिशोर शास्त्री आयुर्वेदाचार्य

नाम—N. O. लेग्य मिनोसी (Laguminosae) शिम्बी कुल। संस्कृतमें—कर्बुदार-काञ्चनार, अश्मान्तक, आस्फोत, उद्दालक, काञ्चन, कान्तार, कनकप्रभा, करक, काञ्चनारक, कुली, गण्डारि, कोविदार, काकनक, रक्तपुष्पः, गिरिजः, ताम्रपुष्पः, चमरिकः, चम्पविदलः, महापुष्पः, युग्मपत्र, युग पत्रकः, सुवर्णारः, शोण पुष्पः, स्वल्पकेशरः, पाकारिः, कुद्दालः, कुदारः, यमलपत्रकः, कुद्दालः, यमलच्छदः, काञ्चनालः, चमरी, कुद्दारः, रक्त काञ्चनः।

चरक संहिता (जामनगर प्रकाशित)

हिन्दीमें—कचनार, कोइलारि, कोइनार, गैलार, कलियार। बंगालीमें—देवकाञ्चन, लेटिनमें—बोहिनिआवेरिगेटा Bauhiniavarigata। मराठीमें—कोरल, काञ्चन, पंजाबीमें—कचनाल, कुलाड़। गुजरातीमें—चम्पाकाटी। तामिलमें—मंदारैः, तेलगुमें—देवकाञ्चन।

उत्पत्ति स्थान—यह हिन्दुस्तानके वायव्य प्रान्त में पाया जाता है। यह भारतके अधिकतर पहाड़ी प्रदेशोंमें उत्पन्न होता है, बगीचोंमें इसके वृक्ष भी लगाये जाते हैं।

वनौषधि परिचय—कचनारको पुष्पोंके भेदसे तीन विभागोंमें बांटा जा सकता है।

(१) श्वेतपुष्प, (२) रक्त व ताम्र पुष्प, (३) पीत पुष्प। सुगन्धित तथा निर्गन्धित भेदसे पुनः दो प्रकार का हो जाता है।

रक्त कचनार—रक्त व ताम्र पुष्पकोविदार को अनेकोंने देखा होगा। इसके वृक्ष उद्यानोंमें सुरक्षित पाये जाते हैं। पुष्पोंमें ५ दल होते हैं जो विषमाकृति रहते हैं। कोविदार चैत्र और फाल्गुन मासमें फूलता है

श्वेत कचनार—यह प्रायः रक्त कचनार के तुल्य ही होता है। यह शीतकालमें और कहीं कहीं शरदकालमें भी पुष्पित होता है।

पीतकचनार—इसके पेड़ बृहदाकार तथा पार्वत्य प्रदेशोंमें होते हैं। अतएव इसे 'गिरिज' भी कहते हैं। पीतकचनारके पुष्पमें घना गुलाबी वर्ण मिश्रित होता है।

पत्रका अग्र भाग नताग्र (दबा हुआ) होता है, मानो दो पत्र जुड़े हुए हों ऐसा मालूम होता है। यह एक मध्यम आकारका वृक्ष होता है।

काञ्चनारकी अविकसित कलीका साग बनाया जाता है। छाल खाकी रंगकी तथा कहीं-कहीं गहरे रंगकी व बादामी रंगकी होती है। इसके पत्ते ५-७ से १० सेण्टीमीटर तक लम्बे होते हैं।

इसके पत्रपर बारीक-बारीक नसें उठी रहती हैं। इसकी कली लम्बी और हरी होती है। इसमें भी सुगन्ध होती है।

फूलमें पांच विषमाकार पंखड़ियां, पांच पुंकेशर और स्त्रीकेशर होता है।

इसके विपरीत निर्गन्धित पुष्प श्वेत कांचनमें और पीतकांचनमें केशरोंकी संख्या १० होती है।

इसकी फली एक वित्ता (वितस्ति) लम्बी और चपटी होती है।

मूलः—इसकी मूलें (जड़ें) जमीनमें लम्बी गई हुई होती हैं।

उसके ऊपरकी छाल खडबचड़ी जरा जाडी काले रंगकी और भूरे सलेटी रंगकी होती है।

अन्तर छाल मजबूत रेसे वाली और उसको उखाड़नेपर सारी उखड़ सकती है। गंध अच्छी होती है। रस-स्वादु-कटु। अनुरस-जरा चरपरा लगता है।

डांडी और शाखाएं—इसकी डांडी हाथ जैसी मोटी होती है। शाखाओंकी छाल भूरे रंगकी होती है। और उसपर लम्बी चीर (रेखा) होती है।

इसके अन्दरकी छाल नीले रंगकी होती है। इसकी लकड़ी पीले व सलेटी श्वेत रंगकी बहुत मज-

बूत होती है। छालकी गंध जरा उग्र और स्वाद मीठा होता है। अनुरस कटु-दाहक और चरपरा लगता है। कोमल शाखाओंपर नीले रंगके व तपखिरिआ रंगके रोयें और रेसे होते हैं।

पत्ते—पत्ते दूर-दूर होते हैं। जहांपर पत्ते लगे हुए होते हैं वह भाग सली जितना पतला और ¾ से १ इंच तक लम्बा होता है। उसके अन्दर पानके ऊपर निकली हुई ७ से ९ नसें ऊपरको गई हुई होती है। पत्रके पीछेकी सपाटी स्पष्ट दिखाई देती है। पत्रके ऊपर सफेद बालके रौंये होते हैं। पत्ते बीचमें जुड़े हुए ऐसे दिखाई देते हैं जैसे कि दो पत्ते जुड़े हुए हों। पत्रकी सुगंध मीठी नीमकी जैसी अर्थात् कडुए नीम जैसा स्वाद होता है।

पत्रकी सलाईके तनेके दोनों तरफ एक एक उप पत्र होते हैं।

फल—फलकी सलाईपर सूक्ष्म-सूक्ष्म बालोंके रौंये होते हैं। फलके नीचे ½ इंच लम्बी सलाई होती है जिसपर फल लगे रहते हैं।

फल फीका पीलास लिये हुए नील रंगके होते हैं जिससे सूखनेपर भूरे रंगके हो जाते हैं, उसके ऊपर तपखीरिआ रंगके बालोंके रौंये होते हैं अतः उसपर अंगुली फेरनेसे मखमल जैसा मुलायम लगता है।

फलकी सुगन्ध बराबर तिक्त निम्ब जैसी होती है। फल सूखनेपर मुड़ जाता है और उसमेंसे बीज बाहर निकल जाते हैं।

फूलः—पुष्प पत्र लम्बे लम्बे होते हैं। पुष्प बाह्य-कोष ½ इंच लम्बा और गहरे रौंये भरे हुए होते हैं। पुष्प आभ्यन्तर कोषकी पंखड़ी १½ से २ इंच लम्बी होती है।

बीज—गोलाई लिये हुए जरा चपटा-चमकते हुए एवं मुलायम और नीलास लिये हुए भूरे रंगका होता है। इसका व्यास ½ इंचसे कुछ अधिक होता है। बीज अधिक कठिन होता है। इसके अन्दरसे सफेद और बीचमेंसे पीलास लिये हुए दो दाल निकलती हैं।

प्रयोगार्थ प्रयुक्त अंश—इसकी फली, छाल, पत्र पुष्प, बीज और गोंद काममें आते हैं अर्थात् प्रायः इसका पंचांग ही काममें आता है।

गुण धर्म—कचनार कषाय, शीतवीर्य, ग्राही, ऊर्ध्व भागगत कफहर, कृमि, कुष्ठ, गुदभ्रंश, गण्ड-माला और व्रणका नाश करनेवाला है। कचनारके फूल मधुर, मधुर विपाक, रूक्ष, ग्राही तथा रक्तपित्त, रक्तविकार, प्रदर, क्षय और खांसीको नष्ट करता है। भावप्रकाशमें लिखा है—

> काञ्चनारो हिमो ग्राही तुवरःश्लेष्मपित्तहृत्।
> कृमि कुष्ठ गुदभ्रंश गण्डमाला व्रणापटः॥
> कोविदारोऽपि तद्वत् स्यात् तयोः पुष्पं लघुस्मृतम्
> रूक्षं संग्राहि पित्तास्र प्रदर क्षय कास नुत्॥

इसकी जड़ शान्तिदायक और पेटके आफरेको दूर करती है। इसकी छाल रक्तातिसारमें संकोचक औषधके तौरपर काममें ली जाती है। इसका काढ़ा घावोंको धोनेके काममें लिया जाता है। इसके फूल मृदु विरेचक होते हैं। इसकी छाल जड़ें और फूलों को चावलके पानीके साथ मिलाकर व्रण और विद्रधि को पकानेके काममें आते हैं।

कर्नल चोपराके मतानुसार इसकी छाल संकोचक जड़ पेटके आफरेको दूर करने वाली और फूल मृदु विरेचक होते हैं।

कचनार मलरोधक, पित्त-कफ नाशक तथा कृमि, कोढ, गण्डमाला और व्रणका नाश करता है। इसके फूल शीतल, रूखे, ग्राही, हलके तथा पित्त, क्षय, प्रदर, खांसी और रक्तरोग (मुंहसे खून आना और हैजाका खून) को दूर करता है, इसकी छालका कुल्ला करने से मुंह आने तथा मुंहकी बीमारियां दूर होती है।

नव्यमत—कचनारकी क्रिया त्वचा और रस-ग्रन्थियोंपर होती है। कचनार ग्राही, व्रणशोधन और व्रणरोपण है। बड़ी मात्रामें देनेसे वमनकारक है। गण्डमाला और अपचीमें छालका क्वाथ गूगलके साथ देते हैं। इससे व्रणको धोते हैं। रोग नया हो तो इससे लाभ होता है। (डा० वा० ग० देसाई)

मैंने १-२ रोगियोंको काञ्चनार गुग्गुलु काञ्चनार की छालके क्वाथ व गोरखमुंडीके क्वाथमें शहद मिलाकर प्रातः सायं सेवन कराया २०-२५ दिनके

प्रयोगसे रोगियोंको बड़ा लाभ पहुँचा।

सुवर्ण भस्म बनानेके लिये भी कचनारका उपयोग होता है। रसतरंगिणीमें लिखा है कि स्वर्णकी निश्चन्द्र भस्म होनेपर इस भस्मको कचनारकी छालके स्वरस की भावना देकर फिर लघुपुटमें फूंके। इस प्रकार कचनारके स्वरसकी ३ भावना दें।

परीक्षण व औषध निर्णय—त्वक परीक्षणका स्तर (Standard) निम्न लिखित है—

प्रत्यक्ष चाक्षुष परीक्षा—वस्तुतः इसके मुख्य २ स्तर होते हैं। १. बाह्यस्तर जोकि खुरण्डके रूपमें रहता है। २. आभ्यन्तर स्तर जोकि लम्बे लम्बे स्तरों के योगसे बनता है।

अर्थात् (आभ्यन्तर) मध्यस्तर एक ही है परन्तु उसके कई स्तर दिखाई देते हैं। इसका बाह्यभाग खर तथा धूसर वर्णका है, त्वकका आभ्यन्तर भाग कत्थई है। शुष्कको काटनेपर, आभ्यान्तर स्तरसे कई स्तर पृथक होते हुए दिखाई देते हैं। लम्बी लम्बी धारियोंके बीच छोटे छोटे रक्तवर्णके कण होते हैं। बाह्यभाग उन्नतोदर होता है और आभ्यन्तर भाग नतोदर होता है।

आर्द्र द्रव्य—शुष्क द्रव्यको काफी देर तक भिगोनेपर उसका वर्ण श्याम और रक्त हो जाता है। आर्द्रद्रव्यको रगड़नेसे उसका रक्तवर्ण अंगुलियोंपर लग जाता है।

यान्त्रिक परीक्षा

अनुप्रस्थच्छेद—अनुलम्ब लम्बी-लम्बी धारियोंसे अनुप्रस्थ स्तर मालूम देते हैं क्योंकि अनुलम्ब धारी वाली वस्तुको अनुप्रस्थ काटनेपर धारी (स्तर) दिखाई दिया करते हैं।

अनुलम्बच्छेद—अनुलम्ब छेद करनेपर अनुलम्ब लम्बी-लम्बी धारी स्तरोंके रूपमें दिखाई देती हैं।

द्रव्य स्थित प्रकृत वर्ण

शुष्क—धूसर तथा कत्थई।
आर्द्र—श्याव तथा रक्त।
केष—
शुष्क—कत्थई। आर्द्र-श्याव तथा रक्त।
भंगे—कत्थई।
चूर्णे—कत्थई।
क्वाथे—रक्त।
तैले—इषित रक्त।
घृते—इषित् रक्त।
ज्वालायाम्—रक्तवर्णके स्फुलिङ्ग।

विलेयता

वारि—अल्पांश।
तैल—अल्पांश।
घृत—अल्पांश।
सुरा—अल्पांश।

रस परीक्षा

शुष्क—कषाय।

गंध परीक्षा

शुष्क—मृदु। आर्द्र-ईषत् उग्र।
धूपने—उग्र।

स्पर्श परीक्षा

त्वक—मूर्तगुण।
शुष्क—कठिन-खर-रूक्ष-लघु-समशीतोष्ण।

शब्द परीक्षा

शुष्क—भग्न कालीन शब्द।
कट्कट शब्द—अ भंगुर।

द्रव्यके वर्गका सहेतुक निरूपण-(पार्थिव, आप्य तैजस आदि)।

प्रस्तुत परीक्ष्य द्रव्य प्रायशः कषाय है अतः वायव्य वर्गका है क्योंकि वायव्य द्रव्य प्रायशः कषाय होते हैं।

वायव्य—प्रायशः कषायत्वात्।

प्रयोग और परिणाम

दोष प्रयोग-यह कफजन्य विकारोंमें प्रयुक्त होता है।

सांस्थानिक बाह्यप्रयोग—इसके क्वाथसे व्रणों एवं चर्मरोगोंका प्रक्षालन करते हैं। गण्डमालामें इसकी छालका लेप करते हैं। इसकी छाल व बबूलकी फली और अनारके फूलोंका क्वाथ बनाकर लाला-

प्रसेक और मुखपाकमें गण्डूषधारण कराते हैं। गुद भ्रंशमें इसके क्वाथसे परिषेक करते हैं।

आभ्यन्तर पाचन संस्थान—स्तम्भन होनेसे इसका प्रयोग अतिसार, प्रवाहिका, गुदभ्रंश, अर्श इन रोगोंमें करते हैं। इसका प्रयोग कृमि रोगमें भी होता है।

वामक द्रव्योंके साथ सहायक रूपमें इसका प्रयोग होता है। इसके पुष्पोंका गुलकन्द विबंधमें देते हैं।

रक्तवाहक संस्थान—यह रक्तपित्तमें प्रयुक्त होता है, गण्डमाला एवं रस ग्रन्थियोंकी वृद्धिमें यह प्रशस्त औषध है।

श्वसन संस्थान—यह कासमें लाभकर है।

मूत्रवह संस्थान—प्रमेह रोगमें यह उपयोगी है।

प्रजनन संस्थान—यह स्तम्भन होनेसे रक्तप्रदर में प्रयुक्त होता है।

त्वचा—यह कुष्ठ रोगोंमें दिया जाता है।

सात्म्यीकरण-मेदोरोगमें इसका प्रयोग होता है।

चम्पाकी जड़ पानीमें घिसकर संधिवात और रसविकार, शोथके ऊपर लेपके लिये काम आता है।

कचनारके फूलकी कली शक्करके साथ प्रमेह रोग वालेको दी जाती है।

कचनारके बीचके छिलके निकालकर अन्दरकी फल मज्जा पानीमें पीसकर उसका लेप गलगण्ड, चकत्ता व्रण, मुरड़के ऊपर लेपके लिये उपयोगी है।

कचनारके मूलकी छालका क्वाथ संग्रहणी और अतिसारपर लाभ दायक है। इसके फूलकी सूखी और ताजी कली संग्रहणीपर दी जाती है।

ऐसा कहा जाता है कि कलेजे (हृदय) के दर्दमें इसके मूलकी छालका क्वाथ उपयोगी है। ऐसा भी कहते हैं कि गण्डूष करनेके लिये और जो व्रण नहीं भरता उसके लिये और गलगण्डको धोनेके काममें आता है।

योग

विशिष्टयोग—काञ्चनार गुग्गुलु, काञ्चनारादि क्वाथ, काञ्चन गुटिका।

कचनारका प्रसिद्ध योग काञ्चनार गुग्गुलु है:-

काञ्चनार त्वचो ग्राह्यं पलानां शतकं बुधैः।
षट्पलं त्रिफलायास्तु त्रिकटोः स्यात्पलत्रयम्॥
पलैकं वरुणं कुर्यादेलात्वक्पत्रकं तथा।
एकैकं कर्षमात्रं स्यात् सर्वाण्येकत्र चूर्णयेत्॥
यावच्चूर्णमिदं सर्वंतावन्मात्रस्तु गुग्गुलुः।
संकुट्य सर्वमेकत्र शाणमात्रां वटीं चरेत्॥
प्रदेयश्चानुपानार्थं क्वाथ एषां प्रकल्पितः।
वरुणः काञ्चनारश्च श्रमणी खदिरस्तथा॥
गण्डमालां जयत्युग्रामपचीमर्बुदानि च।
ग्रन्थीन् व्रणांश्च गुल्मांश्च कुष्ठानि च भगन्दरम्॥

कचनारकी छाल ४० तोला, हरड़ेका दल ८तोला, बहेड़ा दल ८ तोला, आंवला ८ तोला, सौंठ ४ तोला, कालीमिर्च ४ तोला, छोटी पीपल ४ तोला, बरुनाकी छाल ४ तोला, छोटी इलायची १ तोला, दालचीनी १ तोला और तेजपात १ तोला लेकर सबका कपड़-छान चूर्णकर सबके बराबर साफ किया हुआ गूगल लें उसको पत्थरके खरलमें या लोहेके इमामदस्तेमें कूटे, जब गूगल नरम हो जावे तब उसमें थोड़ा-थोड़ा करके सब चूर्ण मिलादें और कूटकर गोली जैसा बने तब १॥-१॥ माशेकी गोलियां बनाकर शीशीमें भर लेवें।

अनुपान—प्रातः सायं २ गोली देकर ऊपरसे कचनारकी छाल, वरुनाकी छाल, गोरखमुण्डी और खैरकी छाल या लकड़ीका बुरादा इनका क्वाथ बनाकर देवें। यदि विशेष लाभ न हो तो १/६ सुवर्ण भस्म और ५ रत्ती प्रवाल पञ्चामृत मिलाकर देवें।

गूगल, गंधक, रसौंत तीनों समभाग ले। जलमें पीसकर उसका गण्डमालापर लेप करें।

काञ्चनार क्वाथः—

पिष्ट्वा ज्येष्ठाम्बुना पेयाः काञ्चनारत्वचः शुभाः।
विश्वभेषज संयुक्ता गण्डमाला हराः पराः॥

गण्डमालापर काञ्चनारके क्वाथके प्रयोगका भी उल्लेख मिलता है।

निघण्टुमें मिलाने योग्य कुछ एक वनस्पतिएँ

अनुवादक—वैद्य उदयलाल महात्मा देवगढ़ (राज.)

(सं. ३४८) जलमहुआ

नाम—सं०-जलमधुक; बं०-जलमहुआ; ते०-इप्पि; ता०-काठ इलुपि; ले०-B. longifolia Linn.

उत्पत्ति स्थान—कोंकन, मालाबार, दक्षिण पश्चिमी भारत वर्ष, पूर्वी और पश्चिमी घाट, लङ्का बोटे निक गार्डन, शिवपुर।

वर्णन—४० से ५० फीट ऊँचा वृक्ष। पत्र ४ से ५ इंच लम्बा एवं १$\frac{1}{2}$ इंच चौड़ा, पत्रकी शिराएँ १२; पत्र दण्ड १ से १$\frac{1}{2}$ इंची लम्बा। प्रत्येक पुष्प दंडमें एक फूल होता है; फूल श्वेत वर्ण, कुछ वक्र और मोटा। बहिर्व्वास $\frac{1}{3}$ से $\frac{1}{2}$ इंची, डिम्बाकृति। इसके ५ दल होते हैं, १ से २ इंची, सख्त लोमयुक्त; पुं केसर लोम युक्त। फल-डिम्बाकृति, बड़े पेमलीबेरके समान, पक्व फल पीतवर्ण, इसमें गुठली होती है। फल-खाये जाते हैं, फल-स्वादमें मीठे होते हैं। फलमें १ अथवा दो बीज होते हैं, कभी ३-४ भी होते हैं। इसके फल महुआ फलसे कुछ भिन्न तथा अधिक परिमाणमें होते हैं। चिकनी काली मिट्टीमें यह खूब लगता है। इसी कारण इसका संस्कृत नाम जल मधुक है।

फूलने फलनेका समय—नवम्बरसे जनवरी तक फूल और दो मास बाद फल पकते हैं।

औषधोपयोग—जलमहुआ धारक व गुमड़ोंके लिए हितकारी है। महुआके समान इसके फूलोंसे मद्य प्रस्तुत होता है एवं बीजोंसे तैल प्राप्त किया जाता है। महुआके बीजोंको पीडन कर तैल निकाला जाता है किन्तु इस महुआके फूलोंसे पाताल, यंत्र द्वारा तैल निकाला जाता है। यह तैल चर्म रोगोंमें हितकर है। फल-मृदु विरेचक; इसका गोंद वातरोगमें हितकर औषधिके रूपमें व्यवहार होता है। इसकी छालका क्वाथ व्रण धोनेमें लाभकारी है। इससे तैल और मद्य दोनों ही प्राप्त होते हैं।

(सं. ३६७) दूधी

जाति—Ichnocarpus R. Br.

नाम—सं०-श्वेत सारिवा; बं०-श्यामलता; हिं०-दूधी; ते०-नलटीगा; ले०-I. frutescens R. Br.

उत्पत्ति स्थान—पश्चिम हिमालयके शिर मोरसे नेपाल तक १००० से २००० फीट ऊपर देखी जाती है। दिल्लीसे बंगाल तकके भूभागमें, आसाम, श्रीहाट, बर्म्मा, राजस्थानके जंगलोंमें बहुत परिमाणमें उत्पन्न होती है।

उपयोगी अंश—मूल, पत्र। क्वाथ ५ से १० तोला, मूल त्वक् १२ से ४८ रत्ती तक।

वर्णन—बहुत दूर तक विस्तृतलता, कभी २ वृक्षों पर लिपट कर ऊपर उठती है। प्रत्येक गांठसे मूल निकलता है। पत्र सब समान नहीं होते $\frac{3}{4}$ से १$\frac{1}{2}$ इंची लम्बा, दण्ड $\frac{1}{4}$ इंची। पुष्पदण्ड १ से ३ इंची लम्बा, कोमल लोमयुक्त। शाखा प्रशाखाएँ छोटी, अग्रभाग में ३ फूल एक साथ होते हैं। पुष्पत्वक् का व्यास $\frac{1}{4}$ इंची, फूल-श्वेत वर्ण कुछ बैंगनी। स्त्रीकेसर बहुत छोटा। फलीका आच्छादन ३ से ६ इंची लम्बा, $\frac{1}{6}$ इंच चौड़ा बहुत अवनत; बीज $\frac{1}{2}$ इंची। लताके गाय, भैंसको बांधनेसे छूटकर नहीं जा सकती। वर्षाकाल में फूल और फल होते हैं।

औषधोपयोग—इसका मूल बल कारक और सारसा पारेलाके तुल्य। इसका काण्ड और पत्र ज्वर नाशक। इसके मूलके क्वाथसे बच्चोंको स्नान कराने से फोडे मिटते हैं। इसके क्वाथ द्वारा सिद्ध घृत पान करानेसे मूषिक विषका नाश होता है।

(सं. ३७१) धरोउलि

जाति—Wrightia R. Br.

नाम—सं०-कृष्ण कुटज, बं०-दूधकरवी; हिं०-धरो-

उलि; गा०-खरणी, मीठाइन्द्रजौ; नेपाल-करिङ्गि; ते०-कइलामुकरी; आसाम-कुरि; ले०-W. Tomentosum Roem and Schult.

उपयोगी अंश—मूल और पत्र।

वर्णन—छोटा वृक्ष, काष्ठ श्वेत वर्ण और सख्त। फल-१ इंची परिमाण, पुष्पदण्डके अनेक फूल होते हैं। फूलका अन्त: त्वक् पीतवर्ण और नींबू रंग विशिष्ट। फूलकी गन्ध अप्रीतिकर। फूल पहिले श्वेत बादमें बैंगनी रंगमें परिवर्तित होता है। फली ४ से १२ इंची लम्बी ½ से ¾ इंची चौड़ी, सरल और चपटी, फलीमें अनेक बीज होते हैं। बीजके साथ श्वेत वर्ण रेशमके समान लोम होते हैं। नवम्बर मासमें फूल और बादमें फल होते हैं। Dr. Brandis कहते हैं फली फटनेके बाद इसका वर्ण बदल जाता है।

औषधोपयोग—यह वृक्ष भी सर्प विष निवारक है। इसकी छालसे एक प्रकारकी औषधि बनती है वह स्त्रियोंकी आर्तव व्याधि और पुरुषोंके जननेन्द्रिय के रोगोंमें विशेष फलप्रद है। रक्तस्रावके स्थानपर इसका दूध लगानेसे रक्त स्रावको रोके। इसके बीज शुक्र क्षयसे होने वाली दुर्बलताको मिटावें। पत्र दन्त निवारक और उदरामय नाशक है।

(सं. ४०५) पिटोहारी—

जाति—Operculina Manso.

नाम—सं० त्रिवृत, बं०-तहुरी,दूध कलमी, हि०-पिटोहारी,ते०-तेल्लाते गादा, Eng. Turpeth root. ले०-Turpethum Manso.

उत्पत्ति स्थान—समग्र भारत वर्ष, ३००० फीट की ऊँचाईपर देखी जाती है। बंगालमें सर्वत्र जंगल और नदियोंके किनारे उत्पन्न होती है। बोटोनिक गार्डनमें और गङ्गाजीके किनारे बहुत परिमाण में है।

उपयोगी अंश—फूल, मूल और त्वक।

मात्रा—मूलकी छालका चूर्ण ६ रत्तीसे २४ रत्ती तक।

वर्णन—वृक्षारोही नरम लोमयुक्त कोमल लता। काण्ड मोटा, २-३ शिराओंसे युक्त, चिपटा, कभी गोलाकार भी। लताको तोड़नेसे दूधके समान गोंद निकलता है। पत्र २ से ५ इञ्ची, डिम्बाकृति, मूल की ओर हृत्पिण्डाकृति, बहुत कर नाड़ी शाकके पत्तोंके समान। पत्र कुछ संकडे कुछ अधिक चौड़े होते हैं। इसका फूल श्वेतवर्ण, देखनेमें कलमी शाकके फूलके समान अथवा खानेकी तमाखु की कलीके समान। पुष्प दण्ड १ से४ इंची। बहिर्व्वास ५ भागोंमें विभक्त, पुंकेसर ५, गर्भ केसर मध्यमें होती है। पुष्प दल ½ इंची, पुष्पनल लम्बा। फल-१ इंची, गोलाकार किंवा डिम्बाकृति, प्रत्येक फलमें ४ बीज होते हैं। बीज मसृण कृष्ण वर्ण संस्कृत लेखक गण दो प्रकार की तहुरीर (निशोथ) का उल्लेख किया है। भाव मिश्रने कृष्ण और श्वेत यह दो प्रकारकी राजवल्लभने श्वेत, कृष्ण और रक्त इस प्रकार तीन होनेका उल्लेख किया है। नरहरिजीने कृष्ण और रक्त त्रिवृतका उल्लेख किया है। मूल उखाड़ कर टुकड़े करनेसे दूधके समान रस निकलता है। लता पुरानी होनेपर लताकी छाल मोटी होती है। मार्च माससे दिसम्बर मासतक फूल और फलका समय है।

औषधोपयोग—लालवर्ण निशोथ ही विशेष उपकारी, इसके अभावमें श्वेत काममें ली जाती है। उर्व्वरा जमीनसे लता मूल संग्रह करना चाहिए। मूल का काष्ठ भाग छोड़कर छाल लेना उचित है।

अर्श रोगीको त्रिफलाके क्वाथके साथ इसका मूल सेवन करानेसे अर्श शमन हो जाता है और इसके पत्ते और तिल तैल समान गोघृतमें तलकर दधिके साथ खानेसे अर्श मिटता है। वातज शोथ ग्रस्त रोगीके त्रिवृत्त या एरंड तैल १ मास सेवन करानेसे शोथ मिटता है। (सुश्रुत)।

मधुके साथ मूल त्वक् चूर्ण सेवन करनेसे प्रबल ज्वर कम हो जाता है।

कृष्ण त्रिवृत अति शक्ति सम्पन्न है। वह वमन और दुर्बलता लाती है (दत्त)। हकीमोंके मतसे काली

निशोथ विष तुल्य है। पश्चिम भारतके लोग अर्ध शिरःशूलमें इसके पत्तोंका लेप करते हैं (डिमोक)। निशोथ मूल विरेचक है इसको १०-१५ ग्रेन परिमाण में लेनेसे जुलाब का काम करती है। मूलत्वक् चूर्ण व्यवहार करना ही उत्तम है। इसका ताजा मूल दूध के साथ पीसकर पीनेसे जुलाबका काम करती है।

T. N. मुखर्जी का कहना है कि इसके मूल के साथ एक Bonanox (The moon flower) लता की जड़ मिलाकर बाजारमें विक्री की जाती है। दोनों लताएँ देखनेमें एक समान।

(१) Bona nox लताका काण्ड गोलाकार और तिव्रीका काण्ड शिरायुक्त, प्रथमोक्त लताके फूल और बीज Turpethum की अपेक्षा बड़े होते हैं।

(सं० ४०६) तरुलता

जाति—Quamoclit Tourn ex Moench

नाम—बं० हि०-तरुलता, कामलता;बम्बई-सीता की केश; ले०-Q. pinnata Boj.

उत्पत्ति स्थान—समस्त बंगालके बगीचोंमें और अकृषित स्थानोंमें दिखाई देती है। यह अमेरिका देश की बेल है।

उपयोगी अंश—पत्र।

वर्णन—नोकीले सूक्ष्म लोमोंसे युक्त बेल है। पत्र पक्षाकार, ३ से ५ इंची लम्बा, २ इंची चौड़े। पुष्प दण्डमें थोड़े फूल होते हैं। फूल लाल वर्ण, पुष्पनल तीखा, १ इंची लम्बा, मुखका व्यास ⅓ इंची, गर्भाशय ४ भागोंमें विभक्त, ⅓ इंची गोलाकार एवं मसृण। बीज कृष्ण वर्ण। वर्षान्तमें फूल एवं फल होते हैं।

औषधोपयोग—पत्तोंका चूर्ण अर्श में व्यवहृत होता है। १ तोला परिमाण पत्तोंका रस सम परिमाण में गोघृतके साथ दिनमें २ वक्त सेवन करनेसे अर्श रोग मिटता है। पत्तों को पीसकर अदीठ व्रणपर लगानेसे वह मिटता है।

(सं० ४०७) दूध कलमी

जाति—Calonyction Boj.

नाम—बं०-दूध कलमी, जल कलमी; ता०-नाग मुगातेइ, ते०-नागर मुकुर्त काइ, Eng. Moon flower. ले०-C. Bonanox Boj.

उत्पत्ति स्थान—बिहार, पश्चिमी बंगालकी पड़त जमीन और जङ्गलोंके किनारे बहुत देखी जाती है।

उपयोगी अंश—बीज।

वर्णन—यह कलमी जातीय लता है। पत्र नाड़ी शाकके पत्तोंके समान, फूल श्वेत वर्ण, पुष्पनल ३ इंची लम्बा, दल सफेद और हरी आभाको लिए हुए। बीज कोष १ इंची, गोलाकार और डिम्बाकृति। बीज ½ इंची लम्बा, मसृण, पीत वर्ण एवं सूक्ष्म लोमयुक्त।

फूल—रात्रिमें प्रस्फुटित होते हैं एवं सूर्योदय के एक घण्टा बाद ही मुदित होकर सूख जाते हैं, इसीलिए इसको Moon flower कहते हैं। डॉ० रोक्षबर्गी साहब इसको दो प्रकारकी वर्णन करते हैं। एकको Lettsonia bona-nox Roxb दूसरीको I grandiflora Roxb, Flora Indica कहते हैं। अंतीमके पत्तोंमें कोइ विभाग नहीं है I grandiflora का बंगला नाम पृथक् कहना बड़ा असम्भव है। रोक्ष-बर्गी साहबने इसको दूध कलमी कहकर वर्णन किया है एवं Lett sonia bona-nox को कलमी लता कहा है। वर्षासे शीतकाल तक फूल और फलका समय है।

औषधोपयोग—इसके बीजकोष, बीज, फूल, पत्र, मूल सर्प विष निवारक होना लिखा है (ऐंसली) ब्राजीलमें इसके बीज सर्प विष निवारण करनेके लिए बहुत परिमाणमें प्रयोग करते हैं।

(सं० ४३९) बिचू

नै० वर्ग—Padalineae.

जाति—Martymia Linn.

नाम—बं०-बाघनखा; हि०-बिचू; संथाली· बाघ-नका; ले० M. diandra-Glox.

उत्पत्ति स्थान-पश्चिमी बंगालकी पड़त जमीनमें

वर्णन—यह अमेरिका देशीय उद्भिद् है। इस समय गंगाजीके किनारे और ग्राम्य जंगलमें देखा जाता है। पत्र बृहत् काण्डके दोनों ओर हृदयाकार होते हैं। फूल गुलाबके फूलोंके समान रंगके, देखनेमें तिलपुष्पोंके समान। फल काष्ठमय दण्डयुक्त दोनों तरफ नखके समान वक्र कांटे होते हैं। वर्षाके समय फूल और बादमें फल होते हैं।

औषधोपयोग—इसके फूलोंको घिसकर दंश स्थान पर लगानेसे बिच्छूके विषको दूर करता है।

(सं० ४४२) काला

नै० वर्ग—Acanthaceae.

जाति—Cardanthera Buch Ham.

नाम—बं०-काला, लै०-C. uliginosa Buch. Ham.

उत्पत्ति स्थान—समग्र बंगालके धान्यके खेतोंमें।

उपयोगी अंश—पत्र।

वर्णन—वर्ष जीवी नरम गुल्म, १ फीट लम्बा, काण्डके दोनों ओर युग्मपत्र होते हैं। पत्र डिम्बाकृति एवं हृत्पिण्डाकृति और लोम युक्त। पत्राकार ½ से १ इंची लम्बा, अग्रभाग क्रमशः नोकीला। फूल एक से तीन एक साथ होते हैं। पुष्पदण्डके पत्र डिम्बाकृति दांतयुक्त, दल लोमयुक्त, एक दूसरेकी अपेक्षा लम्बा। पुष्पसत्वक् ⅓ से ½ इंची। बीजाधार ⅙ से ⅓ इंची, कोमल लोमयुक्त, बीज अनेक होते हैं। वर्षाके बाद गुल्म देखे जाते हैं। शीतकालमें फूल और फल होते हैं।

औषधोपयोग—पत्तोंका रस नमकयुक्त खानेसे रक्तशुद्ध होता है।

(सं० ४५१) उदि सम्भालु

जाति—Justicia Linn.

नाम—सं०-नीलनिर्गुण्डी, बं०-जगत मदन, मामलक; हिं०- उदि-सम्भालु, ते०- नाल्ला-वाभिलि, ता० कारुनच-चि, लै०- G. gendarusa Linn. F.

उत्पत्ति स्थान—समस्त बंगालमें होता है, विशेषतः हुगली, हावड़ा, २४ परगना वर्द्धमान प्रभृति जिलोंमें जंगलों और रास्तोंके किनारे देखा जाता है। किन किन स्थानोंमें खेती भी होती है। मार्तावान और टेनासरिमेरके जंगलमें प्रचुर होता है।

उपयोगी अंश—पत्र एवं तैल।

वर्णन—वर्ष जीवी छोटा गुल्म जातीय उद्भिद्। काण्ड २ से ४ फीट, काण्डके चारों ओर लम्बे और चीरे हुए दाग होते हैं। गुल्मका अग्रभाग कुछ मोटा सूक्ष्म और बैंगनी रंगके लोमोंसे युक्त। पत्र ४ से ५ इंची लम्बा, वृन्त देश और अग्रभाग क्रमशः नौकीले होते हैं। पत्रोंका किनारा कर्तित और उज्वल एवं सूक्ष्म लोमोंसे युक्त पत्तोंकी शिराओंके नीचे बेंगनी रंगके दाग होते हैं। पत्रवृन्त ¼ इंची। फूल छोटे, श्वेत अथवा लाल वर्ण, इसपर बहुत छोटे लाल दाग होते हैं। पुष्पदल ½ इंची लम्बा, तलवारके समान आकृतिके, सूक्ष्म लोम युक्त। पुष्पनल ½ इंची। बीज कोष ½ इंची, सूक्ष्म लोम युक्त, कोषमें ४ बीज होते हैं। Trimen कहते हैं इसके फल प्रायः झरके नहीं देखे जाते हैं।

पत्तोंमें मनोहर गन्ध आती है। और भी दो प्रकारकी निर्गुण्डी होती है-उनके नाम Vitex Negundo एवं V. trifolia; वो Verbe naceae order भुक्त है। अप्रैलमें इसके फूल और वर्षाके शुरूमें इसके फल होते हैं।

औषधोपयोग—पत्तोंका रस सरसोंके तैलके साथ खानेसे दमा रोगीको वमन हो जाती है एव इसके पत्तोंके क्वथित जलसे स्नान करनेसे वात मिटती है।

निर्गुण्डी वमन कारक और बच्चोंकी पेट वेदना में बहुत ही लाभप्रद है। इसके पत्तोंका क्वाथ पुरातन वातमें हितकारी है। इसमें रसायन शक्ति भी विद्यमान है। पत्रोंसे साधित तैलसे व्रण और फोड़े, फुन्सी मिटते हैं एवं स्वरस सेवन करनेसे अर्ध शिरःशूल और मुखका पक्षाघात मिटता है।

पत्तोंका ताजा रस कानमें डालनेसे कानका शूल एवं माथाके जिस ओर अर्धकपाली शिरःशूल हुआ है उसी ओरके नाकसे नाश लेनेसे मिटता है।

शरीर चेतना की शक्ति एक वार्ता

[लेखिका—श्रीमाताजी श्री अरविन्द आश्रम, पांडिचेरी]

चेतनाकी एक ऐसी स्थिति है जिसमें तुम यह देखते हो कि वस्तुओं, परिस्थितियों, विभिन्न व्यापारों तथा जीवनकी सभी कार्यावलियोंका तुम्हारे ऊपर पड़ने वाला प्रभाव प्रायः एकांतिक रूपसे इस बातपर निर्भर करता है कि तुम्हारा मनोभाव उसके प्रति क्या है। उस स्थिति में तुम सचेतन हो जाते हो, इस हद्तक तुम सचेतन हो जाते हो कि तुम अनुभव करने लगते हो कि वस्तुएं अपने आपमें न तो अच्छी है न बुरी, तुम्हारे संबंधसे ही बस वे वैसी हो जाती हैं, हम जिस ढंगसे उनकी ओर ताकते हैं। बस उसीपर संपूर्ण रूपसे उनका प्रभाव निर्भर करता है। अगर, उदाहरणार्थ, हम किसी परिस्थितिको भगवानका एक दान, भगवान की एक कृपा, समष्टिगत सामंजस्यका एक परिणाम मानलें तो वह हमें अधिक सचेतन, अधिक सच्चा और अधिक शक्तिशाली बनने में सहायता करेगी। इसके विपरीत, ठीक वैसी ही परिस्थिति, यदि हम उसे अन्य रूपमें लें, विधानका एक प्रहार, हमें हानि पहुँचाने वाली एक बुरी शक्ति मान बैठें तो, हमारी चेतनाके ऊपर विषाद बनकर बैठ जाती है, यह हमारी शक्तिका हरण कर लेती है, अन्धकार ले आती है, असामंजस्य उत्पन्न करती है। परन्तु दोनों ही प्रसंगोंमें परिस्थिति एकदम एक–जैसी ही होती है। मैं चाहती हूँ कि तुम्हें ऐसा अनुभव हो और तुम ऐसा प्रयोग करो। क्योंकि तुम्हारा आदर्श है आत्म प्रभुत्व प्राप्त करना। परन्तु केवल उतना ही नहीं। तुम्हें केवल अपने आत्माका प्रभु ही नहीं होना चाहिये, बल्कि अपने जीवनकी परिस्थितियोंका भी प्रभु होना चाहिए, कमसे कम उन परिस्थितियोंका जो अभी-अभी तुम्हें घेरे हुई हैं और तुमसे सम्बन्धित है। तुम्हें फिर यह भी ध्यानमें रखना चाहिये कि यह एक ऐसा अनुभव है जो केवल मनके अन्दर ही आबद्ध नहीं है, यह आवश्यक नहीं कि यह केवल तुम्हारे मस्तिष्कमें ही हो, बल्कि यह तुम्हारे शरीरमें भी हो सकता है और इसे अवश्य ही होते रहना चाहिये। निःसंदेह, यह एक ऐसा अनुभव है जिसके लिये महान् प्रयास, अत्यधिक एकाग्रता और आत्मप्रभुत्वकी आवश्यकता होती है, तुम्हें चेतनाको जबर्दस्ती शरीरके अन्दर, घने जड़तत्वके अन्दर खींच लाना होगा। वास्तवमें शरीर का भाव ही अन्तमें प्रत्येक बातका निर्णय करेगा, बाहरी जगत्के संस्पर्शों और आघातोंको शरीर जिस रूपमें ग्रहण करेगा उसीके अनुसार उनका स्वभाव भी बदल जायेगा। और यदि तुम इस दिशामें पूर्णता प्राप्त कर लो तो तुम दुर्घटनाओंके भी प्रभू बन सकते हो। यह चीज संभव है, और केवल संभव ही नहीं है; वरन् इसका होना सुनिश्चित है, क्योंकि मनकी प्रगति का यह एक आगेका पग है। सबसे पहले तुम्हें अपने मनमें उस शक्तिको इस हद्तक आयत्त करना होगा कि वह परिस्थितियोंपर क्रियाकर सके और तुम्हारे ऊपर होनेवाले उनके प्रभावको बदल सके। फिर वह शक्ति जड़-तत्वमें, स्थूल भौतिक पदार्थमें, तुम्हारे शरीरके कोषोंमें अवतरित हो सकती है और तुम्हारे बाहर और तुम्हारे चारों ओरकी वस्तुओंपर अधिकार जमानेकी इस क्षमतासे शरीरको भी अलंकृत कर सकती है।

संसारमें कुछ भी असंभव नहीं है। हम लोग स्वयं ही सीमा बांध देते हैं, बराबर ही हम कहते हैं, यह संभव है, वह असंभव है, हम इसे कर सकते हैं, हम उसे नहीं कर सकते। कभी-कभी हम स्वीकार करते हैं कि अमुक चीज संभव है, पर फिर पूछते हैं कि कौन इसे करेगा। अतएव यह असंभव है आदि-आदि। दासोंकी भांति, कैदियोंकी तरह हम अपने आपको अपनी सीमाओंसे बांध देते हैं। तुम इसे साधारण समझदारी कहते हो, पर यह एक मूर्खतापूर्ण, संकीर्ण, अज्ञान युक्त समझदारी है, यह वास्तवमें जीवनके नियमोंको नहीं जानती। जीवनके नियमोंको हम जैसा समझते हैं, उनके विषयमें हमारा मन या बुद्धि जैसी कल्पना करती है; ठीक वैसे ही वे नहीं हैं, वे बिलकुल दूसरे ही ढंगके हैं।

स्वास्थ्य संघर्ष—

गयाके मसहूर जीव

लेखक—द्वारका मिश्र वैद्य "ओझविय", संचालक-वि० ग्रा० वैद्य सेवा संघ ओडो (गया)

बिहार प्रदेशमें कतिपय स्थानोंकी कहावत है कि जैसे तुर्क तेली तार, ये सब सूबे बिहार एक्का वकील गधा ये सब पटनेमें सधा। गीदड़ गाड़ी गर्दा औ लंगूर, ये सब भागलपूरके मसहूर, छाजा बाजा केश, ये सब बंगाला देश, चीवड़ा स्त्री दही, ये सब तिरहुतमें सही, अब सुनिये मच्छड़ मोव्वकिल मालजादी, ये सब गयेके आवादी अर्थात् मच्छर गयाके मसहूर हैं। यह प्राचीन दन्त कथा है। परन्तु अब गया ही नहीं वर्नो सर्वत्र ग्रामोंकी अपेक्षा शहरोंमें मच्छड़ोंकी सेना मानव मात्रके स्वास्थ्यसे संघर्षके लिए घेर लिया है। इनके रहनेके स्थान नाले, पनाले, अन्धेरा घर जहां सफाई नहीं गढे जहां सड़े गले पत्ते एवं सड़े जल प्रस्तुत हो, छत्तों के दीवारे, पखाने आदि गन्दे स्थानोंमें दिन भर छिपे रहते हैं ठीक सूर्यास्त होते ही मानव स्वास्थ संघर्षके लिये जहां भी मनुष्य गंध हो निशंक दौड़कर प्रथम पद चूमते हैं। बाद पृष्टके मांस खाने लगते हैं। तब छिद्र जानकर सहसा कानोंमें घुसकर सुकर कलख करने लगते हैं। अर्थात सभी दुष्ट के चरित्र चित्रण मच्छर महोदय किया करते हैं। इस ग्रीष्म ऋतुमें प्राय: वैवाहिक सहभोज डालडा (वनस्पति) से प्रस्तुत पदार्थ द्वारा होता है। जो अजीर्ण जन्य रोग फैलानेमें सहायक है। पुनः रात्रि छोटी होती है। अतः उस रातमें मच्छर महोदय भी मानव मात्रको जगाकर अजीर्ण रोग फैलाकर उनके स्वास्थ्यका नाश करते हैं। पुनः अपने डंक द्वारा मनुष्यके रक्त में अपना विष फैलाकर मानवका पित्त दुःखितकर घोर शीत ज्वर मलेरिया फैलाकर स्वास्थ्यसे संघर्ष करता है। सरकारी स्वास्थ रक्षा विभागने इनसे लोहा ले लिया है परन्तु इनके वंशज इतनी प्रचुर संख्यामें बढते हैं कि ये लोग भी इनसे हार मानते हैं। पहले तो गयाके ही मसहूर थे अब तो जहां भी विकास खण्ड कायम हुआ है वहां सर्वत्र अन्य विकास योजना के साथमें मसहूर जीवका भी विकास होने लगा है विकासके युगमें प्राणी मात्राका विकास होना चाहिये दिनमें मक्खी रानी विष्टापर बैठकर भोजनपर बैठ जाती है घरमें दिनभर स्वास्थ्य विनाशके लिये योजना बनाती है, रातमें मच्छर महोदय। इनकी सेनासे मानवका स्वास्थ्य हारता जारहा है। विजयी मच्छर देवसे भले ही नव दम्पति खुस हो परन्तु मानव मात्र त्राहि त्राहिमें लगा है।

अब इन मसहूर जन्तुसे बचना ही अपनी स्वास्थ्य संरक्षा करना है। इनसे बचनेके लिये मैं कुछ सुझाव पेस करता हूँ आशा है उपयोगमें लाकर स्वास्थ्य रक्षा के भागी बनेंगे।

मसहूर जन्तु मच्छरोंसे बचे—

जहां भी आप सोते हो रोज झाड़से उस स्थानको साफकर गोबर मिट्टीसे लिपदें। सोनेके स्थानमें गन्धगी गोबर सड़ा गला पानी गर्दा पत्ते बढना न हो साफ मैदान जहां हवा आती हो।

सोनेके समय सर्वत्र गन्धक, लोबान, हल्दीका धूनी सर्वत्र जला दें। वनतुलसी सर्वत्र लटकादें।

मच्छरदानी लगाकर सोइये।

पुनः सोनेके स्थानोंमें एक टब या थालीमें पानी वो १० बून्द तेल डालकर कडुआतैल शरीरमें लगाके सोइये।

गन्धाबिरोजा २ भाग, तिल्लीकाजल १ भाग, मधु २ भागका मिश्रण आगपर धरकर बशसे एक कागजपर लेप करे बाद यही कागज सोनेके स्थानोंमें लटकावें यह मच्छर मक्खी पकड़ कागज है।

डी० डी० टी० नामक औषधिका छिड़काव भी इनसे बचाव है।

तीव्र गन्धसे मच्छर महाशय दूर भागते हैं। सफाई और हवासे इनकी चाल नहीं चलती ध्यान रखें।

च्यवनप्राशावलेह (विशेष शिवाबूटी युक्त)

यह अवलेह उत्तम प्रकारके परिपक्वताजे आंवलोंसे बना है। इसके साथ प्रति तोला २-२ रत्ती शिवाबूटीका अर्क सम्मिलित है। मिश्री मिलाकर विशेष सम्हालपूर्वक बनाया गया है। यह अवलेह कुछ उष्णवीर्य है। धातुओंको बढाता है और सबल बनाता है।

शास्त्रीय च्यवनप्राशावलेहके गुणधर्मका लाभ इससे पूरा पूरा मिलता है। इसके अतिरिक्त क्षय, उरःक्षत, संग्रहणी, अग्निमांद्य, निद्रानाश, हृदय रोग, मस्तिष्क की थकावट इन सबपर विशेषतर लाभ पहुँचाता है।

मात्रा—छोटी आध चम्मच, दिनमें २ बार दूधके साथ।

मूल्य—(बोतलमें) १० तोले २-००, २० तोले ३-७५।

हेमाभ्र रसभस्म

प्रमुख घटक—सुवर्ण-अभ्रक जीर्ण अष्ट संस्कारित पारद भस्म है।

प्रथम पारदके आठ संस्कार करके फिर शुद्ध गंधक-अभ्रकसत्व, सुवर्णमाक्षिक तथा सुवर्ण जारण करके दिव्य रस राजकी सिद्ध अनुभूत विधि पूर्वक भस्म बनाई गई है। इतना परिश्रम व बहुअर्थ साध्य क्रिया अन्यत्र नहीं की जाती। वह हमने हमारे यहां बना कर तैयार की है। उक्त प्रकारकी क्रियासे आप लोगोंको भी विश्वास होगया होगा कि यह रस कितना दिव्य गुणों वाला बन गया है।

जीर्णातिजीर्ण, दुःसाध्य व्याधियों, अकाल वलि पलित युक्त जरावस्था, वीर्यनाश, क्षय, अंत्र विकृति, मंदाग्नि, बल-उत्साहकी कमी, निस्तेजवपुः, रक्तादि धातुओंकी अल्पता आदि विकारोंको बलात्, सत्वर दूर करनेमें उत्तम कार्यकर, आश्चर्योत्पादक रसायन है। मात्रा—¼ रत्तीसे ½ रत्ती।

मूल्य—१॥ माशेकी शीशीका १२-७५ रु. पेकिंग पोस्टेज पृथक्।

सरल अनुभूत प्रयोग

(प्रयोगदाता-श्री वैद्यराज रामभरोस बम्बई ४१)

(१) संग्रहणीमें उदरशुद्धिके लिये—

हरड़ १-१ तोले वाली ४०, मिश्री आधसेर, सौंफ आधसेर। पाउडर करें।

मात्रा—आध माशेसे १ माशे तक। दिनमें २ बार शहद्के साथ।

(२) अश्मरी, मूत्राघात—

कलमीसोरा, सोनागेरू समभाग, छोटी इलायचीके दाने, शीतलमिर्च, चतुर्थांश सबको मिलाकर प्रातःकाल एक या २ बार दूध जलकी लस्सीसे लेवें।

(३) केन्सर—

शुभ्राभस्म	१० तोले	संगेयशब	२० तोले
टंकण भस्म	५ तोले	प्रवालपिष्टी	५ तोले
रक्तामलकी-		गिलोयसत्व	५ तोले
रसायन	२० तोले	गोदन्ती भस्म-	
सोना गेरु	२० तोले	ज्वर हो तो	१० तोले

(५) श्वेत, रक्त, पित्त प्रदर—

नागकेशर	२० तोले	संगेयशब पाउडर	१० तोले
पीपलकी लाख	२० तोले	गोखरू	१० तोले
आंवलकी रसायन	२० तोले	समान मिश्री	

पाउडर दूधके साथ या जलके साथ दिनमें २ बार।

(५) रक्त प्रदर—

नागकेशर	समभाग
पीपल लाख	,,
लाजवन्ती	,,
रक्तामलकी रसायन	समभाग मिश्रीके साथ

दिनमें २ बार दूध या जलके साथ।

(६) प्रदर—

प्रवाल पिष्टी अश्वगन्धादि चूर्णका अष्टमांश

अश्वगन्धादि चूर्ण

अश्वगंधा	समभाग	५-५	तोले
गोखरू	,,	,,	,,
सतावरी	,,	,,	,,

रक्तप्रदरको ३ दिनमें शांत करता है।

(७) विषमज्वर (मलेरिया)

टंकण भस्म	१॥ रत्ती	सितोपलादि	४ रत्ती
शुभ्रा भस्म	१॥ रत्ती	मृत्युञ्जय	१ रत्ती
गोदन्ती	४ रत्ती	श्रृंगभस्म	२ रत्ती

मात्रा—शक्ति अनुसार १ से २ रत्ती देवें। दिनमें २ या तीन बार।

(८) संग्रहणी ज्वरातिसार—

आनन्द भैरव	१ रत्ती	प्रवालपिष्टी	१ रत्ती
वराटिका भस्म	१ रत्ती	ज्वर हो तो गोदन्ती	४ रत्ती
सितोपलादि भस्म	१॥ रत्ती		

दिनमें ३ बार शहद्से।

(९) बालकोंके डिब्बे और अन्य रोग—

(आयु ८ दिनसे लेकर ५ वर्ष तक)

गोदन्ती	१॥ रत्ती	प्रवालपिष्टी	½ रत्ती
टंकण	१ रत्ती	पीपल	¼ रत्ती

दिनमें ३ बार ½ से १ रत्ती आयुके अनुरूप शहद के साथ।

(१०) पूयमेह (सुजाक) बूंद-बूंद मूत्र टपकना—

कलमीशोरा	१ तोला	सोनागेरू	१ तोला
गीले अरमानी	१ तोला	शीतलमिर्च	½ तोला
पीरोजा सत्व	१ तोला	इलायची छोटी	½ तोला

चंदनके क्वाथमें गोली मटरके समान सुबह २ बार या दिनमें २ बार २-२ गोली देवें।

(११) उष्णता शमनार्थ—

धनिया	समभाग
सौंफ	समभाग
मिश्री	,,
कालीमिर्च	,,

ठण्डाई बनाकर सेवन करें।

(१२) T. B पूर्वावस्था (प्रथम श्रेणीमें प्रवेश हो रहा हो तब)—

६४ प्रहरी पीपल	½ रत्ती	अमृतासत्व	१ रत्ती
त्रिभुवनकीर्ति	१ रत्ती	मुलहठी	½ रत्ती
श्रृंगभस्म	२ रत्ती	सितोपलादि	१ माशा
प्रवालपिष्टी	½ रत्ती	गोदन्ती भस्म	१।। माशा

दिनमें ३ बार प्रातः मध्याह्न और सायंकाल शहदके साथ

* खमीरे गावजवां *

ये खमीरा कुछ कुछ द्रव्य भेदसे कई प्रकारके बनाये जाते हैं। यह वात-वाहिनियों, हृदय और मस्तिष्कको बलप्रदान करता है। मूर्च्छा, उन्माद, बेचैनी और हृदयावरोध दूर करता है। हमने निम्न ३ प्रकार बनाये हैं।

१. **खमीरे गांवजवां अम्बरी**—रौप्यवर्क, अम्बर, केशर आदि इसमें मिला है। सत्वर फलदायी है।
   मूल्य—१० तोला ३-५०, २० तोला ६-७५, ४० तोला १३-००।

२. **खमीरे गांजवां केशर युक्त**—गुण धर्म उपरोक्त किन्तु कुछ कम।
   मूल्य—१० तोला १-८८, २० तोला ३-५०, ४० तोला ६-५७।

३. **खमीरे गांवजवां (सादा)**—यह अम्बर, केशर और रौप्यवर्कसे रहित है। गुण धर्म उपर्युक्त किन्तु अपेक्षा कृत कम।
   मूल्य—१० तोला १-१३, २० तोला २-००, ४० तोला ३-७५।

सरदार शहरमें पारद संस्कार योजना

रस चिकित्सामें पारदका बहुत बड़ा महत्त्व है। इसमें सात कंचुकी दोष तथा आठ नैसर्गिक दोष माने गये हैं। उनके निवारणार्थ प्रयत्न यहां रस वैद्य पं० नीलकंठजी शर्मा भीलवाड़ा निवासीके संरक्षणमें करने की योजना बनाई गई। इस समितिके अध्यक्ष सेठ जयचन्दलालजी तथा सदस्य वैद्य सोहनलालजी दाधीच तथा पांच अन्य सदस्य निर्वाचित किये गये।

उपजिला वैद्य परिषद् भीम राजसमन्दकी जनरल बैठक ता० २७-५-१९६० को स्थान द्वारकेश औषधालय कांकरोली वैद्य माधवलालजी पिपलीवाल की अध्यक्षतामें सम्पन्न हुई जिसमें राजस्थान प्रदेश सरकार से अनुरोध किया गया कि बम्बई तथा मद्रास प्रदेशमें जो पंचकर्म प्रशिक्षणका कार्य हो रहा है वहां हमारे प्रदेशसे व्यक्ति भेजे जायं तथा वैसा शिक्षण इस प्रदेश में शुरु किया जाय। और भी आयुर्वेद उत्थानके लिये साहित्य अन्वेषण होना चाहिये। तथा वन विभागमें वनस्पतिका योग्य अन्वेषण और वनौषधियोंका संग्रह किया जाय।

नवीन प्रवेश

१. श्री सनातन धर्म आयुर्वेद महाविद्यालय, बीकानेरका नवीन सत्र ७ जुलाईसे प्रारम्भ होगा।

२. यह विद्यालय राजस्थान आयुर्वेद विभागीय परीक्षा भिषग्वर तक मान्यता प्राप्त है।

३. भिषग्वर पाठ्यक्रमके सम्पूर्ण प्रैक्टिकलके साधन, यथा आरोग्यशाला, रसायनशाला, पेथोलोजिकल लेबोरेटरी, साइन्स लेबोरेटरी, द्रव्यगुण प्रदर्शनी, शल्यशालाका प्रायोगिक इत्यादिकी सुव्यवस्था है।

४. योग्य और निर्धन छात्रोंके लिये छात्रावासमें छात्रवृति रूपमें भोजन और शाक आवासकी निःशुल्क व्यवस्था की जाती है।

५. प्रवेशके लिये इच्छुक कुछ छात्रोंको अपना आवेदन पत्र २० जून तक प्रिन्सिपलके पास भेज देना चाहिए।

६. प्रवेश योग्यता प्रथमा, प्रवेशिका तथा मैट्रिक संस्कृत उत्तीर्ण है।

७. आवेदन पत्र तथा नियमावली मंगानेपर मुफ्त भेजी जाती है।

८. आवेदन पत्रके साथ प्रमाण पत्रकी प्रमाणित प्रति लिपि अवश्य भेजना चाहिए।

९. निश्चित अवधिमें समाप्त समस्त आवेदन पत्र विद्यालय द्वारा निर्मित बोर्डमें प्रस्तुत किये जायेंगे और उसने स्वीकृत छात्र ही छात्रावृतिमें लिये जायेंगे।

१०. जिनकी प्रवेश योग्यता ठीक है ऐसे छात्र अपने खर्चसे असीमित संख्यामें अध्ययनार्थ प्रविष्ट हो सकते हैं।

११. प्रवेशके इच्छुक छात्रों की अवस्था १६ वर्षसे कम नहीं होनी चाहिये।

वैद्य विद्याधर शर्मा
प्रिन्सिपल
श्री सनातन धर्म आयुर्वेद महाविद्यालय
बीकानेर

–[बच्चों के सूखारोग की एक मात्र औषधि]–

बाल शोषहर तैल

यह तैल बालशोष (सूखारोग) पर अत्यधिक लाभदायक है। प्रतिदिन रात्रिको इसकी सर्वाङ्गमें मालिश बच्चोंके सूखारोगमें विशेष हितकारी है। इस तैलके प्रयोगकालमें "बालशोषहर वटी" विशेष लाभप्रद है।

बाल शोषहर तैल मूल्य–२ औंस पेकिंगका रु० १-५० न० पै०।

बाल शोषहर गुटिका मूल्य–३ माशेका ४-००।

पोस्टेज पेकिंग पृथक् होगा।

विष्णु तैल

वातवहिनियोंके क्षोभसे शरीरके किसी अवयवके पतला हो जानेपर विशेष हितकर है। हृदय शूल, पार्श्वशूल, अर्धावभेदक रोग, अर्दितवात, पक्षाघात, वार्धक्य जनित क्षीणता आदिपर प्रयुक्त होता है।

मालिशार्थ।

मूल्य—४ औंस ३ रु० ३१ न० पै० पेकिंग पोस्टेज पृथक् होगा।

मात्र आयुर्वेदिक चिकित्सकोंके लिये—

चतुर्भुज रस (विशेष)

यह रस पारद भस्म, सुवर्ण भस्म, मुक्ता पिष्टी आदि मूल्यवान द्रव्योंको यथा विधि मिलाकर तैयार कराया जाता है। पारद भस्म भी अभ्रक ग्रास युक्त पारदको १६ गुना गन्धक जारण करके निरुत्थ बनायी हुई मिलायी जाती है। जिससे यह रस वृक्क पीड़ासह वातरोगमें भी निर्भय रूपसे दे सकते हैं।

इस रस का उपयोग वातसंस्थान की विकृति से उत्पन्न सब प्रकार के वात रोगों पर होता है। इसके अतिरिक्त वातप्रकोपज रोग, अपस्मार, ज्वर, कास, श्वास, राजयक्ष्मा, अग्निमांद्य, शारीरिक शोष, हस्तकम्प आदि व्याधियों में भी हितावह है। विद्याध्ययन करने वालों और मानसिक परिश्रम अधिक लेने वालों को सेवन कराने पर मस्तिष्क को बल प्रदान करता है।

मूल्य—१॥ माशे की शीशी का रु० १२-७५ नये पैसे।
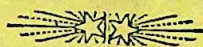
कृष्ण-गोपाल आयुर्वेद भवन के

बिक्रीकेन्द्र एजन्ट

राजस्थान—

१. मेसर्स निहाल मेडिकल स्टोर्स, गांधी बजार, भीलवाड़ा।
२. छगनलाल कनकमल भाल, सदर बाजार, केकड़ी (अजमेर)।
३. दौलतराम शिवचरण दास, कचहरी रोड़, अजमेर।
४. गजसिंह जोरावरसिंह, कालेड़ा-कृष्णगोपाल (अजमेर)।
५. मोहन शुद्ध खादी भण्डार, रामपुरा बाजार, कोटा।
६. रमा फार्मेसी, तहवीलदारों का रास्ता, जयपुर।

मध्य प्रदेश—

७. श्री रमेशचन्द्र इश्वरी प्रसाद, १९ राजवाड़ा चौक, इन्दौर।
८. श्री छब्बेलाल शंकरसिंह, इतवारा बजार, भोपाल।
९. श्री हरीश मेडीकल स्टोर्स, गंज बजार, अशोक नगर (गुना)।

महाराष्ट्र—

१०. श्री पनपालिया जनरल स्टोर्स, रामदासपेठ, आकोला।
११. श्री शान्तिलाल एन. वसंत, गोरेगांव बम्बई। (चि० एजन्ट)

महागुजराज—

१२. श्री धन्वन्तरि औषध भण्डार, मांडली टावर रोड़, जामनगर।
१३. वैद्य शास्त्री श्री विश्रामानन्दजी, मांडली विट्ठलमंदिरके पास, वड़ोदा।
१४. श्री मथुरादास दामोदरदास संपट, देरासरके पास, अमरेली।

उत्तर प्रदेश—

१५. श्री चन्द्रभान शंभुदयाल गुप्ता, बिधुना, इटावा।

प्रकाशक—ठाकुर जसवन्तसिंह मुद्रक तथा प्रकाशक द्वारा "कृष्णगोपाल मुद्रणालय कालेड़ा" में मुद्रित